ISSN : 2319-8567

करभ

वार्षिक हिन्दी पत्रिका

2017 अंक-15

भाकृअनुप
ICAR

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र

पोस्ट बैग–07, जोड़बीड़, बीकानेर–334 001
(राजस्थान), भारत

राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र
NRCC

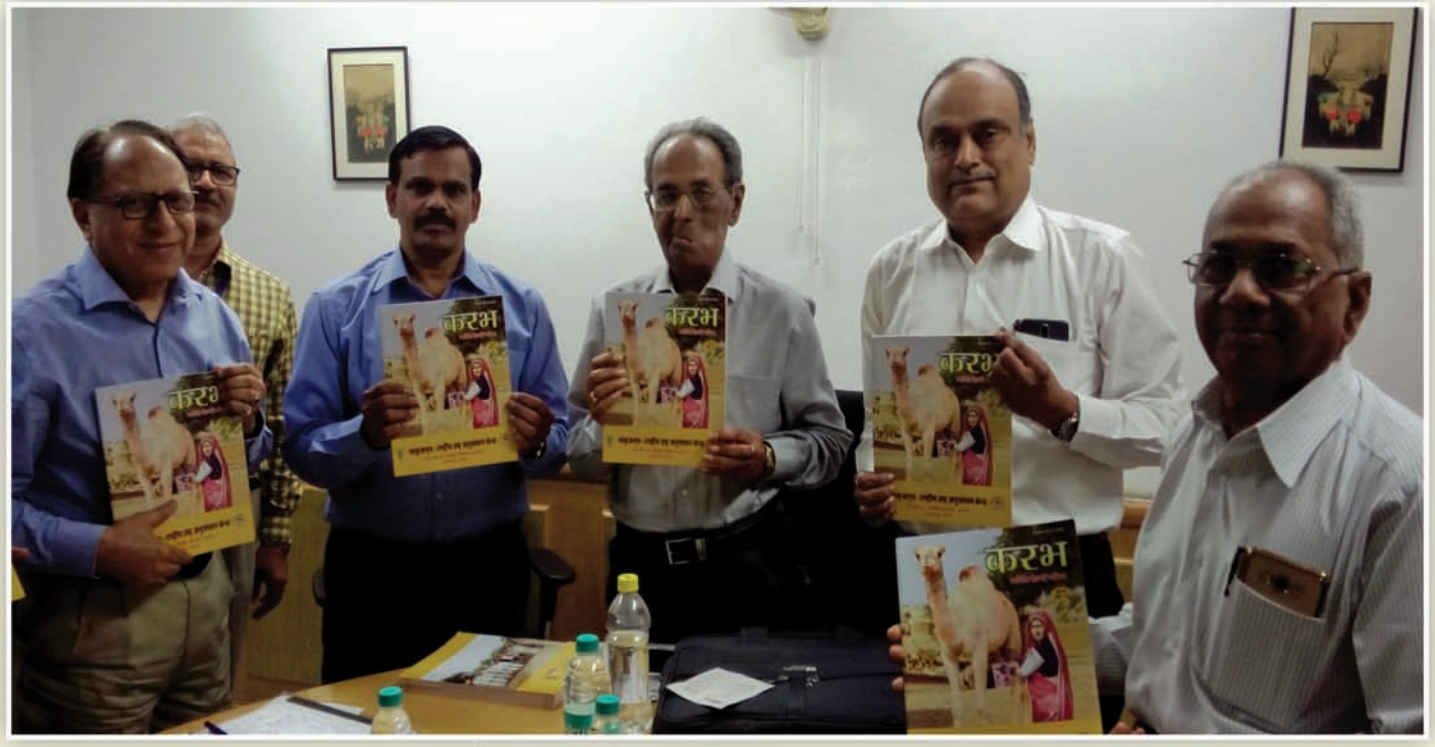
करभ
करभ
करभ
करभ

करभ

वार्षिक हिन्दी पत्रिका

2017

-: प्रकाशक व संपर्क सूत्र :-

निदेशक

भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र

पोस्ट बैग-07, जोड़बीड़, बीकानेर-334 001 (राजस्थान), भारत

दूरभाष : 0151-2230183

फैक्स : 0151-2970153

ई-मेल : nrccamel@nic.in

वेबसाईट : www.nrccamel.icar.gov.in

करभ

वार्षिक हिन्दी पत्रिका

2017

संरक्षक व प्रकाशक

डॉ. नितीन वसन्त राव पाटिल
निदेशक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

प्रधान सम्पादक

डॉ. अशोक कुमार नागपाल
प्रधान वैज्ञानिक एवं प्रभारी राजभाषा

सम्पादक

श्री नेमीचन्द बारासा
वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी

संपादक मंडल

डॉ. राकेश रंजन, वरिष्ठ वैज्ञानिक
श्री अशोक यादव, सहायक प्रशासनिक अधिकारी
श्री भरत कुमार आचार्य, सहायक वित्त एवं लेखाधिकारी
डॉ. राकेश कुमार पूनियाँ, वरिष्ठ तकनीकी सहायक

नोट :– पत्रिका में प्रकाशित लेखों में विचार, लेखकों के अपने है। इन विचारों के लिए प्रकाशक अथवा 'करभ' पत्रिका का सम्पादक मण्डल किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है।

मुद्रकः
मै. रॉयल ऑफसेट प्रिन्टर्स, ए 89/1, नारायणा इण्डस्ट्रीयल एरिया, फेस–1, नई दिल्ली–110028

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	विषय		पृष्ठ संख्या
1	ऊँटनी के दुग्ध व्यवसाय हेतु सामूहिक एवं योजनाबद्ध कार्यनीति	एन.वी. पाटिल, राघवेन्द्र सिंह एवं आर. के. सावल	1
2	मानव स्वास्थ्य के लिए ऊँटनी के दूध का महत्व	देवेन्द्र कुमार, राघवेन्द्र सिंह, राकेश कुमार पूनियां, एवं एन.वी. पाटिल	6
3	ऊँटनी का दुग्ध व्यवसाय : चुनौतियाँ एवं समाधान	राजेश कुमार सावल	9
4	ऑटिज्म : एक इलाज योग्य शारीरिक बीमारी	प्रीतपाल सिंह	11
5	ऊँट प्रजाति में दाँतों की संरचना	वेदप्रकाश, बसंती ज्योत्सना, राकेश रंजन, रामेश्वर लाल व्यास एवं नेमीचन्द बारासा	14
6	ऊँटों में क्षय रोग (टी.बी.) : लक्षण, बचाव व निदान	शिरीष नारनवरे	18
7	उष्ट्र संरक्षण एवं संवर्धन में मरुस्थलीय पादपों से निर्मित होमियोपैथिक औषधियों के उपयोग की संभावनाएँ	अमित कुमार व्यास	23
8	ऊँट पालन : विशेषताएँ एवं भविष्य की संभावनाएँ	मुहम्मद मतीन अंसारी एवं राकेश रंजन	25
9	राजस्थान में पशुधन उत्पादकता में सुधार : अवसर और बाधाएँ	राकेश रंजन, वेदप्रकाश एवं मुहम्मद मतीन अंसारी	27
10	बदलती जलवायु एवं घटते चरागाहों से प्रभावित होता पशुधन	एम. के. राव, प्रियंका गौतम, बलदेव दास किराडू एवं बी. लाल	31
11	स्वस्थ एवं सुंदर स्वास्थ्य के लिए शुद्ध नमक : सेंधा नमक	अशोक कुमार नागपाल, फतेहचन्द टुटेजा एवं जितेन्द्र कुमार	35
12	नये प्रतिजैविक (एंटीबायोटिक) की खोजः वर्तमान परिदृश्य एवं भविष्य की रुपरेखा	अमिता रंजन, प्रतिष्ठा शर्मा एवं एल.एन. सांखला	39
13	ऊँट पालन – कल, आज और कल	दिनेश मुंजाल	42

क्र. सं.	विषय		पृष्ठ संख्या
14	मानवीय भावों से परिपूर्ण हैः ऊँट	अनिल कुमार बारियां	44
15	ऊँट की मोरी से कार के स्टीयरिंग तक	उम्मेद सिंह गोठवाल	47
16	घालूं रै टोरड़िया सोनलियौ गिरबाण....	कृष्णा जाखड़	49
17	सूचना विज्ञान के क्षेत्र में इंफार्मेटिक्स के प्रमुख सूचना उत्पाद एवं पुस्तकालय प्रबंधन	रामदयाल रैगर	51
18	धन का लेन–देन ऑनलाइन कर खुद को बीमारियों से बचाएँ	एफ.सी. टुटेजा, ए.के. नागपाल एवं अविनाश कुमार शर्मा	53
19	उपवास – शरीर पवित्रता का साधन !	देवा राम काकड़	56
20	राजभाषा एवं स्वच्छ भारत अभियान	अश्विनी कुमार रॉय	58
21	राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र – एक भ्रमण	अनिता गोयल	61
22	अपने दिल को समझाने चले थे	राजेश कुमार सावल	64
23	हिन्दी भाषा में विज्ञानपरक विषयों की जानकारी	नेमीचंद बारासा, राधाकृष्ण वर्मा एवं ए.के. नागपाल	65
24	प्रथम बने नारी, द्वितीया नहीं	सुचित्रा कश्यप	67
25	राजभाषा गतिविधियाँ		70
26	राजभाषा कार्यशालाएं		74

नितीन वसन्तराव पाटिल

संरक्षक की कलम से...

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर की राजभाषा पत्रिका 'करभ' के 15 वें अंक के प्रकाशन पर मुझे अत्यंत सुखद अनुभूति हो रही है।

इस चराचर जगत में ऊँट नामक प्राणी अनूठी विशेषताओं से सराबोर है। सदियों से अपनी उपयोगिता को सिद्ध करते हुए इसने मानव सभ्यता के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। परंतु पिछले लगभग तीन दशक से कृषि मशीनरी और प्रौद्योगिकी तथा मानवीय जीवन शैली में आए बदलाव से ऊँटों की उपयोगिता अत्यधिक प्रभावित हुई है।

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र ने ऊँटों की वैज्ञानिकी प्रबंधन प्रणाली को आधार बनाते हुए ऊँटों के विविध पहलुओं यथा–जनन, पोषण, शरीर कार्यिकी, प्रजनन एवं आनुवंशिकी आदि पर गहन अनुसंधान कर महत्वपूर्ण उपलब्धियां हासिल की है। परंतु गत दो–तीन दशक से ऊँटों की संख्या गिरावट व उपयोगिता संबंधी उदासीनता से केन्द्र इसके उपयोग के नए विकल्पों की खोज में था। इस क्रम में गत लगभग डेढ़ दशक पूर्व इसके दूध को एक बेहतर विकल्प के रूप में चुना। ऊँटनी के दूध पर क्रमिक अनुसंधान से चौंकाने वाले परिणाम सामने आए। ऊँटनी के दूध एवं इससे विभिन्न स्वादिष्ट दुग्ध उत्पाद विकसित किए गए वहीं इसमें औषधीय गुणधर्मों की भरमार के कारण यह मधुमेह, क्षय रोग तथा ऑटिज्म बीमारियों के प्रबंधन में कारगर साबित हुआ है। ऊँटनी के दूध को एफ.एस.एस.ए.आई. से मान्यता दिलवाकर व इसे भारतीय खाद्य पदार्थों की श्रेणी में शामिल करवाना भी केन्द्र की उपलब्धि मानी जाएगी। अब ऊँट पालकों के लिए हर दृष्टि से उष्ट्र दुग्ध व्यवसाय के लिए प्रगति के द्वार खुले हुए हैं।

केन्द्र के ऑटिज्म, थाइराइड कैंसर तथा सर्पदंश से जुड़े समन्वयात्मक अनुसंधान बेहतर परिणाम लेकर सामने आए हैं। वहीं पेड़ों की पत्तियों व घास आदि के साथ उचित मात्रा में दाने का मिश्रण तैयार कर सस्ता व संपूर्ण आहार फीड पैलेट्स व ब्लॉक्स के रूप में तैयार किया है। साथ ही ऊँटों के त्वचा आदि रोगों में सस्ते, कारगर व सुलभ उपाय खोजे गए हैं। केन्द्र राष्ट्रीय कृषि विकास योजना, आत्मा परियोजना, जनजातीय उप योजना आदि के तहत उष्ट्र प्रशिक्षण कार्यक्रमों, संगोष्ठियों, मेलों आदि गतिविधियों के माध्यम से ऊँट पालकों को अधिकाधिक जागरूक व प्रेरित करने का भरसक प्रयास करता है ताकि वे उष्ट्र पालन व्यवसाय से अधिकाधिक लाभ कमा सके।

केन्द्र अपनी अनुसंधान उपलब्धियों एवं गतिविधियों के व्यापक प्रचार–प्रसार में विश्वास रखता है तथा इस हेतु ऊँटों से सम्बद्ध पत्रिका, लघु पुस्तिकाओं, विस्तार–पत्रकों एवं समाचार पत्रों आदि के माध्यम से उपयोगी जानकारी सतत रूप से प्रचारित–प्रसारित की जाती है।

केन्द्र की राजभाषा पत्रिका के इस नूतन अंक के प्रकाशन पर मैं सभी लेखक गणों को बधाई देता हूँ। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह अंक उष्ट्र पालन व्यवसाय से जुड़ी उपयोगी जानकारी प्रदान करने तथा पाठकों की रूचि बढ़ाने वाला सिद्ध होगा। अंततः इस प्रकार की व्यवसाय लक्षी गतिविधियों से ग्रामीण संभाग में जागृति आकर ग्रामीण व बेरोजगार युवक ऊँटों से संबंधित व्यवसाय में रूचि लेकर आकर्षित होंगे, इसी अपेक्षा सहित सहर्ष करभ का यह अंक प्रस्तुत है।

(नितीन वसन्तराव पाटिल)

निदेशक

ए.के. नागपाल

प्राक्कथन

हिन्दी भाषा अपनी उन्मुक्त/उदात्त शैली के कारण निरंतर आगे बढ़ रही है। जहां अब हिन्दी भाषा बाजारवाद की अनिवार्यता के रूप में उभर रही है वहीं मीडिया जगत में यह संपर्क सूत्र बनकर अपना महत्व सिद्ध कर रही है। अब हिन्दी भाषा ने सीमाओं में न बंधकर एक व्यापक दृष्टिकोण अपना लिया है।

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र उष्ट्र प्रजाति से संबद्ध एक ऐसा ख्याति प्राप्त अनुसंधान केन्द्र है जो कि ऊँटों के विभिन्न पहलुओं पर गहन अनुसंधान कार्य कर ऊँट अनुसंधान के क्षेत्र में महत्ती भूमिका का निवर्हन कर रहा है। इस केन्द्र का मुख्य उद्देश्य, ऊँट पालन व्यवसाय को बदलते परिवेश में नए विकल्पों के साथ सुदृढ़ करना है। इस हेतु केन्द्र अपने अनुसंधान कार्यों के अलावा व्यावहारिक दृष्टिकोण को अपनाते हुए प्रचार–प्रसार पर भी अधिकाधिक जोर देता है। वैज्ञानिकों द्वारा ऊँटों पर किए गए अनुसंधानों की सार्थकता हेतु यह जरूरी भी है। राजभाषा नीति कार्यान्वयन के अंतर्गत आयोजित समिति बैठकों, कार्यशालाओं, हिदी पखवाड़ा आदि के माध्यम से राजभाषा के उत्तरोत्तर प्रयोग हेतु प्रोत्साहित व प्रेरित किया जाता है ताकि राजभाषा प्रयोग हेतु उपयुक्त वातावरण का सृजन हो सके। इस हेतु केन्द्र द्वारा सतत रूप से वार्षिक प्रतिवेदन, लघु पुस्तिकाएं, विस्तार पत्रक, पेम्फलेट आदि का प्रकाशन करवाया जाता है। इसी कड़ी में राजभाषा पत्रिका 'करभ' निरंतर अपनी उपयोगिता को सिद्ध कर रही है। केन्द्र में प्रशिक्षण हेतु आने वाले ऊँट पालकों एवं किसानों को यह पत्रिका उपलब्ध करवाई जाती है ताकि वे ऊँटों के संबंध में अनुसंधान संबंधित अद्यतन जानकारी प्राप्त कर सके। साथ ही अन्य विषयों को भी करभ में शामिल किया जाता है ताकि पाठकों की सुरूचि बनी रहे।

राजभाषा पत्रिका 'करभ' के इस 15 वें अंक में अपनी लेखनी के माध्यम से सहयोग करने वाले सभी लेखकों व रचनाकारों का आभार व्यक्त करते हैं।

हमें पूर्ण विश्वास है कि पत्रिका का यह अंक आपके लिए उपयोगी सिद्ध होगा। इस अंक के संबंध में आपकी प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा रहेगी।

(ए.के. नागपाल)
प्रभारी राजभाषा

ऊँटनी के दुग्ध व्यवसाय हेतु सामूहिक एवं योजनाबद्ध कार्यनीति

एन.वी. पाटिल, निदेशक, राघवेन्द्र सिंह एवं आर. के. सावल, प्रधान वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

ऊँट की मरूस्थलीय परिदृश्य में उपादेयता

रेगिस्तान के उपयोगी पशु ऊँट का परिवहन पशु के रूप में उपयोग बड़ा गौरवमय है। रेगिस्तान की भौगोलिक स्थिति को देखते हुए अन्य पशुओं की अपेक्षा इसका उपयोग एवं महत्व अधिक है। मरूस्थलीय क्षेत्रों में जहां आबादी कम एवं दूर–दूर स्थित है, वहां उचित मार्गों के अभाव में लम्बे रेतीले रास्तों के लिए ऊँटों पर निर्भर रहा जाता हैं। ऐसे स्थानों के लिए पेट्रोलियम व विद्युत ऊर्जा को बचाने में ऊँट गाड़ा महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

ऊँट : वर्तमान परिदृश्य में

यदि खेती की बात की जाए तो अब से लगभग चार–पांच दशक पूर्व तक क्षेत्र की 80 प्रतिशत बरानी खेती व कम दूरी का आवागमन (30 से 40 किलोमीटर की दर प्रतिदिन) ऊँटों व बैलों पर आधारित था। परंतु ऊँटों की संख्या व उपयोग में कमी का यदि आकलन किया जाए तो इनमें कई कारण उभर कर सामने आएंगे। मौटे तौर पर गत दो दशक से खेती में आये परिवर्तन व साधनों में हुए आधुनिकीकरण से पशु आधारित इस व्यवस्था में निःसंदेह निरन्तर कमी आई हैं। एफ.ए.ओ. के आँकड़ों के अनुसार विश्व में वर्तमान में 19.321 लाख ऊँट हैं। हमारे देश में लगभग 0.632 लाख ऊँट शेष रह गए हैं तथा विश्व में उष्ट्र जनसंख्या के हिसाब से हमारे देश का छठा स्थान है।

ऊँटनी का दूध : औषधीय गुणधर्मों से भरपूर

(1) केन्द्र का नवाचार

केन्द्र द्वारा ऊँटों के प्रजनन, जनन, पोषण, शरीर क्रिया विज्ञान, स्वास्थ्य आदि विभिन्न पहलुओं पर महत्वपूर्ण अनुसंधान किए गए हैं। मरूस्थल के बदलते स्वरूप में ऊँट की आर्थिक प्रासंगिकता को ध्यान में रखते हुए इस केन्द्र ने विशेषकर ऊँटनी के दूध को बेहतर विकल्प के तौर पर चुना। उष्ट्र प्रजाति से जुड़ा एक प्रमुख समुदाय 'रायका' ऊँटनी के दूध का सेवन करने पर अधिक सेहतमंद पाए जाने पर केन्द्र की इस विचारधारा को बल मिला कि ऊँट एक बहुद्देशीय पशु है तथा इसे दुधारू पशु के रूप में भी विकसित करने की प्रबल संभावनाएँ छिपी हैं।

(2) केन्द्र द्वारा उष्ट्र डेयरी की स्थापना एवं विकसित दुग्ध उत्पाद

केन्द्र ने ऊँटनी को एक दुधारू पशु के रूप में स्थापित करने की धारणा को अपने यहां दूध की डेयरी एवं मिल्क पार्लर की स्थापना कर दृढ़ बनाया है। शोध पश्चात वैज्ञानिकों द्वारा ऊँटनी के दूध से विभिन्न दुग्ध उत्पाद (दही, कुल्फी, साफ्ट चीज, सुगन्धित दूध, चाय व कॉफी, बर्फी, पेड़ा, लस्सी आदि) विकसित किये जा चुके हैं जिनकी आमजन में स्वीकार्यता उच्च देखी गई है। अपने आप में अनूठे ये दुग्ध उत्पाद न केवल कौतूहल का विषय हैं अपितु केन्द्र इन दुग्ध उत्पादों की अपने मिल्क पार्लर के माध्यम से बिक्री कर अच्छे राजस्व की प्राप्ति कर रहा है। इस पार्लर की सफलता से समाज में इसके दूध के प्रति जागरूकता भी बढ़ रही है।

(3) ऊँटनी के दूध पर गहन वैज्ञानिक शोध

केन्द्र में ऊँटनी के दूध पर हुई वैज्ञानिक शोध में यह दूध मधुमेह, क्षय रोगों में औषधिक रूप से उपयोगी पाया गया है साथ ही वैश्विक शोध में यह पीलिया, फेटी लीवर, ड्राप्सी, एड्स जैसी खतरनाक बीमारी में भी यह इम्यूनो सिस्टम को मजबूत बनाए रखने में काफी कारगर है। केन्द्र की हाल ही में ऑटिज्म बीमारी पर हुई समन्वयात्मक अनुसंधान परिणाम काफी उत्साहजनक है जिसमें मंदबुद्धि बच्चों में ऊँटनी के दूध को सप्लीमेंट फूड के रूप में देने पर

अभूतपूर्व व सुखद परिवर्तन देखे गए। केन्द्र द्वारा ऊँटनी के दूध पर वैज्ञानिक अनुसंधान कर इसमें विद्यमान गुणधर्मों का पता लगाया गया। केन्द्र ने यह जाना कि इसके दूध का स्वाद चरका तथा हल्का नमकीन होता है। ऊँटनी के दूध में औसतन 2.25 प्रतिशत वसा, 2.65 प्रतिशत प्रोटीन, 9.62 प्रतिशत कुल ठोस पदार्थ, 0.95 प्रतिशत राख व 4.20 प्रतिशत विटामिन 'सी' पाई जाती है। ऊँटनी के दूध में लगभग 9.5 लवण ग्राम प्रति लीटर पाया जाता है जिसमें कैल्शियम, फॉस्फोरस, पोटैशियम, सोडियम, क्लोराइड, मैग्नीशियम, जिंक, कॉपर व सल्फर प्रमुख हैं। ऊँटनी के दूध में इन्सुलिन नामक हार्मोन की मात्रा औसतन 4.0–115 माइक्रोसॉफ्ट यूनिट प्रति मि.ली. तक पाई जाती है। ऊँटनी के दूध में विटामिन 'सी', खनिज व प्रतिरक्षात्मक प्रोटीन अन्य पशुओं की अपेक्षा अधिक पाया जाता है।

(4) ऊँटनी के दूध की लोकप्रियता हेतु व्यावहारिक प्रयास

ऊँटनी के दूध के प्रति जागरूकता बढ़ाने हेतु केन्द्र अनेकानेक व्यावहारिक प्रयास भी करता है। अपनी विभिन्न प्रचार–प्रसार गतिविधियों के माध्यम से ऊँटनी के दूध के महत्व को प्रदर्शित किया जाता है। इस हेतु ऊँटनी के दूध निकालने की प्रतियोगिताएं भी आयोजित कर ऊँट पालकों एवं किसानों को प्रोत्साहित करता है साथ ही आत्मा परियोजना, जन जातीय उप योजना, राष्ट्रीय कृषि विकास योजना आदि के तहत ऊँटनी के दूध एवं इसके उत्पाद तैयार करने हेतु निःशुल्क प्रशिक्षण भी मुहैया करवाता है। केन्द्र ऊँटनी के दूध एवं इसके उत्पाद तैयार करने हेतु सामूहिक रूप से आने वाले किसानों/ऊँट पालकों/महिलाओं को निःशुल्क प्रशिक्षण मुहैया करवाता है।

ऊँटनी के दुग्ध प्रसंस्करण की जानकारी लेते ऊँट पालक

साथ ही दूध के प्रति जागरूकता बढ़ाने एवं इसकी औषधिक गुणवत्ता से आमजन को परिचित/लाभ पहुंचाने के उद्देश्य से केन्द्र स्थानीय नगर के महत्वपूर्ण स्थल आदि पर ऊँटनी के दूध की उपलब्धता हेतु बिक्री की पहल करता है। केन्द्र द्वारा पशु एवं कृषि मेलों आदि में ऊँटनी के दूध एवं इससे निर्मित उत्पादों की बिक्री हेतु स्टॉल लगाकर विशेषज्ञ वैज्ञानिकों द्वारा आमजन को दूध की महत्ता बताई जाती है।

(5) भारत सरकार द्वारा ऊँटनी का दूध खाद्य पदार्थों में शामिल करना

एफ. एस. एस. ए. आई. (फूड सेफ्टी एंड स्टेंडर्ड अथॉरिटी ऑफ इंडिया) जो कि भारत सरकार की प्रमाणित संस्था है, द्वारा ऊँटनी के दूध को खाद्य पदार्थ के रूप में अपने विभिन्न पैरामीटर्स के आधार परखा गया तदुपरांत इसे इंसानों हेतु पूर्णतया फायदेमंद मानते हुए इसे खाद्य पदार्थ के रूप में मान्यता प्रदान की गई है। एफ. एस. एस. ए. आई. ने यह माना है कि ऊँटनी का दूध, 3 फीसदी फेट, 4–5 फीसदी प्रोटीन, क्षार सहित तय मापदंडों पर सटीक (फुल–प्रूफ) बैठता है। राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र को ऊँटनी के दूध के व्यवसायीकरण की दिशा में मिली इस महत्वपूर्ण सफलता से ऊँट पालकों को अत्यंत लाभ मिल सकेगा। अब ऊँट पालक भाई प्रमाणिक तौर पर दुग्ध व्यवसाय को अपना सकते हैं।

(6) ऊँटनी के दूध व्यवसाय में रोजगार की बेहतर संभावनाएं

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर द्वारा बदलते परिदृश्य में ऊँटों की घटती आबादी एवं सीमित उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए ऊँट को पूर्णतया एक दुधारू पशु के रूप में स्थापित करने का अभिनव प्रयास गत डेढ़ दशक से सतत रूप से जारी है। गहन व सतत अनुसंधानों के परिणाम स्वरूप आज ऊँटनी के दूध की न केवल स्वीकार्यता बढ़ी है बल्कि तीव्र मांग भी बलवती हुई है। इससे पूर्व ऊँटनी के दूध की स्वीकार्यता के संबंध में देश व समाज में अनेकानेक भ्रांतियां व्याप्त थी मसलन् ऊँटनी के दूध में कीड़े पड़ना, इसमें दुर्गन्ध होती है, यह

जल्दी फट जाता है, यह पचता नहीं है, यह इंसानों के लिए पीने योग्य नहीं है। समाज में फैले इन मिथकों एवं मनगढ़ंत बातों को निराधार साबित करने में राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र ने महत्ती व अग्रणी भूमिका निभाई हैं।

एफ. एस. एस. ए. आई. द्वारा ऊँटनी के दूध को खाद्य पदार्थ के रूप में शामिल करवाने में मिली केन्द्र को मिली महत्वपूर्ण सफलता, केन्द्र की शोध से ऊँटनी के दूध की मधुमेह, टी. बी., ऑटिज्म आदि के प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका सिद्ध होने के साथ–साथ उष्ट्र दुग्ध व्यवसाय को भलीभूत/परिणित करने हेतु इस केन्द्र द्वारा विकसित दूध एवं दुग्ध उत्पादों के निर्माण/प्रसंस्करण/रखरखाव आदि की तमाम व ठोस वैज्ञानिक जानकारी उपलब्ध है। मधुमेह आदि के अलावा ऑटिज्म बीमारी में ऊँटनी के दूध की उपयोगिता साबित होने के बाद केन्द्र में देशभर से ऊँटनी के दूध की मांग अधिक बढ़ी है परंतु सीमित दुग्ध उपलब्धता के रहते केन्द्र के लिए दूध लेने के इच्छुक ग्राहकों को दूध उपलब्ध करवाना व सीमित संसाधनों के कारण दूध की आपूर्ति केन्द्र स्तर पर संभव नहीं है। इस हेतु ऊँट पालकों को सामूहिक व ठोस संगठन के रूप में सामने आना होगा।

ऊँटनी के दुग्ध व्यवसाय हेतु योजनाबद्ध कार्यनीति

ऊँट पालकों व किसान भाइयों को केन्द्र की ओर से ऊँटनी के दूध हेतु किए गए उक्त तमाम प्रयासों, पहलुओं, परिणामों पर चिंतन व मनन करते हुए ऊँटनी के दूध को आमदनी बढ़ाने का एक बेहतर विकल्प मानते हुए इस व्यवसाय की ओर उन्मुख होना चाहिए ताकि उष्ट्र प्रजाति के संरक्षण व विकास के साथ साथ ऊँट पालक भाई भी समृद्ध हो सके। इसके लिए निम्नलिखित प्रकार से सामूहिक व योजनाबद्ध कार्यनीति कारगर सिद्ध हो सकती है :–

- ऊँट पालक व किसान भाइयों की दृढ इच्छा शक्ति, सामूहिक प्रयास व सक्रिय भूमिका इस व्यवसाय को पनपाने हेतु परमावश्यक है।
- केन्द्र में प्रशिक्षण प्राप्त करने हेतु ये ऊँट पालक व किसान सामूहिक रूप में अपने गांव की पंचायत समिति, गैर सरकारी संगठन/संस्था, पशुपालन विभाग (विभिन्न योजनाओं आदि के माध्यम से) अथवा सीधे केन्द्र में आवेदन/पत्र भिजवा सकते हैं।
- प्रशिक्षण हेतु आवेदन में वे स्पष्ट रूप से अपना नाम, गांव, तहसील, जिला, मोबाइल नंबर, पता तथा प्रशिक्षण प्राप्त करने का प्रस्तावित कार्यक्रम आदि का स्पष्ट विवरण भरकर निदेशक, भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर के पते पर पत्र भिजवाएं। प्रशिक्षण संबंधी भेजे गए आवेदन अथवा उष्ट्र संबंधी अन्य जानकारी प्राप्त करने हेतु वे केन्द्र के दूरभाष नं. 0151–2230183 अथवा मेलआईडी nrccame@nic.in पर संपर्क कर सकते हैं।
- केन्द्र द्वारा प्राथमिकता पर ऊँट पालकों को संबंधित विभाग/समिति/संस्था/गैर सरकारी संगठन के माध्यम से पत्र आदि द्वारा सूचित किया जाता है।
- प्रशिक्षण हेतु इच्छुक ऊँट पालकों को (केवल सरकारी विभाग की योजनाओं/परियोजनाओं/केन्द्र द्वारा प्रायोजित/आयोजित कार्यक्रमों को छोड़कर) अपनी यात्रा आदि का खर्च स्वयं उठाना होगा। केन्द्र में उपलब्ध संसाधन, ठहरने आदि की व्यवस्था/सुविधा केन्द्र द्वारा मुहैया करवाई जाती है।
- प्रशिक्षण में भाग लेने वाले ऊँट पालकों का सर्वप्रथम केन्द्र द्वारा पंजीयन किया जाता है तथा विषय विशेषज्ञों द्वारा उन्हें ऊँटनी के दूध पर व्यापक प्रशिक्षण एवं ऊँटों के अन्य पहलुओं पर भी जानकारी संप्रेषित की जाती है तथा प्रशिक्षणार्थियों द्वारा प्रकाशित प्रचार–प्रसार साहित्य (उपलब्धता के आधार पर) वितरित किया जाता है।
- केन्द्र द्वारा ऊँटनी के दूध से विकसित कुल्फी, चाय, कॉफी, लस्सी, सुगन्धित दूध, पेड़ा, बर्फी, गुलाब जामुन आदि मूल्य संवर्धित उत्पादों को बनाने की विधियों, दूध व इससे निर्मित उत्पादों के प्रसंस्करण, ऊँटनी के दूध के रखरखाव आदि का सैद्धांतिक व व्यावहारिक प्रशिक्षण केन्द्र के विषय विशेषज्ञ वैज्ञानिकों द्वारा प्रदान किया जाता है ताकि प्रशिक्षण प्राप्त कर वे अनुभूत ज्ञान के आधार पर इस व्यवसाय को न केवल स्वयं अपितु अन्य किसान भाइयों को भी सीखाने योग्य बना सके।
- प्रशिक्षण प्राप्त करने के पश्चात ऊँट पालकों को सामूहिक/स्वयं सहायता समूह/गैर सरकारी

संगठन/संस्था स्तर पर उष्ट्र दूध उत्पादन, इसका संग्रहण, प्रसंस्करण, मूल्य संवर्धित उत्पादों का निर्माण, प्रौद्योगिकीय परिवहन व विक्रय इत्यादि के विभिन्न चरणों को एक सुनियोजित, श्रृँखलाबद्ध व कुशलतापूर्वक निष्पादित किया जाना चाहिए।

- सामूहिकता में आने वाले ऊँट पालकों व किसानों द्वारा इस कार्य को चरणबद्ध आगे बढ़ाने व सफल बनाने हेतु सर्वप्रथम व्यक्तिगत हितों से ऊपर उठते हुए सभी के हितों/परिस्थितियों/उपलब्ध संसाधनों आदि तमाम पहलुओं का आकलन करते हुए अपनी संस्था के नीति–नियम तैयार करने चाहिए। सदस्यों को योग्यता अनुसार पदभार देते हुए उनकी इन नीति–नियमों पर स्वीकृति प्राप्त कर इस संस्था का संबंधित विभाग में पंजीयन करवाया जाना चाहिए।
- सामूहिक समिति/संस्था की शैशवास्था में प्रयुक्त/उपलब्ध संसाधनों का किफायती तौर पर उपयोग लिया जाना चाहिए।
- उष्ट्र दुग्ध व्यवसाय के प्रति जागरूकता लाने व महत्व समझाने हेतु यह समिति अपने स्तर पर उष्ट्र बाहुल्य क्षेत्रों को चिन्हित करने का कार्य करें तथा ऊँट पालकों के साथ ऊँटों (नर/मादा) की संख्या संबंधी संपूर्ण व प्रमाणिक जानकारी का संग्रहण/संप्रेषण करें इस कार्य हेतु गांव के पढ़े लिखे युवाओं/स्वयं सहायता समूहों को प्रेरित व प्रोत्साहित करते हुए उनकी सहायता ली जा सकती है तथा अप्रत्यक्ष रूप से उष्ट्र दुग्ध व्यवसाय हेतु भावी पीढ़ी तैयार की जा सकती है।
- उष्ट्र पालकों जिनके पास मादा ऊँट है, को ऊँटनी के प्रजनन/प्रसव हेतु प्रेरित किया जाए तथा भावी लाभों से भी परिचित करवाया जाना चाहिए मसलन उन्हें वर्तमान में राज्य सरकार द्वारा उष्ट्र प्रजनन हेतु चल रही प्रोत्साहन योजना के बारे में भी जानकारी देते हुए तथा इसका लाभ दिलाया जाए ताकि वे प्रजनन तथा दुग्ध व्यवसाय के प्रति उन्मुख हो सके। समिति अपने स्तर पर भी धन उपलब्धता के आधार पर अत्यंत जरूरतमंद ऊँट पालक को उसकी जरूरत अनुसार सहायता प्रदान करें। इस पहल से ऊँटों की घटती संख्या पर भी विराम लगाने में सहायता मिल सकेगी।
- मादा ऊँट से प्राप्त टोरडा/टोरडियों की संख्या संबंधी आंकड़ों का लेखा–जोखा अलग से रखा जाए।
- समिति पशुपालन व कृषि से जुड़ी तमाम सरकारी योजनाओं की जानकारी प्राप्त करें ताकि आवश्यकता होने पर न केवल समिति अपितु जरूरतमंद पशुपालकों को भी इनका यथोचित लाभ दिलवाया जा सके।
- समिति चिन्हित मादा ऊँट के प्रजनन/प्रसव आदि में ऊँट पालक को पर्याप्त सहायता प्रदान करें जैसे कि प्रसव/प्रजनन की सही तिथि, प्रसव करवाने हेतु पशु चिकित्सक की मदद मुहैया करवाना साथ ही प्राथमिक दवाओं संबंधी सहायता प्रदान करना। वह ऊँट पालकों को प्रसव में बरती जाने वाली सावधानियों के बारे में भी भलीभांति अवगत करवाएं, इससे अत्प्रयक्ष रूप से टोरडा/टोरडियों में होने वाली मृत्युदर में भी कमी लाने की दिशा में कार्य किया जा सकेगा।
- प्रसव पश्चात समिति सक्रिय रूप से कार्य करें तथा मादा ऊँट/टोरडी होने पर ऊँट पालक से उसके मोबाइल/दूरभाष आदि के माध्यम से तुरंत सम्पर्क साधते हुए उसे ऊँटनी के दूध विक्रय हेतु तैयार कर इसकी उपलब्धता सुनिश्चित करवाए।
- समिति द्वारा उष्ट्र दुग्ध संग्रहण हेतु एक ऐसे सेंटर पॉईन्ट स्थल का चयन किया जाना चाहिए जो कि आस–पास के सभी गांवों आदि हेतु आवागमन आदि की दृष्टि से सुविधाजनक व उनकी पहुंच/अप्रोच में हो ताकि दूध की आपूर्ति अपेक्षित तापमान (कोल्ड चेन अथवा अन्य प्रचलित संसाधनों) के अनुसार सुनिश्चित की जा सके। इसकी श्रृँखलाबद्ध आपूर्ति की भलीभांति व्यवस्था की जानी चाहिए। अन्यथा इससे यथोचित उद्देश्य की प्राप्ति में बाधा उत्पन्न होगी।
- समिति के पास ऊँट पालकों से आपूर्त दूध के भण्डारण की उचित व्यवस्था/स्थान उपलब्ध होना चाहिए। दूध के प्रसंस्करण, प्रशीतन आदि हेतु आधुनिक संसाधन/उपकरणों की समुचित व्यवस्था उपलब्ध होनी चाहिए। इनकी खरीद–फरोख्त आदि हेतु उष्ट्र हित धारकों को भी अपने साथ जोड़े।
- ये उष्ट्र हित धारक आगे चलकर इस व्यवसाय को पनपाने में भी महत्वपूर्ण सहायता/संबल प्रदान कर सकेंगे।

- समिति द्वारा ऊँटनी के दूध के औषधीय महत्व एवं इसके दूध से निर्मित स्वादिष्ट मूल्य संवर्धित उत्पादों को ध्यान में रखते हुए इनका बाजार भाव तय किया जाना चाहिए साथ ही समिति केवल उष्ट्र दूध/दुग्ध उत्पादों की बिक्री हेतु ही अपना ध्यान केन्द्रित न करें अपितु विपणन की मांग को ध्यान में रखते हुए इससे मूल्य संवर्धित दुग्ध उत्पाद तैयार कर बाजार में उतारें।

ऊँटनी के दूध से बने उत्पादों के प्रति जागरूकता बढ़ाने हेतु केन्द्र की पहल

- समिति उष्ट्र दुग्ध/दुग्ध उत्पादों आदि से मिलने वाले लाभ राशि को सदस्यों में बराबर–बराबर विभाजित करें। इससे समिति सदस्यों में उत्साह व विश्वसनीयता बनी रहेगी। साथ ही आकस्मिक/आपात खर्चों की भी व्यवस्था की जानी चाहिए ताकि आवश्यकता होने पर बिना किसी व्यवधान के समिति का कार्य सुचारू रूप से निष्पादित किया जा सके।
- समिति उष्ट्र के विभिन्न पहलुओं के साथ–साथ उष्ट्र दुग्ध से जुड़ी प्रमाणिक जानकारी का संग्रहण करें तथा इसे गांव–गांव, ढाणी–ढाणी प्रचारित–प्रसारित करें। ज्ञातव्य है कि राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर द्वारा ऊँटों के विविध पहलुओं तथा उष्ट्र दुग्ध से जुड़ी जानकारी प्रकाशन स्वरूप में उपलब्ध है।
- समिति द्वारा इस दुग्ध व्यवसाय को सफल बनाने हेतु सरकारी स्तर पर सहायता प्राप्ति के प्रयास किए जाने होंगे। ऊँटनी के दुग्ध व्यवसाय के नवाचार उद्यमिता प्रयास को देखते हुए सरकार द्वारा अपनी संगत विभिन्न ग्रामीण/जन कल्याणकारी योजनाओं के माध्यम से सहायता प्रदान करवाई जा सकती है।
- इसके अलावा ग्रामीण अंचल एवं अन्य सरकारी बैंक आदि से भी इस व्यवसाय को संबल प्रदान करने अथवा समिति को आपात आदि स्थिति से उभारने, व्यवसाय को सुरक्षित बनाने/बीमित करवाने हेतु भी संपर्क साधा जाना चाहिए। बैंकों में ऐसी कई कल्याणकारी योजनाओं में मिलने वाली सब्सिडी आदि का लाभ लिया/जरूरतमंद ऊँट पालक व किसान को दिलवाया जा सकता है।
- प्रशिक्षित समितियां गांव–गांव, ढाणी–ढाणी इस व्यवसाय को फैलाने हेतु उपयुक्त वातावरण का सृजन करें। इस हेतु वे भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर से मदद भी प्राप्त कर सकते हैं।
- भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर द्वारा ऊँटनी के दूध की लोकप्रियता बढ़ाने एवं औषधीय उपयोगिता सिद्ध करने तथा वैश्विक शोध उपरांत यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि यदि ऊँटनी के दूध को व्यवसाय के रूप में चुना जाए तो इसमें रोजगार की बेहतर संभावनाएं छिपी हैं।

अतः उपर्युक्त प्रयासों के माध्यम से उष्ट्र दुग्ध व्यवसाय को एक व्यवस्थित स्वरूप में प्रारम्भ किया जा सकता है। ऊँट पालक व किसान भाई दृढ़ इच्छा शक्ति से इस व्यवसाय से जुड़कर न केवल उष्ट्र प्रजाति को संरक्षण प्रदान कर सकते हैं अपितु ऊँट पालकों के समाजार्थिक स्तर में इससे महत्वपूर्ण बदलाव लाया जा सकता है।

"राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है। मेरा यह मत है कि हिन्दी ही हिन्दुस्तान की राष्ट्रभाषा हो सकती है और होनी चाहिए।"
- राष्ट्रपिता मोहनदास करमचंद गांधी

मानव स्वास्थ्य के लिए ऊँटनी के दूध का महत्व

देवेन्द्र कुमार, वैज्ञानिक, राघवेन्द्र सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, राकेश कुमार पूनियां, वरिष्ठ तकनीकी सहायक एवं एन.वी. पाटिल, निदेशक

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

शुष्क व अर्धशुष्क क्षेत्रों में उष्ट्र पालक का किसानों के जनजीवन में एक महत्वपूर्ण योगदान रहा है। राजस्थान व देश के अन्य राज्यों में ऊँटों की घटती जनसंख्या को देखते हुए अब इस पशु का उपयोग दूध उत्पादन में भी किया जाने लगा है जिससे इस पशु की घटती संख्या पर लगाम लग सकता है। इस कार्य के लिए राज्य सरकार भी पशु पालकों की मदद करने के लिए तैयार है।

ऊँटनी के दूध का उपयोग सदियों से रायका समाज में पीने के काम में लाया जा रहा था परंतु आजकल इस दूध की मांग देश एवं विदेश में सभी वर्ग के लोगों में है। इसका कारण मुख्यतः इस दूध की जैविक क्षमता है जिससे यह विभिन्न मानव रोगों में लाभकारी पाया गया है। देश व विदेश में हुए अनुसंधानों में यह पता चला है कि यह दूध मानव की कुछ प्रमुख बीमारियों जैसे–गेस्ट्रो–इनटेस्टिनल डिसऑर्डर, मधुमेह, उच्च रक्तचाप, भोजन एलर्जी, हेपेटाइटिस, कैंसर इत्यादि में लाभकारी सिद्ध हुआ है। इतना ही नहीं इस दूध के सेवन से खून में कॉलेस्टॉल का कम होना एवं इम्यूनो सिस्टम का मजबूत होना भी उल्लेखित है। किण्वित दूध का उपयोग मुख्यतः पेट एवं आंत की बीमारियों में किया जाता है। इसमें उपस्थित विभिन्न प्रकार के जीवविरोधी कारक जैसे–लाइसोजाइम, हाइड्रोजीन परऑक्साइड, लैक्टोफेरिन, लैक्टोपरऑक्सीडेज एवं इम्यूनोग्लोब्युलिन की इस दूध की रोगी क्षमता को बढ़ाती है। ऊँटनी के दूध में प्रोबायोटिक बैक्टीरिया की भी खोज की जा चुकी है जो स्वास्थ्यवर्धक होता है।

आंत एवं पाचन तंत्र के विकारों में ऊँटनी का दूध उपयोगी-

ऊँटनी के दूध में अत्यधिक मात्रा में सूजन विरोधी प्रोटीन्स पाए गए हैं। असंतृप्त वसीय अम्ल एवं विटामिन की अधिक मात्रा शर्करा संबंधित उपापचय में सुधार करती है। किण्वित दूध उत्पाद में महत्वपूर्ण एंजाइम पाए जाते हैं जो दूध प्रोटीन के पाचन में मदद करता है। हाल में ही हुए एक अनुसंधान में यह पाया गया है कि इस दूध में अतिसार रोधी (एंटीडायरियल) गुण है एवं बच्चों में हुए सामान्य अतिसार एवं रोटावायरस से हुए अतिसार (डायरिया) को भी ठीक कर देता है।

अनुसंधान में यह भी पाया गया है कि जिन व्यक्तियों में दूध सेवन से लेक्टोज अपच की समस्या है, उनके लिए ऊँटनी का दूध एक महत्वपूर्ण विकल्प है। इस तरह के मरीज ऊँटनी के दूध का सेवन कर इसे आसानी से पचा सकते हैं। एल–लेक्टैट अधिक मात्रा में ऊँटनी के दूध में पाया जाता है जिससे इसमें उपस्थित लेक्टोज का पाचन सही से हो जाता है। वही गाय के दूध में डी–लेक्टैट ज्यादा मात्रा में पाई जाती है।

ऊँटनी का दूध मधुमेह में लाभकारी

काफी समय पहले से ऊँटनी के दूध का उपयेग मधुमेह के रोगियों में होता रहा है। मधुमेह एक मेटाबॉलिक डिसऑर्डर है जिसमें खून में शुगर की मात्रा सामान्य से बढ़ जाती है। टाईप–1 मधुमेह में इस दूध का उपयोग कारगर साबित हुआ है। ऊँटनी के दूध में इन्सुलिन एवं इंसुलिन प्रकार के वृद्धि कारक–1 (इंसुलिन लाइक ग्रोथ फैक्टर–I) की मात्रा अन्य दूध से ज्यादा पाई गई है एवं यह पाचन तंत्र में नष्ट नहीं होता है। इसके दूध का सेवन मधुमेह की वजह से होने वाले अन्य विकारों को भी कम करता है।

बच्चों की भोजन-एलर्जी में लाभकारी

ऊँटनी के दूध का उपयोग बच्चों में विभिन्न भोज्य पदार्थों से हुए एलर्जी के इलाज में भी किया गया है। कुछ भोज्य पदार्थ जिसमें दूध एवं दूध उत्पाद भी शामिल है,

एलर्जी करते हैं। ऊँटनी के दूध से बच्चों में पाये जाने वाले इम्यूनोग्लोब्युलिन–ई प्रतिक्रिया नहीं करते हैं जिससे एलर्जी नहीं होती है। एक अनुसंधान जिसमें बच्चों को एलर्जिक खाना खिलाकर फिर ऊँटनी का दूध पिलाया गया एवं पाया गया कि ऊँटनी का दूध पीने वाले बच्चों में एलर्जी के लक्षण चार दिन बाद पूरे समाप्त हो गए। यह माना गया है कि इस दूध में उपस्थित इम्यूनोग्लोब्युलिन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अतः इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भोजन एलर्जी वाले बच्चों में ऊँटनी का दूध उपयोगी साबित हो सकता है।

खून में कॉलेस्ट्रॉल कम करने की क्षमता

खून में अधिक कॉलेस्ट्रॉल की मात्रा दिल की बीमारी का प्रमुख कारण माना जाता है। यह देखा गया है कि चूहों को किण्वित उष्ट्र दूध पिलाने से इनके खून में कॉलेस्ट्रॉल की मात्रा घटती है। इस प्रभाव के कारणों का अभी पता नहीं चला है लेकिन यह माना जाता है कि इस दूध में उपस्थित बायोएक्टिव पेप्टीडेज कॉलेस्ट्रॉल से रियक्ट कर इसकी मात्रा को कम करते हैं। इस कड़ी में यह भी माना जाता है कि ऊँटनी के दूध में आरोटि अम्ल की उपस्थिति भी चूहों और मानव रक्त में कॉलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करने में सहायक है।

सोरायसिस (अपरस) के इलाज में उष्ट्र दूध की उपयोगिता

सोरायसिस अर्थात् अपरस एक भयानक चर्म रोग है। एक अनुसंधान में यह पाया गया है कि एक त्वचा क्रीम जिसमें 40 प्रतिशत उष्ट्र दूध मिलाया गया था, जब सोरायसिस के मरीजों की त्वचा पर लगाया गया तो बहुत ही अच्छा परिणाम प्राप्त हुआ। इस क्रीम के उपयोग से त्वचा पर सुखद ठंडक महसूस होती है एवं खुजली व अन्य पीड़ा भी कम हो जाती है। त्वचा का लालीपन एवं सूखापन भी काफी हद तक कम हो जाता है। राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र में ऊँटनी के दूध से त्वचा क्रीम बनाई गई थी एवं परीक्षण में यह पाया गया कि यह क्रीम सूखी त्वचा के लिए अत्यंत लाभकारी है।

हेपेटाइटिस 'सी' एवं 'बी' में ऊँटनी का दूध लाभकारी

हैपेटाइटिस 'सी' वायरस (एचसीवी) दुनिया भर में फैल गया है और अब तक कोई प्रभावी उपचार उपलब्ध नहीं है। बहुत लोग इस बीमारी के उपचार हेतु पारंपरिक औषधि का उपयोग करते हैं। एक अनुसंधान में यह पाया गया है कि ऊँटनी के दूध में ज्यादा मात्रा में लैक्टोफेरिन की उपस्थिति के कारण यह ह्युमन ल्युकोसाइट में एचसीवी के प्रवेश को रोकता है। इतना ही नहीं ऊँटनी के दूध में उपस्थित इम्यूनोग्लोब्युलिन–जी, एचसीवी को पहचान लेता है जो गुण गाय के दूध में नहीं पाए जाते है। इसके अलावा ऊँटनी के दूध का प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया मे प्रभाव के कारण यह पुरानी हैपेटाइटिस–बी के मरीजों में सेलुलर प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया को बढ़ाता है जिससे विषाणु के डीएनए के पुनरावृत्ति को रोकता है एवं ऐसे मरीजों को स्वास्थ्य लाभ में मदद करता है।

शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करने में ऊँटनी का दूध लाभकारी

कई अध्ययनों में प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करने के लिए ऊँटनी के दूध का उपयोग किया गया। यह ज्ञात है कि ऊँटनी के दूध में इम्युनोग्लोब्युलिन का एक पूरा वर्ग है, जो मूल रूप से अन्य सभी एंटीबॉडी से अलग है। अतः ऊँटनी के दूध की अद्वितीय संरचना के कारण यह गाय और मानव दूध से पूरी तरह से अलग है। अध्ययन में पाया गया कि ऊँटनी और गाय के दूध प्रोटीन के बीच प्रतिरक्षा विहीन में असमानता ही शारीरिक पौष्टिक और नैदानिक पहलुओं का एक महत्वपूर्ण मानदंड माना जा सकता है। एक अन्य अध्ययन से संकेत मिलता है कि ऊँटनी के दूध में ऊँटों का विशेष इम्युनोग्लोबुलिन होता है। इस इम्युनोग्लोब्युलिन की संरचना मानव इम्युनोग्लोब्युलिन के समान है लेकिन आकार में केवल एक का दसवां भाग ही है अर्थात् इसका आकार काफी छोटा है जिससे शरीर प्रतिरक्षा प्रणाली द्वारा आसानी से रोग के कारक को लक्ष्य बनाना एवं उनमें प्रवेश कर उन्हें नष्ट करना संभव है जो मानव इम्युनोग्लोब्युलिन नहीं कर सकते।

- ऊँटनी के दूध में पेप्टाइडोग्लाइकेन सदृश प्रोटीन (पीजीआरपी) बहुत अधिक है। यह मेजबान के प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया को उत्तेजित करता है और रोगाणुरोधी गतिविधि है।
- ऊँटनी लैक्टोफेरिन में गायों और बकरियों के दूध के मुकाबले ज्यादा जैविक क्षमता है। लैक्टोफेरिन जीवाणुओं

की बढ़ोतरी और बाह्य रोगजनकों को रोकता है। एक एंजाइम है जो सहज प्रतिरक्षा प्रणाली का हिस्सा है एवं ग्राम (सकारात्मक) जीवाणुओं को लक्षित करता है।

- लैक्टोपेरॉक्सीडेज का ग्राम (नकारात्मक) जीवाणुओं जैसे एसेरिचीया कोलाई, साल्मोनला और स्यूडोमोनस के प्रति एक जीवाणुनाशक गतिविधि है।
- एन – एसिटील – बीटा – डी – ग्लूकोसामिडेज में जीवाणुरोधी गतिविधि है जो ऊँटनी के दूध एवं मानव दूध में समान मात्रा में पाया जाता है।

कैंसर में ऊँटनी का दूध उपयोगी

विभिन्न वैज्ञानिक अध्ययनों से पता चला है कि ऊँटनी का दूध एवं ऊँट मूत्र उपयोग से कैंसर कोशिकाओं के विकास में कमी होती है। चूहों में इसका सफलतापूर्वक परीक्षण किया गया है और मानव में कोशिश की जा रही है।

परिणाम बताते है कि रक्त कैंसर (ल्यूकेमिया) के उपचार में ज्यादा सफलता का दर है। फेफड़े, यकृत और स्तन कैंसर के उपचार के लिए भी प्रयोग जारी है। एक अध्ययन में यह पाया गया है कि ऊँटनी का दूध हेप–जी 2 (मानव हेपेटामा) और एमसीएफ 7 (मानव स्तन) कोशिकाओं के प्रसार को काफी हद तक अवरूद्ध किया जबकि यह गुण गाय के दूध में नहीं देखा गया। इसके अलावा, बृहदान्त्र कैंसर सेललाइन, एचसीटी–116 में इनविट्रो विधि द्वारा डीएनए नुकसान और एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि की क्षमता के लिए ऊँटनी के दूध में उपस्थित लैक्टोफेरिन की क्षमता का मूल्यांकन भी किया जा चुका है।

ऑटिज्म में उष्ट्र दूध

ऑटिज्म स्पैक्ट्रम विकार, वृहद तंत्रिकीय–विकास विकारों का एक भाग है जिसको व्यापक विकासीय विकार के नाम से भी जाना जाता है। जिसके अंतर्गत ऑटिज्म, अस्पर्गर सिंड्रोम, रेट्स विकार एवं चाइल्ड डिसइंटग्रेटीव विकार आदि को सम्मिलित किया जाता है।

उष्ट्र विशेषज्ञ डॉ. यागिल ने ऑटिज्म के उपचार हेतु ऊँटनी के दूध के प्रयोग का सुझाव दिया साथ ही एक अन्य वैज्ञानिक डॉ. अमनोन गोनिने ने जलन/सूजन

ऑटिज्म से ग्रसित बच्चे

को ऑटिज्म का ही एक घटक माना। इन्होंने बताया कि इस सूजन को कम करने में ऊँटनी का दूध बहुत ही लाभदायक है। ऊँटनी के दूध फार्म से जुड़े ईडेन ने भी डॉ. गोनिने के मत से सहमति दर्शाई है। उन्होंने बताया कि ऑटिज्म की शुरुवाती अवस्था के साथ–साथ असावधान–अतिक्रियाशील विकार से ग्रसित बच्चों को ऊँटनी का दूध पिलाने से उनमे बेहतर परिणाम प्राप्त हुए यद्यपि कुछ अभिभावकों के अनुसार ऑटिज्म की गम्भीर अवस्था में भी इस दूध से काफी सुधार होता है। उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र द्वारा बाबा फरीद सेंटर फार स्पेशल चिल्ड्रेन, फरीदकोट के साथ मिलकर एक अध्ययन किया गया जिसमें यह पाया गया कि औसत्न 500–600 मिली. ऊँटनी का ताजा दूध सेवन करने पर ऑटिस्टिक बच्चों में काफी हद तक सुधार हुआ एवं उनमे रोग प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ गई।

तपेदिक रोगियों के लिए ऊँटनी का दूध

केन्द्र में हुए अनुसंधान में यह पाया गया है कि ऊँटनी के दूध के सेवन से मल्टीड्रग–प्रतिरोधी तपेदिक बीमार रोगियों में लक्षणों में महत्वपूर्ण सुधार हुआ इस प्रकार के मरीजो को प्रतिदिन एक लीटर ऊँटनी का दूध पिलाया गया तत्पश्चात् यह पाया गया कि खासी, थूक एवं छाती में दर्द समाप्त हो गया एवं मरीजों में ज्यादा भूख लगना व शरीर का वजन बढ़ना इत्यादि देखा गया। ऊँटनी के दूध में यह गुण इसमें उपस्थित सूक्ष्म जीवनिवारक घटकों की उपस्थिति के कारण माना गया है।

अतः निष्कर्ष तौर पर यह कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी कि ऊँटनी का दूध मानव स्वास्थ्य हेतु वरदान से कम नहीं।

ऊँटनी का दुग्ध व्यवसाय : चुनौतियाँ एवं समाधान

राजेश कुमार सावल, प्रधान वैज्ञानिक

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

पूर्व में ऊँट प्रजाति का उपयोग मुख्यतः बोझा/भार उठाने के लिए किया जाता था। वर्तमान में औद्योगिकीकरण के कारण यह कार्य मोटर गाड़ी/मशीनों द्वारा किया जाने लगा है जिसमें मुख्यतः मंडियों से अनाज, ऊन, चारा इत्यादि उद्योगों तक पहुँचाना, एवं तैयार किया हुआ माल शहर तक पहुँचाना। तेज यातायात के साधनों के कारण मनुष्य ने भी ऊँट गाड़ी का उपयोग कम कर दिया। वर्तमान में केवल ऊँट गाड़ी का उपयोग मरुस्थल के गांवों में पानी ढोने या घर/परिवार के सदस्यों को मुख्य सड़क तक पहुँचाने या फसल कटाई के समय सामान घर तक पहुँचाने के काम में लाया जाता है। इस कारण ऊँटों की संख्या तेजी से घटने लगी है।

ऊँट द्वारा बोझा उठाने आदि की उपयोगिता के कारण इसके दूध में छिपी औषधिक महत्व की तरफ ध्यान ही नहीं दिया गया। केवल इन्हें पालने वाली घुमन्तु जातियां दूध का पारंपरिक उपयोग ही लेती रही। यह इस प्रजाति के उत्तरोतर उपयोग में महती भूमिका निभा सकता था। समय के साथ उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र एवं वैश्विक शोधों से ऊँटनी के दूध का महत्व उजागर हुआ।

फलस्वरूप ऊँटनी के दूध को औषधि के रूप में इस्तेमाल करने के लिये प्रचार–प्रसार दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। जागरूक ऊँट पालक इस व्यवसाय को शुरू करने की पहल करने लगे हैं। अन्य दुधारू पशुओं जैसे गाय व भैंस में पशु पालक दूध का व्यापार करते आए हैं। इसलिए दूध को निकालते समय पशु के थनों को अच्छी तरह से धोना, दूध निकालने/एकत्रित करने वाले बर्तनों के धोने पर विशेष ध्यान दिया जाता है। दूध निकालने के पश्चात उसे मलमल के कपड़े से छाना जाता है। ऊँटनी के दूध का व्यवसाय अभी शुरू हो रहा है, पशु पालक भी अभी उतने जागरूक नहीं हैं, इसलिए थनों को धोना, बीमार पशु को अलग करके रखना इत्यादि से स्वच्छ दूध उत्पादन के लिए जागरूकता आवश्यक है।

इस हेतु पशु स्वास्थ्य अहम है जिस पर ध्यान देना आवश्यक है। ऊँटनी एवं उसके थनों की नियमित जांच कराते रहना चाहिए। पशु चीचड़ों से ग्रसित ना हों, ध्यान देना आवश्यक है। पशु का आवास साफ एवं स्वच्छ स्थान पर होना चाहिए ताकि उसके बैठने वाला स्थान दिन भर में सूख सके व मल की निकासी उपयुक्त हो। पशु एवं उसके थनों में किसी भी तरह के विकार होने पर चिकित्सा अधिकारी से संपर्क कर उसका इलाज करवाएँ ताकि बीमारी आगे ना फैलें।

दूध का उपयोग प्रचलन में ना होने के कारण अधिकतर टोरड़िया ही ऊँटनी के दूध का सेवन करता है। ऊँट पालक या तो दूध निकालते नहीं है अगर निकालते हैं तो केवल घरेलू उपयोग के लिए, ताकि ताजा निकला दूध ही इस्तेमाल में लिया जा सके।

गाय एवं भैंस के दूध की तुलना में ऊँटनी के दूध के गुणों को देखते हुए इस दूध का उपयोग बिना कुछ बदलाव लाए ही करने से अधिक उपयोगी माना गया है, इसलिए ऊँटनी के ताजा दूध का प्रयोग मुख्यतः निकालने के पश्चात कम समय के अंदर कर लेना चाहिए।

औषधि के रूप में दूध को इस्तेमाल करने के लिए उस दूध को शीत–शृँखला के माध्यम से भेजा जा सकता है। परन्तु –

1. संगठित अंचल ना होने
2. ऊँटो का घनत्व कम होने
3. मरुस्थल के गांवों का दूर–दूर होने

के कारण ऊँटनी के दूध के लिये शीत–शृँखला के विकास की आवश्यकता है, ताकि एकत्रित किया हुआ दूध गांव–ढाणी, शहर तक लाया–ले जाया जा सके।

क्योंकि निकाले हुए दूध की गुणवत्ता समय अनुसार प्रभावित होती है। इसलिए आवश्यक है कि स्वच्छ दूध का परिवहन अच्छी तरह से शीत–शृँखला के माध्यम से

सुनिश्चित किया जाए। दूध निकालने के पश्चात उसे शीत अवस्था में लाने के लिये रेफ्रीजरेशन की व्यवस्था होना आवश्यक है अन्यथा बर्फ से धातु के बर्तन में रखे दूध को ठंडा किया जा सकता है। दूध को कम तापमान पर पास्तुरीकृत भी किया जा सकता है ताकि उसे अधिक दूरी तक ले जाया जा सके।

आवश्यकता है बाजार में ऊँटनी के दूध की मांग बढ़ाने की, जिसके लिये दूध का उपलब्ध होना एवं प्रचार–प्रसार जरूरी है। यद्यपि बड़े शहरों में ऊँटनी के दूध की मांग निरंतर बढ़ रही है। ऊँटनी के दूध का व्यापार करने वालों की संख्या कम होने के कारण उपभोक्ताओं को अधिक मूल्य भी चुकाना पड़ रहा है। शीत–शृँखला बनाने के लिए अलग से संगठित प्रयास नहीं हो पा रहा है।

मरुस्थल में गांव दूर–दूर होने के कारण इस व्यवसाय को करने वालों की कम रूचि दिखाई पड़ती है। परन्तु कुछ स्थानों पर ऊँट पालकों में जागरूकता बढ़ी है एवं वे शीत शृँखला/प्रणाली इत्यादि की संभावनाओं को तलाशने लगे हैं। आशा है भावी समय में ऊँटनी के दूध का व्यवसाय करने वाले संगठित होकर इसे और आगे ले जायेंगे जिससे मानव स्वास्थ्य को इस औषधिक दूध का लाभ हो सकेगा। ऊँट पालकों को निरंतर आमदनी प्राप्त करने हेतु व्यवसाय मिलेगा व उल्टी गिनती से झूझती ऊँट प्रजाति विलुप्त होने से बचेगी।

"मेरे लिए हिंदी का प्रश्न स्वराज का प्रश्न है।"
- राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन

ऑटिज्म : एक इलाज योग्य शारीरिक बीमारी

प्रीतपाल सिंह
नेचुरोपैथ (बी.इन.वाई.एस.)
बाबा फरीद सेंटर फॉर स्पेशल चिल्ड्रन, लुधियाना, पंजाब

शादी की खुशियाँ अभी खत्म ही नहीं हुई कि नए मेहमान के आने की खबर से पूरा परिवार उत्साह से खिल जाता है। परिवार तरह–तरह के रीति–रिवाजो से खुशियां मनाता है। पहले 1 से 3 साल तक बच्चा सेहतमंद और किलकारियां मारता पूरे परिवार की खुशियों का खजाना बन जाता है। बच्चे का विकास सही ढंग से हो रहा होता है, पसंद और ना पसंद पर आधारित उसकी एक अलग पहचान बनने लगती है, फिर एकदम बीमार होने से या टीके लगने के पश्चात् बच्चा पीछे जाने लगता है। विकास की सीढ़ियों पर जो वह चढ़ चुका था, एक–एक करके वापिस गिरने लगता है और उसमें अजीब–अजीब सी अलामतें (लक्षण) आने लगती है। पूरा परिवार चिंता से घिर जाता है। माँ–बाप बच्चे को एक के बाद एक डॉक्टर के पास ले कर जाते है। पर अंत में उनको बताया जाता है कि उनका बच्चा ऑटिज्म का शिकार हो गया है। माँ–बाप पर दुखों का पहाड़ सा टूट पड़ता है। जब उनको बताया जाता है कि ऑटिज्म का कोई इलाज नहीं होता।

ऑटिज्म के 70–80 प्रतिशत बच्चों में यही कहानी होती है – इसको रिग्रेसिव ऑटिज्म का नाम दिया गया है। रिग्रेसिव ऑटिज्म के हजारों बच्चों में यही कहानी होती है। बच्चे ने सही जन्म लिया, जन्म के तुरंत बाद बी. सी. जी. और काले पीलिये– बी के टीके लगे, डी. पी. टी. और पोलियो की तीन खुराक 2 से 4 महीनों के अंतराल में दी गयी, 3 से 4 महीनों के अंतराल में जुखाम हुआ, छाती रुकी या कान से पीक आई, जिस के लिए एंटीबयोटिक दिया, फिर ऊपर वाला दूध दिया गया जिससे दस्त लगे उस लिए फिर एंटीबयोटिक दिया गया, श्वास प्रणाली और आँतों की इन्फेक्शन के लिए बार–बार एंटीबायोटिक दिए गए। 6 महीने की उम्र में बच्चे ने नरम खाना खाना शुरू कर दिया, खुश होकर खिलौना से खेलता, आँखों में आँखें डाल कर आपकी भावनाओं को जवाब देने की कोशिश करता, मामा–बाबा–पापा जैसे आसान अक्षर सीखता, उसका विकास सही चलता रहा। पहला जन्मदिन आते–आते इन्फेक्शन और एलर्जी और बढ़ गई और एंटीबायोटिक दिए गए, ऊपर वाला दूध एवं और खाने के बाद बार–बार दस्त लगने लगे। 12 व 15 महीनों के बीच एम. एम. आर. व ओर टीके लगे। माँ बाप ने देखा कि बच्चे को दस्त या कब्ज रहने लग गई।

15 व 8 महीनों में बच्चे ने मामा–बाबा–पापा जैसे शब्द बोलने बंद कर दिए। ऐसा लगने लगा जैसे वह बोला हो। नाम लेकर बुलाने पर ध्यान देना बंद कर दिया, किसी भी वस्तु पर ध्यान न देना आम बात हो गई। घूमने वाली वस्तु की तरफ लगाव ज्यादा बढ़ गया। आस–पास से बे–खबर व टूटा–टूटा रहने लगा। अपने आप में मस्त रहना आम हो गया। कई बच्चों में शरारतें, आराम से न बैठना ओर हाथ पैर हिलाते रहना आम होता है। श्वास प्रणाली और संक्रमण आँतों का (इन्फेक्शन) जारी रहती है। जिनको ठीक करने के लिए बार–बार एंटीबायोटिक दिए जाते हैं। डॉक्टरों द्वारा अक्सर ही माँ–बाप को बताया जाता है कि यह सब बचपन की समस्याएं हैं, बहुत बच्चे देर से बोलते हैं, इसलिए कोई चिंता की बात नहीं पर जब बच्चा लगातार विकास नहीं

ऑटिज्म से ग्रसित बच्चे का इलाज करता चिकित्सक

करता व अपने उम्र दराज बच्चों के मुकाबले बोलने, समझने ओर समाजीकरण में स्पष्ट रूप से पीछे रह जाता है तो माँ–बाप चिंतित हो जाते हैं। डॉक्टरों के पास जाने से पता लगता है कि वह ऑटिज्म से पीड़ित हैं। डॉक्टर माँ–बाप को बताते हैं कि इस बीमारी का कोई इलाज नहीं है। वह अलग–अलग तरह की ट्रेनिंग देने की सलाह देते हैं।

बच्चों के विशेषज्ञ डॉक्टर कहते हैं कि ऑटिज्म जन्म जात (जिनेटिक) बीमारी है। एलोपैथिक मेडिकल विज्ञान जन्म जात (जिनेटिक) बीमारी को लाईलाज बीमारी बताती है। वह कहते हैं कि ऑटिज्म से पीड़ित बच्चे का कोई इलाज नहीं किया जा सकता। ज्यादा से ज्यादा उसे ट्रेनिंग दी जा सकती है। उसके स्वभाव और वतिरे को नियमित करने के लिए रिसपेरीडोन या रिटालिन जैसी तेज दवाइयां दी जा सकती है। यह दवाइयां स्वभाव व वतिरे को कुछ हद तक कंट्रोल करती है पर लंबे समय में इनके दुष्प्रभाव सामने आने लगते हैं। कुछ बच्चों को तो यह शुरू से ही फिट नहीं बैठती।

दुनिया में सिर्फ कुछ सौ डॉक्टर हैं जो ऑटिज्म को लाईलाज बीमारी मानने से इंकार करते हैं। वह पूरे वैज्ञानिक सबूतों के आधार पर यह कह रहे हैं कि ऑटिज्म न तो जन्मजात बीमारी है और न ही मानसिक रोग। यह मुख्य रूप से बाकि बीमारियों की तरह बायो–कैमिकल बीमारी है। शरीर की रोगों से लडने की शक्ति का कमजोर होना, बार–बार विषाणु, बैक्टीरिया और फंगस आधारित इंफेक्शन होना, तरह–तरह की एलर्जी, ऑटो–इम्युनिटी की अलामतें और दस्त या कब्ज से लीकी गट होना आम बात है। इलाज से यह सब कुछ ठीक हो जाता है। स्पष्ट है ऑटिज्म के ये सभी लक्षण (अलामतें) इलाज योग्य है। सालों की खोजों और तजुर्बे के आधार पर इन डॉक्टरों ने यह नतीजा निकाला है कि मेडिकल जगत को ऑटिज्म को लाइलाज कहना मानने योग्य नहीं।

इन डॉक्टरों ने अपने प्रोफेशनल समूहें बनाए हुए हैं जो अलग–अलग तरीके से अपने तजुर्बे और खोजें बाँटने के लिए साल में एक बार मिलती हैं। उदाहरण के तौर पर ऑटिज्म रिसर्च इंस्टीट्युट (ऐ.आर.आई.), टाक अबाउट क्योरिंग ऑटिज्म (टी. ऐ. सी. ए.) और बाबा फरीद सेंटर फॉर स्पेशल चिल्ड्रन अदि। सालों से इकट्ठे काम करते–करते इन्होंने इलाज प्रणालियों के अनेक सुमेल बना लिए हैं। खुराकी तब्दीलियां, खुराकी तत्वों की कमी पूरी करने के लिए टॉनिक, गट– अलोरा (आँतों के अंदर दोस्त बैक्टीरिया) को मजबूत करना, शरीर में से भरी धातुएं और जहरीले तत्वों को बाहर निकालना, शरीर को तंदुरूस्त रखने के लिए जड़ी–बुटियों का इस्तेमाल करना, आडिटरी इंटीग्रेशन थेरेपी (ऐ. आई. टी.), नेचुरोपैथी, योग, क्रेनिओ सैक्रल थेरेपी, पंचकर्म और न्यूरोथेरेपी आदि। इलाज करने वाली यह प्रणालियाँ ट्रेनिंग प्रणालियों के साथ–साथ ही चलती है जैसे ऑक्यूपेशनल थेरेपी, स्पीच थेरेपी और स्पेशल एज्युकेशन आदि। इलाज की इन पद्वतियों/सुमेलों से हजारों बच्चों को बहुत अच्छे नतीजे मिल रहे हैं। नतीजे सोच से कहीं ज्यादा हैरान कर देने वाले हैं। बहुत सारे बच्चे चुपचाप और अपने आप में मस्त रहने वाले शख्स से अनेकों दोस्त बनाने वाले गप्पी शख्सियत में बदल जाते हैं। यह देखना बहुत खुशियों भरा होता है जब एक चार साल का पूरे दिन चिखे मारने वाला बच्चा आम बच्चे की तरह हँसता खेलता जिंदगी बिताने लगता है।

इलाज करने वाले डाक्टर के इलाज से इतना सुधार होना इस बात का सबूत है कि ऑटिज्म जन्मजात (जिनेटिक) नुक्स नही है। इन इलाज सुमेलों से डाउन सिंड्रोम (मांगोलिज्म) जैसे कुछ ओर जाने–पहचाने जन्मजात (जिनेटिक) नुक्स में भी आश्चर्यजनक सुधार होता है। आज वैज्ञानिक अदारों में जेनेटिक (जीनों का विज्ञानं) बनाम एपिजेनेटिक (जीनों के इर्द–गिर्द रहने वाले रसायनों का विज्ञान) की बहस बहुत गर्म है। जिसमें स्पष्ट सामने आया है कि जीन सिर्फ ''बन्दूक लोड'' करते हैं – घोडा तो वो जहरीले रसायन दबाता है जो जीनों के इर्द–गिर्द घुमते हैं।

ऑटिज्म से पीड़ित 10 में से 8 बच्चों में ऐसी अलामतों का 1–3 साल बाद शुरू होना भी यही साबित करता है कि ऑटिज्म जन्मजात रोग नहीं है बल्कि हवा–पानी–भोजन–दवाइयां–टीकों के अंदर जहर, ऑटिज्म में हो रही भयानक बढ़ोतरी के लिए जिम्मेवार है। जर्मन विज्ञानी डॉ. बलार्क बुश और दक्षिण अफ्रीका की विज्ञानी डॉ. केरिन समित की तरफ से बाबा फरीद सेंटर फॉर स्पेशल चिल्ड्रन के बच्चों ऊपर हुई खोजें भी यही दर्शाती हैं। इन खोजों में बच्चों के बालों और पेशाब के नमूनों में लेड, आर्सेनिक, निकल, एल्मुनियम, और यूरेनियम जैसी भरी धातुओं का स्तर बेहद ज्यादा पाया गया। अंतरराष्ट्रीय

स्तर के विज्ञानियों की यह खोजें अच्छे वैज्ञानिक रसालों में छप चुकी है।

वैज्ञानिक खोजों ने यह साबित कर दिया है कि एंटीबॉयोटिक्स की अँधाधुंध इस्तेमाल से हमारी आँतों में मित्र–बैक्टीरिया (गट फ्लोरा) मर जाता है। यह बैक्टीरिया हमारी सेहत के लिए बेहद जरुरी है। इनकी संख्या में कमी आना या इनकी अलग–अलग प्रजातियों का संतुलन ना रहना ऑटिज्म समेत अनेकों बीमारियों का कारण बनता है। यह साबित हो चुका है कि दिमाग और नाड़ी तंत्र के ठीक काम करने के लिए सेहतमंद गट फ्लोरा का होना बहुत जरुरी है और यह भी साबित हो चुका है कि दिमाग और नाड़ी तंत्र के ठीक काम करने के लिए जरूरतमंद रसायनों का 80 भाग आँतों में मौजूद दोस्त बैक्टीरिया बनाते हैं। इलाज नाल गट फ्लोरा को फिर से मजबूत बनाया जा सकता है।

ऑटिज्म में ऊँटनी के दूध की भूमिका

आटिज्म पीड़ित बच्चों के लिए यूरोप में इस वक्त बायो–मेडिकल प्रोटोकॉल सबसे ज्यादा अपनाया जाता है। जिसके अंदर पहला कदम डाइट प्लान होता है। डाइट प्लान के अंदर इन बच्चों के अंदर गाय या भैंस का दूध बंद कर दिया जाता है क्योंकि इन बच्चों का पाचन तंत्र बहुत कमजोर होता है जिसकी वजह से दूध में पाया जाने वाला केसिन प्रोटीन इसको पचाना बहुत मुश्किल होता है जिसका नतीजा ये मिस्फोल्ड प्रोटीन में तब्दील हो जाता है। ये मिस्फोल्ड प्रोटीन केसोमोर्फिन में तब्दील हो जाता है जिसकी वजह से बच्चे की अंदरूनी रसायनिक प्रक्रिया बदल जाती है और बच्चा चीड़चीडा, आंखे न मिलाना, हुडदंगी होने लगता है। इन बच्चों में जैसे ही दूध बंद किया जाता है वैसे ही बच्चे के पेशाब क अंदर केसोमोर्फिन की मात्रा जीरो हो जाती है, पर एशियन समाज में मांसाहारी खाना कम खाया जाता है। जिसका नतीजा ये होता है कि बच्चों में कुछ समय तक तो सुधार होता है लेकिन कुछ समय बाद बच्चों में शारीरिक कमजोरी होना, रक्त कण कमजोर होना, वजन कम होने लगता है या पूरी तरह से शारीरिक विकास में रुकावट आने लगती है। ऐसे में ऊँटनी का दूध इन बच्चों के लिए रामबाण साबित हुआ है क्योंकि इसमें मौजूद कैसिन रसायनिक तौर पर गाय के दूध से अलग होता है और ये आसानी से पच जाता है और इसमें मौजूद एन्टीऑक्सीडेंट प्रोटीन, माइक्रो–न्यूट्रेंटस की मात्रा अन्य मवेशियों के दूध से कहीं ज्यादा होती है जिसके कारण इन बच्चों में इम्युनिटी लेवल बढ़ जाता है और इन बच्चों में ये दूध देने के बाद तेजी से सुधार देखने को मिलता है। ध्यान रहे की ऊँटनी का दूध देने से पहले बच्चे को पूरी तरह से डाइट वे पौषणिक प्लान देना पड़ता है तभी ऊँटनी के दूध के सकारात्मक परिणाम देखने को मिलते हैं पर ये देखने में आया है कि पूरे विश्व में इस वक्त ऊँटनी का दूध इन बच्चों की विशेष डाइट का एक हिस्सा बन चुका है तथा इन बच्चों को ठीक करने में मदद मिल रही है।

उपरोक्त दलीलों से स्पष्ट है कि ऑटिज्म कोई जेनेटिक या मानसिक रोग नहीं बल्कि यह एक इलाज–योग्य शारीरक बीमारी है। भारत में यह पहल सबसे पहले पंजाब के फरीदकोट शहर में बाबा फरीद सेंटर फार स्पेशल चिल्ड्रन सेंटर में की गयी ऐसे बच्चों के लिए इलाज के लिए इसी तरह की इकाइयां अन्य शहरों में बठिंडा, पटियाला व हरियाणा के अम्बाला केंट में भी स्थापित की गयी हैं।

"मैं दुनिया की सभी भाषाओं की इज्जत करता हूं, परंतु मेरे देश में हिंदी की इज्जत न हो, यह हरगिज नहीं सह सकता।"
- आचार्य विनोवा भावे

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

ऊँट प्रजाति में दाँतों की संरचना

वेद प्रकाश, बसंती ज्योत्सना, वैज्ञानिक, राकेश रंजन, वरिष्ठ वैज्ञानिक,
रामेश्वर लाल व्यास, तकनीकी अधिकारी एवं नेमीचन्द बारासा, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

वयस्क ऊँट में साधारणतः 34 दाँत होते हैं। इनके दाँतों की संरचना की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है, ऊपरी जबड़े में इंसाइजर तथा दोनों जबड़ों में केनाइन दाँत की मौजूदगी। यह बनावट रोमन्थियों से भिन्न है और लामा के समान है।

ऊँट के दाँतों की संख्या तथा उसके निकलने के समय इत्यादि की मुख्य जानकारी का स्रोत मिस्र के शोधकर्ता रबागीलाटी के अनुसंधान कार्य है। उनके अनुसार ऊँट के दोनों जबड़ों में मौजूद अस्थायी प्रीमोलर कभी भी स्थायी प्रीमोलर से नहीं बदलता है। उसी प्रकार मोलर जो टस के समान होते हैं। उसका कोई अस्थायी प्रारुप नहीं होता है।

अरटीयोडक्टाइला समूह के सभी सदस्यों की तुलना में ऊँट में दाँतों की संरचना घटे हुए होते हैं। एक स्तनधारी (जिसका सूचक शूकर होता है) में 32 अस्थायी तथा 44 स्थायी दाँत होते हैं। ऊँट में कुछ दाँत अनुपस्थित होते हैं तो कुछ रूपान्तरित होते हैं जिसके कारण इसमें 22 अस्थायी तथा 34 स्थायी दाँत होते हं। मोलर दाँत सेलोनेडोन्ट होते हैं अर्थात् इसमें क्रीसेन्ट के आकार के रीज उनके क्राउन पर पाये जाते हैं।

अस्थायी दाँत/दूध के दाँत

ऊपरी जबड़ा

कार्नर इन्साइजर दाँत काफी रुपांतरित होता है। यह डेन्टल पैड से सिर्फ दिखता है और यह पूर्ण स्तनधारी के मुंह के कोने के इन्साइजर को दर्शाते हैं।

ऊपरी जबड़े में स्तनधारियों में मौजूद सेन्ट्रल एवं लैट्रल इनसाइजर ऊँट में कभी बाहर नहीं आते हैं। ऊँट के ऊपरी जबड़े में सेन्ट्रल इनसाइजर पूर्ण रूप से अनुपस्थित होते हैं तथा लेट्रल इनसाइजर एक मिलेट के दाने के समान होता है।

इनसाइजर दाँत प्रीमैक्सीलरी हड्डी पर स्थित होते हैं। कनाइन एवं प्रीमोलर दाँत सुपीरियार मैक्सीलरी हड्डी पर होता है। अस्थायी कनाइन दाँत छोटे, बल्ट तथा अंदर की तरफ केन्द्रित होते हैं। ये प्रायः रूटीमेन्ट्री होते हैं लेकिन इनकी जड़े लम्बी होती है। प्रथम प्रीमोलर एक एकल दाँत होता है। यह धारदार किनारों के साथ उगता है जो बाद में घिसकर सपाट हो जाता है तथा इसके दो उभार बन जाते हैं। यह भविष्य में स्थायी दांत में नहीं बदलते हैं। दूसरा प्रीमोलर दुगने आकार का जिसमें चिन्हित गर्दन नुमा भाग एवं तीन नुकीले तथा त्रिभुजाकार सतह होता है। इनामेल मुड़े हुए होते हैं जिसका आकार अक्षर 'बी' की तरह होता है।

दूसरो प्रोमोलर की उत्पत्ति पहले प्रीमोलर के निकलने के समय ही होता है। तीसरा प्रीमोलर बाद में निकलता है। तीसरा प्रीमोलर दूसरे प्रीमोलर से बड़ा होता है और उसकी सतह वर्गाकार होती है। परंतु इसकी गर्दन उतनी चिन्हित नहीं होती है। इसमें चार नुकीले भाग के होते हैं। इसमें भी इनामेल बी आकार में व्यवस्थित होते हैं।

निचला जबड़ा

तीन जोड़ी अस्थायी इनसाइजर उत्पत्ति के समय एक दूसरे पर चढ़े हुए होते हैं लेकिन धीरे–धीरे एक दूसरे से अलग हो जाते हैं। इनकी पूर्ण विकसित गर्दन होती है एक ओर जबड़े से 45^0 का कोण बनाते हैं।

सेन्ट्रल इंसाइजर सबसे बड़ा तथा सबसे पहले आता है। लेटरल इंसाइजर उसके बाद उगता है। कार्नर इंसाइजर सबसे अंत में आते हैं।

कनाइन जब उगते हैं, उस समय उसका आकार कार्नर इंसाइजर के समान होता है तथा उसके साथ लगा हुआ प्रतीत होता है। जैसे–जैसे जबड़े का विकास होता

है, कनाइन दाँत इंसाइजर दाँत से अलग हो जाते हैं और त्रिभुज का आकार ले लेते हैं। निचले जबड़े का कनाइन ऊपरी जबड़े की कनाइन की अपेक्षा अधिक विकसित होते हैं। निचले जबड़े में दो जोड़ी अस्थायी प्रीमोलर दाँत होता है। प्रथम जोड़ी या सामने क प्रीमोलर बहुत छोटे ग्राइन्डिंग (चबाने के दाँत होते हैं) जबकि दूसरा प्रीमोलर अस्थायी दाँतों में सबसे बड़ा होता है। प्रथम प्रीमोलर दूसरे प्रीमोलर से कुछ पूर्व उगता है और घिसने पर इसकी ऊपरी सतह ज्यादा चौड़ाकार न होकर लम्बाई में होती है। सामने का नुकीला भाग छोटा होता है।

दूसरी प्रीमोलर जोड़ी में एक मोलर दाँत के सभी गुण मौजूद होते हैं। उसकी क्राउन की तीन शाखाएं (भाग) होते हैं और इनामेल अक्षर बी के समान व्यवस्थित होता है। दाँत का गर्दननुमा भाग कम विकसित होता है और उसके दो बड़े नुकीले भाग होते हैं।

अस्थायी/दूध के दाँत का फार्मूला

$$22= \frac{1\text{-}1}{3\text{-}3} \quad \frac{1\text{-}1}{1\text{-}1} \quad \frac{3\text{-}3}{2\text{-}2}$$

ऊपरी जबड़ा
निचला जबड़ा

इनसाइजर कनाइनस प्रीमोलर

विभिन्न स्तरधारी समूहों के अस्थायी दन्त विन्यास की तुलनात्मक सारणी

प्रजाति	दन्त फार्मूला
सुयी फार्मस (शुकर)	$2X \frac{3\text{-}1\text{-}4}{3\text{-}1\text{-}4} = 32$
टायलोपोडा (उष्ट्र)	$2X \frac{1\text{-}1\text{-}3}{3\text{-}1\text{-}2} = 22$
रूमीनानसीया (भेड़)	$2X \frac{0\text{-}0\text{-}3}{4\text{-}0\text{-}3} = 20$
पेरीसोडकटाइला (घोड़ा)	$2X \frac{3\text{-}0\text{-}3}{3\text{-}0\text{-}3} = 24$

स्थायी दाँत की संरचना

स्थायी दाँतों की संख्या ऊँट में 34 होती है। इसका दन्त फार्मूला इस प्रकार होता है

$$34= \frac{1\text{-}1}{3\text{-}3} \quad \frac{1\text{-}1}{1\text{-}1} \quad \frac{3\text{-}3}{2\text{-}2} \quad \frac{3\text{-}3}{3\text{-}3}$$

इनसाइजर कनाइनस प्रीमोलर मोलर

ऊपरी जबड़ा

इसमें कोई सेंट्रल तथा व्यावहारिक रूप से कोई लैटरल इनसाइजर नहीं होता है। कार्नर इनसाइजर मौजूद होता है लेकिन यह बहुत रूपान्तरित होता है। नुकीला एवं थोड़ा पीछे मुड़े हुए होने के बजाय यह मोटा होता है। यह कुछ हद तक कनाइन दाँतों के जैसे दिखते हैं लेकिन इसका आकार काफी छोटा होता है। यह प्रायः टसेज की प्रथम जोड़ी के रूप में पुकारा जाता है।

कनाइन बड़े एवं विशाल थोड़ा आगे की ओर मुड़े हुए, 4 से.मी.तक लम्बाई के होते हैं। वे दोनों बाहरी किनारों से सकरा तथा आगे एवं पीछे से धारदार होते हैं। कनाईन में कोई गर्दननुमा भाग नहीं होता है और उसके नुकीले फैग्स बहुत बड़े होते हैं। कनाइन वृक्ष से प्राप्त मजबूत चारे को चीरने तथा लड़ाई के हथियार के रूप में खासकर नर में प्रयोग होता है।

ऊपरी जबड़े में तीन जोड़ी प्रीमोलर होता है। पहला जोड़ा सबसे अलग, और कनाइन दाँत से मिलता–जुलता होता है। यह निचले जबड़े के प्रीमोलर को नहीं छूता है। ये प्रायः काले रंग का होता है। मादाओं में यह कभी–कभी मौजूद नहीं होता है। दूसरी प्रीमोलर का घिसा हुआ भाग त्रिभुजाकार होता है और त्रिभुज का मुख्य भाग आगे की ओर होता है। इसकी गर्दननुमा भाग अच्छी तरह विकसित होता है। इसमें तीन नुकीले फैंग्स होते हैं। तीसरा प्रीमोलर दूसरे प्रीमोलर से बहुत बड़ा होता है। इसमें भी तीन नुकीले फैंग्स होते हैं। उसका ऊपरी सतह अर्ध वृत्ताकार व चाँदनुमा (गोलाकार) होता है जो घिसकर त्रिभुजाकार हो जाता है।

ऊपरी जबड़े में तीन जोड़ी स्थायी मोलर दाँत होते हैं और यह प्रीमोलर के तुरंत पीछे या कुछ दूरी पर मौजूद होता है। सभी सच्चे मोलर डबल दाँत होते हैं और उसका आकार पहले से तीसरे की ओर बढ़ता जाता है। पहला मोलर अंतिम प्रीमोलर से दुगने आकार का होता है। सभी

मोलर दाँत जब नये होते हैं तो लम्बे ज्यादा और चोड़े कम होते हैं पर उपयोग के साथ पहले जोड़ी की सतह का आकार वर्गाकार हो जाता है। सभी मोलर दाँत के चार फैंग्स होते हैं। तीसरी जोड़ी की मोलर के फैंग्स नीचले हिस्से में चौड़ाकार होता है। तीसरा मोलर पिरामिड के आकार के समान दिखता है। तीसरे जोड़ी में गर्दननुमा भाग अनुपस्थित होता हैं और दूसरी जोड़ी मोलर से बहुत भिन्न नहीं होता है। सभी मोलर के ईनामेल अंग्रेजी के 'बी' (B) आकार में व्यवस्थित होते हैं।

प्रीमोलर ऊपरी जबड़े से गिरते नहीं है। ऐसी स्थिति में वे स्थायी प्रथम एवं द्वितीय प्रीमोलर के बीच में स्थित होते हैं।

निचले जबड़े के स्थायी दाँत

जब अस्थायी दाँतों के जगह स्थायी इंनसाइजर उगते हैं तो वे एक दूसरे पर चढ़े हुए होते हैं। घिसने पर वे एक दूसर से अलग हो जाते हैं और अंत में सिर्फ अवशेष जैसे स्टम्प के रूप में रह जाते हैं। सेन्ट्रल इनसाइजर चौड़ा एवं पत्तीनुमा आकार के होते हैं जिसके किनारे धारीनुमा एवं धारदार होते हैं। आगे से देखने पर ऊपर से नीचे और किनारों से कनवेक्स दिखते हैं। काटने वाले किनारे अंदर की तरफ ऊँचे होते हैं। लेटरल इनसाइजर सेन्ट्रल इनसाइजर के समान होता हैं पर ज्यादा कनवेक्स, छोटी तथा बहुत चिन्हित गर्दननुमा भाग होता है। कार्नर इनसाइजर छोटा होता है। जिसका गर्दननुमा भाग बहुत चिन्हित होता है और सभी इनसाइजर में सबसे कम कनवेक्स होता है। निचले जबड़े का एक जोड़ा कनाइन ऊपरी जोड़ों के कनाइन की अपेक्षा छोटा एवं मोटा होता है। इसके फैंग्स छोटे होते हैं। इसे ऊँट पालक भर देते हैं या काट देते हैं।

निचले जबड़े में दो जोड़ा प्रीमोलर होता है। पहला प्रीमोलर को अक्सर टसेज कहा जाता है। वे ऊपरी जबड़े के कनाइन की अपेक्षा काले, चौड़े एवं छोटे होते हैं। कभी कभी वे दो भी होते हैं या मादाओं में अनुपस्थित भी होते हैं। दूसरा प्रीमोलर एक एकल दाँत होता है जिसके दो फैंग्स होते हैं। जबकि ऊपरी जबड़े के प्रीमोलर में तीन फैंग्स होते हैं।

निचले जबड़े का मोलर का पहला जोड़ा सभी मोलर दाँतों (ऊपरी एवं निचले जबड़ों) में सबसे छोटा होता है। वे सामने से पीछे की ओर बहुत लम्बे होते हैं और घिसने के बाद भी वर्गाकार नहीं होते हैं। इसका गर्दननुमा भाग स्पष्ट होता है। इसमें सिर्फ दो नुकीले भाग होते हैं। दूसरा मोलर पहले मोलर से बड़ा होता है लेकिन अपने समान स्थानी ऊपरी जबड़े के मोलर से छोटा होता है। यह लम्बा होता है। लेकिन इसका गर्दननुमा भाग कम विकसित होता है। इसके सिर्फ दो नुकीले भाग (फैंग्स) होते हैं। तीसरा मोलर सभी दाँतों से बड़ा होता है। क्राउन तीन भागों में बंटा होता है। यह काफी संकरा होता है और इसमें कोई गर्दननुमा भाग नहीं होता है। इसके तीन नुकीले भाग (फैंग्स) होते हैं। सभी मोलर के इनामेल विशिष्ट बी आकार के होते हैं।

स्थायी दाँतों का विभिन्न प्राणियों में फार्मूला

प्रजाति	दन्त फार्मूला
सुयी फार्मस (शुकर)	$2X \frac{3\text{-}1\text{-}4\text{-}3}{3\text{-}1\text{-}4\text{-}3} = 44$
टायलोपोडा (उष्ट्र)	$2X \frac{1\text{-}1\text{-}3\text{-}3}{3\text{-}1\text{-}2\text{-}3} = 34$
रूमीनानसीया (भेड़)	$2X \frac{0\text{-}0\text{-}3\text{-}3}{4\text{-}0\text{-}3\text{-}3} = 32$
पेरीसोडकटाइला (घोड़ा)	$2X \frac{3\text{-}0\text{-}3/4\text{-}3}{3\text{-}0\text{-}3\text{-}3} = 40\text{-}42$

दाँतों के उगने का क्रम (पैटर्न) एवं एजिंग (आयु) का संबंध

सबसे पहले उगने वाला स्थायी दाँत ऊपरी एवं निचले जबड़े का प्रथम मोलर होता है जो 12–15 माह की आयु पर निकलता है। जब तक ऊँट की उम्र 2.5 साल तक होती है तब तक कोई और स्थायी दाँत नहीं निकलते हैं। ऊपरी जबड़े की अस्थायी कार्नर इंसाइजर मुंह का सबसे कमजोर दाँत होता है और प्रायः जब तक ऊँट एक साल का होता है यह दाँत गिर/घिस जाता है। ऊपरी जबड़े की अस्थायी कनाइन दाँत तब तक मौजूद रहता है जब तक स्थायी दाँत निकल नहीं जाते हैं। ऊपरी जबड़े की अस्थायी कनाइन 6–7 साल तक अन्य दाँतों के साथ मुंह में मौजूद रहते हैं। दूसरा अस्थायी प्रीमोलर साधारतया 3 साल की उम्र पर स्थायी दाँत के उगने से पहले खत्म हो जाता हैं। तीसरा अस्थायी प्रीमोलर भी ठीक उसी समय खत्म होता

है। निचले जबड़े की अस्थायी इन्साइजर अच्छे विकसित होते हैं और एक साल की उम्र पर घिसने की अवस्था में होते हैं। दो साल की उम्र पर घिस जाते हैं और एक दूसरे से अलग हो जाते हैं। तीन साल की आयु पर और अच्छी तरह घिस जाते हैं। चार साल की आयु पर और घिस कर, खंडित एवं ढीला हो जाता हैं या घट कर सिर्फ अवशेष मात्र रह जाता है।

सेन्ट्रल अस्थायी इंसाइजर 4 साल तक, लैटरल 5 से 5.5 साल तक तथा कार्नर 6 से 6.5 साल तक मौजूद रहता है। लेकिन स्थायी दाँतों के उगने से पहले समाप्त हो जाते हैं। सभी इंसाइजर का स्थापन्न (रिप्लेसमेंट) पीछे से होता है। निचले जबड़े की अस्थायी कनाइन दाँत 6 साल से ज्यादा तक मौजूद रहते हैं तथा अपने जीवनकाल के अंतिम समय तक भी बहुत ज्यादा नहीं घिसते हैं। निचले जबड़े का अस्थायी प्रीमोलर 4.5 साल तक मौजूद रहता है और ये स्थायी दाँत से नहीं बदलते हैं। निचले जबड़े की दूसरी प्रीमोलर 5.5 साल तक मौजूद रहते हैं। आठ साल की उम्र पर सभी स्थायी दाँत यहां तक की सबसे अंतिम में निकले हुए निचले जबड़े का कार्नर इंसाइजर, घिसने की स्थिति में होते हैं। आठ साल की आयु में प्रीमोलर की पहली जोड़ी अपना पूर्ण आकार ले लेती है। टारटर के जमा होने से यह बहुत काला दिखता है। वास्तविक कनाइन बहुत लम्बे एवं मजबूत होते हैं। मादाओं में वास्तविक या नकली टसेज (कनाइन) उतने उभरे नहीं होते हैं और प्रथम प्रीमोलर भी मौजूद नहीं होता है।

9 साल के बाद से सभी दाँत कमोवेश घिस जाते हैं। इस समय ऊँटों की सही उम्र अच्छी जानकारी एवं अनुभव के आधार पर ही ज्ञात किया जा सकता है।

दाँतों की घिसने की दर अन्य जानवरों की तरह ऊँटों में भी आहार तथा अन्य कारकों से प्रभावित होता है। इनसाइजर दाँत एक दूसरे से अलग 15 साल की आयु तक नहीं होते हैं। उसके बाद ही इनसाइजर के बीच में खाली जगह बनना शुरू होता है। अगर ऊँटों को प्राकृतिक सख्त चारे से गुजारा करना पड़ता है तो 15 साल के बाद उसका उपयोगी जीवन सीमित हो जाता है।

ऊँटों की उम्र का पता दाँतों के आधार पर करने में सबसे बड़ी दिक्कत है यह है कि 4.5 से 5.5 साल की आयु तक सभी अस्थायी (दूध के दाँत) बुरी तरह से घिस जाते हैं। हालांकि अस्थायी दाँत स्थायी दाँतों की तुलना में हमेशा छोटे होते हैं, इसलिए अनुभवी लोगों को दाँत के आधार पर उम्र का आकलन करने में कोई दिक्कत नहीं होती है। साधारण शारीरिक बनावट एवं स्थिति भी ऊँट की उम्र ज्ञात करने में मदद करते हैं।

ऊँट के दांतों की संरचना

ऊँट 40 साल की आयु तक जिन्दा रह सकता है। लेकिन उनका उपयोगी उत्पादक जीवन खासकर के यातायात एवं माल ढुलाई के लिए 6 से 15–20 साल तक ही सीमित होता है। 6 साल की उम्र से पहले वे अपरिपक्व होते हैं और अस्थायी से स्थायी दाँतों के बदलाव के मुश्किल दौर से गुजर रहे होते हैं। 20 साल की आयु के बाद उनके घिसे हुए दाँत एवं बढ़ती शारीरिक दुर्बलता उसकी उपयोगिता को सीमित कर देते हैं।

"मैं हिन्दी के प्रचार, राष्ट्रभाषा के प्रचार को राष्ट्रीयता का मुख्य अंग मानता हूँ।"
- डॉ. राजेन्द्र प्रसाद

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

ऊँटों में क्षय रोग (टी.बी.) : लक्षण, बचाव व निदान

शिरीष नारनवरे, वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

क्षय रोग (टी.बी.) ऊँट, गाय, भैंस, भेड़, बकरी, घोड़ा, कुत्ता, बिल्ली, मनुष्य, जंगली पशु, पक्षियों इत्यादि में पाई जाने वाली एक बहुत पुरानी तथा प्रमुख जीवाणु जनित संक्रामक बीमारी है। इस रोग में फेफड़ें विशेष रूप से प्रभावित होतें हैं। यह बीमारी सामान्यतः मनुष्यों में मायकोबैक्टेरियम ट्यूबरकुलोसिस तथा पशुओं में मायकोबैक्टेरियम बोविस जीवाणुओं से होती है। हालाँकि मायकोबैक्टेरियम बोविस के जीवाणु मनुष्यों में भी बीमारी करते हैं व ऐसे ही मायकोबैक्टेरियम ट्यूबरकुलोसिस के जीवाणु पशुओं में भी बीमारी उत्पन्न कर सकते हैं। ये जीवाणु काफी प्रतिरोधक होते हैं व मिट्टी, गोबर तथा पानी में और जहाँ पर सूर्यप्रकाश न पहुँच पाता हो, ऐसे व गीली जगहों में लंबे समय (लगभग 1 से 2 सप्ताह) तक जीवित रह सकते हैं। हालाँकि सूखे, गरम स्थानों व जहाँ पर सूर्य की तेज रोशनी पड़ती हो, ऐसी जगहों पर यह जीवाणु ज्यादा समय तक जीवित नहीं रह पाते। भारत मे क्षय रोग के मरीजों की संख्या काफी अधिक है व हर रोज कोई–न–कोई स्वस्थ्य व्यक्ति इस बीमारी से संक्रमित हो रहा है। इस रोग के प्रसार में जानवरों से होने वाला क्षय रोग एक महत्वपूर्ण कारण है, इसलिए ऊँट पालक को न केवल ऊँट बल्कि स्वयं को भी क्षय रोग से बचाना अत्यंत जरुरी है।

ऊँटों में क्षय रोग का प्रसार

- इस रोग का प्रसार स्वस्थ ऊँटों में क्षय रोग से ग्रसित ऊँट अथवा अन्य जानवरों के संपर्क में आने से होता है। साधारणतः रोगग्रस्त जानवर के कफ/बलगम, छींक, नाक से निकलने वाले स्त्राव, श्वास, गोबर, मूत्र, दूध, रक्त तथा कभी–कभी वीर्य में क्षय रोग के जीवाणु मौजूद होते हैं व स्वस्थ ऊँटों में यह हवा के द्वारा साँस लेने पर अथवा जीवाणुओं से संक्रमित दूध के सेवन अथवा संक्रमित चारे व पानी के सेवन द्वारा हो सकता है।
- अनुसंधानों से ऐसा पाया गया है कि श्वास द्वारा संक्रमण के लिए इस जीवाणु की बहुत कम मात्रा भी काफी होती है, जबकि खान–पान से अथवा मुख द्वारा संक्रमण के लिए बहुत अधिक मात्रा में इन जीवाणुओं की संख्या होनी चाहिए। इसलिए संक्रमित दूध पीने वाले टोरडियों को छोड़कर अन्य पशुओं व मनुष्यों में इस बीमारी के खान–पान द्वारा प्रसारण की संभावना कम होती हैं।
- कमजोर ऊँटों व जिनमें पौष्टिक आहार की कमी हो, उनमें यह रोग होने की संभावना अधिक होती है। साथ ही अधिक भीड़–भाड़ व गन्दगी वाले स्थानों पर रहने वाले पशुओं में संक्रमण होने का खतरा थोड़ा ज्यादा रहता है।
- जिन पशुओं में रोग प्रतिकार क्षमता कम होती हैं, जैसे नवजात बछड़े अथवा बूढ़े ऊँट अथवा ब्याने के बाद आई शरीर में कमजोरी अथवा कोई अन्य रोग का संक्रमण जैसे सर्रा (तिबरसा) इत्यादि उनमें यह रोग होने का खतरा ज्यादा रहता है।
- क्षय रोग से ग्रसित पशु का दूध निकालने के बाद यदि बिना हाथ धोए वही व्यक्ति दूसरे पशु का दूध निकालता है तो इससे भी दूसरे पशु के थनों में क्षय रोग से संक्रमण का खतरा रहता है। क्षय रोग से ग्रसित ऊँट व अन्य स्वस्थ ऊँट यदि एक ही स्थान से पानी पीते है तो भी संक्रमित ऊँट के लार अथवा थूक द्वारा स्वस्थ ऊँटों में संक्रमण होने का खतरा होता है। गर्भकाल मे संक्रमण होने पर गर्भ में पल रहे भ्रूण को भी संक्रमण का खतरा रहता है जिससे नवजात क्षय रोग से ग्रस्त पैदा हो सकता है।

- प्रजनन के दौरान संक्रमित वीर्य से भी इस रोग का प्रसार ऊँट से ऊँटनियों में हो सकता है। रोग ग्रस्त ऊँट का दूध पीने से नवजात बछड़ों में क्षय रोग होने की संभावना रहती है। जिन ऊँटों में ट्यूबरकूलर मस्टायटीस (थनैला) होती है, उनके दूध में भारी संख्या में जीवाणु मौजूद रहते हैं व ऐसे दूध के सेवन से बड़े पैमाने पर क्षय रोग फैल सकता है। अनुसंधानों द्वारा यह पाया गया है कि क्षय रोग के प्रसार में कुछ जंगली जानवरों (जैसे हिरन, नीलगाय, बायसन इत्यादि) का महत्वपूर्ण योगदान होता है तथा यदि एक ही चरागाह में यह जानवर व पालतू पशु चरते हैं या एक ही स्थान से पानी पीते हैं तो ऐसे में पालतू पशुओं में क्षय रोग का प्रसार होने की संभावना हो सकती है।
- क्षय रोग से ग्रसित मनुष्य के मल, थूक या कफ, ऊँटों के चारे या पानी के संपर्क में आने पर यदि इसका सेवन ऊँटों द्वारा किया जाए तो भी इस रोग का संक्रमण हो सकता है।

क्षय रोग के लक्षण

- इस रोग में लक्षण काफी समय बाद व धीरे–धीरे प्रकट होते हैं तथा कई बार लक्षणों का पता ही नहीं चल पाता।
- ऐसा भी हो सकता है कि संक्रमित ऊँटों में इस रोग के कोई संकेत न दिखे जब तक कि संक्रमण बहुत उन्नत न हो चुका हो क्योंकि क्षय रोग के प्रारंभिक संक्रमण से नैदानिक लक्षणों के विकास तक कई महीने या साल भी लग सकते हैं।
- ऐसे ऊँट जिनमें क्षय रोग के जीवाणु तो पाए जाते हैं लेकिन वे इस रोग के लक्षण प्रकट नहीं करते, क्षय रोग के अव्यक्त रूप से ग्रसित होते है। ऐसे ऊँट इस रोग को नहीं फैलाते क्योंकि इनमें क्षय रोग के जीवाणु सक्रिय नहीं होते परन्तु किसी कारणवश (जैसे रोग प्रतिरोधक क्षमता का कम होना इत्यादि) यदि ये जीवाणु सक्रिय हो जाए तो ऐसे ऊँट भी इस रोग के प्रसारण में सक्रिय भूमिका निभा सकते हैं।
- इस बीमारी में रोग ग्रस्त ऊँट में कई दिनों तक रहने वाला हल्का बुखार, खान–पान में कमी तथा कमजोरी जैसे लक्षण दिखाई देते है, यह लक्षण कई महीनों अथवा सालो तक रह सकते हैं (चित्र क्र. 1)। प्रतिजैविक दवा देने से भी ऊँट की हालत मे सुधार नहीं होता। साथ ही खांसी, श्वास लेने में तकलीफ व श्वास लेने की गति में वृद्धि जैसे लक्षण दिखाई देते है व अंततः ऊँट की मृत्यु हो जाती है।

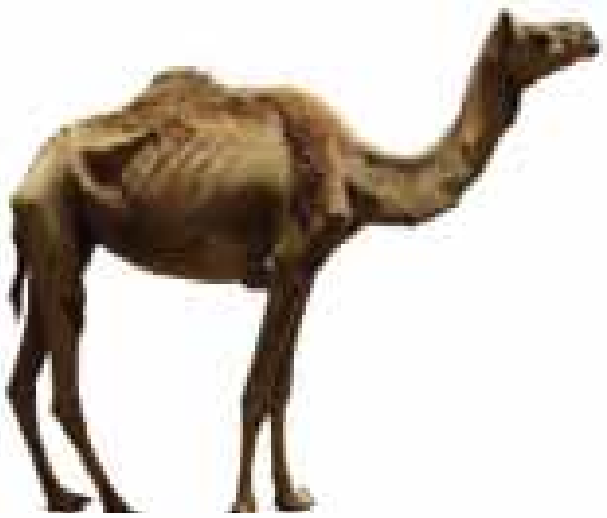

चित्र 1. टी.बी. रोग से ग्रस्त अत्यधिक कमजोर ऊँट

- पौष्टिक आहार के बावजूद रोगग्रस्त ऊँट का वजन धीर–धीरे कम होता जाता है, व उसमें कमजोरी आ जाती है। कुछ ऊँटो मे बाह्य लसीका ग्रंथियों (लिम्फ नोड्स) मे सूजन आ जाती है। जिससे उनके आकार में वृद्धि होती है। जब थनों में यह रोग होता है तो मादा ऊँट के थनों में सूजन व छोटी–छोटी गांठे बन जाती है, दूध उत्पादन कम हो जाता है, दूध में सफेद चीचड़ आते हैं तथा बाद मे दूध का रंग हरा–पीला हो जाता है। अंततः दूध के स्थान पर पानी जैसा स्राव आता है। ऐसा दूध बछड़ों तथा मनुष्यों के लिए बेहद खतरनाक होता है। गंभीर रूप से बीमार ऊँटो में आँखों से निरंतर पानी बहना व खड़े होने मे असमर्थता जैसे लक्षण मृत्यु पूर्व दिखाई देते हैं। आहार तंत्र में यह रोग होने पर पेट में दर्द रहता है, जबरदस्त दस्त लगते हैं, कई दिनों तक हल्का पेट फूला रहता है तथा पशु काफी कमजोर हो जाता है। गोबर के ऊपर चिकनी म्युकस लिपटी रहती है। गोबर से मवाद तथा रक्त के कण भी आ सकते हैं। दस्त के बाद बराबर कब्ज

बनी रहती है। गर्भाशय में क्षय रोग होने पर योनी से मवाद बाहर निकलती है जिसमें रक्त मिला होता है। इसमें गर्भपात भी हो सकता है। नर पशु के अन्डकोशों में सूजन आ जाती है और अंत में मवाद पड़ जाती है। केंद्रीय तंत्रिका तंत्र प्रभावित होने पर आँख की ज्योति कम या बिलकुल बंद हो जाती है, चलने में लड़खड़ापन होता है व मिर्गी जैसे दौरे पड़ते हैं।

निदान

- इस रोग का निदान केवल लक्षणों के आधार पर करना मुश्किल है क्योंकि इसके लक्षण अन्य संक्रामक बीमारियों से काफी मेल खाते हैं।
- जीवित ऊँटों में क्षय रोग का निदान बहुत मुश्किल होता हैं क्योंकि कोई भी परीक्षण निश्चित रूप से इस रोग का निदान नहीं कर सकता हैं। बड़े पैमाने पर जीवित पशुओं में क्षय रोग के निदान के लिए अभी तक केवल ट्यूबरकुलीन टेस्ट ही ऐसा परीक्षण है जो कि उपयोग में लाया जाता है। किन्तु इस परीक्षण में सटीकता व विशिष्टता की कमी है जिसके कारण इसके नतीजे 100 प्रतिशत सही नहीं पाए गए हैं। ट्यूबरकुलीन टेस्ट में गर्दन की त्वचा में (इंट्राडर्मल) एक छोटे से भाग पर 0.1 मि.ली. सिंथेटिक बोवाईन ट्यूबरकुलीन का इंजेक्शन लगाया जाता है। इंजेक्शन लगाने से पहले त्वचा की मोटाई नापी जाती है। इंजेक्शन लगाने के 72 घंटे पश्चात पुनः त्वचा की मोटाई नापी जाती है। रोगी पशु में 72 घंटे बाद इंजेक्शन वाली जगह पर त्वचा की मोटाई पहले से दुगुनी हो जाती है अथवा 4 से 5 मि. मी. या इससे बड़ी गांठ बन जाती है जिसमे सूजन तथा दर्द भी हो सकता है। ऐसा पाया गया है कि लंबे समय से व गंभीर रूप से बीमार पशुओं में तथा नवीनतम ब्याही मादाओं में यह टेस्ट नकारात्मक आने की संभावना हो सकती है।
- दोहरे इंट्राडर्मल ट्यूबरकुलीन टेस्ट का उपयोग मायकोबैक्टेरियम बोविस जीवाणुओ से होने वाले व अन्य वातावरणीय मायकोबैक्टेरियम जीवाणुओ से होने वाले सकारात्मक नतीजों को अलग करने के लिए किया जाता है। इसमें गर्दन के एक ही भाग में अलग–अलग जगह पर (लगभग 10 से 15 से.मी. की दूरी पर) 0.1 मि.ली. सिंथेटिक बोवाईन ट्यूबरकुलीन इंजेक्शन व एवियन ट्यूबरकुलीन इंजेक्शन लगाया जाता है व 72 घंटे पश्चात त्वचा की मोटाई नापी जाती है।
- थूक, नाक के स्त्राव, दूध, गोबर इत्यादि की सूक्ष्मदर्शी द्वारा प्रयोगशाला जाँच भी की जा सकती है, जिसमें इन स्त्रावों का स्मीअर बनाकर उसे एसीड फास्ट स्टेन तकनीक से अभिरंजित किया जाता है। क्षय रोग के जीवाणु इस स्टेन में गहरे लाल अथवा गुलाबी रंग के दिखाई देते हैं जो कि छड़ी के आकार के होते हैं (चित्र क्र. 2), अन्य जीवाणु नीले रंग के दिखाई देते है। यह परीक्षण भी ज्यादा कारगर नहीं है, क्योंकि इन स्त्रावों में जीवाणु तभी दिखाई देते हैं जब वे बहुत अधिक मात्रा में हो या रोगग्रस्त ऊँट में संक्रमण की मात्रा बहुत अधिक हो।

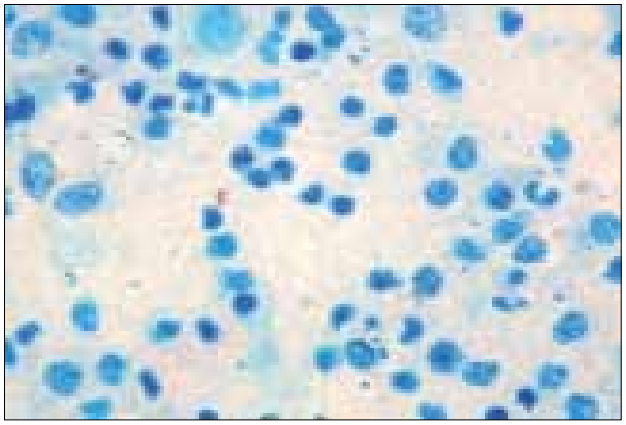

चित्र 2. एसिड फास्ट स्टेन तकनीक द्वारा दिखाई देने वाले गुलाबी रंग के क्षय रोग के जीवाणु

- प्रयोगशाला में कृत्रिम जीवाणु संवर्धन से भी इस रोग का निदान किया जा सकता है। इसमें रोगग्रस्त ऊँट के विभिन्न स्त्रावों जैसे दूध, थूक, गोबर, रक्त इत्यादि से प्रयोगशाला में कृत्रिम मीडिया पर जीवाणुओं का संवर्धन किया जाता है। क्षय रोग के जीवाणु कृत्रिम मीडिया पर बहुत धीरे–धीरे बढ़ते हैं व साधारणतः इनको बढ़ने के लिए 2 से 6 सप्ताह तक का समय लग सकता है। यह कृत्रिम मीडिया में उठावदार, चिकने व हल्के पीले रंग के होते हैं।

नाभिकीय तकनीक द्वारा निदान – इसमें रोगग्रस्त पशु के विभिन्न स्त्रावों (जैसे दूध, रक्त, थूक इत्यादि) से डी.एन.ए. निकाला जाता है व पी.सी.आर. तकनीक द्वारा क्षय रोग का निदान किया जाता है। यह तकनीक जीवाणु संवर्धन से काफी तेज है व इसमें सटीकता भी अधिक है किन्तु यह परीक्षण विधि बाकी विधियों से अधिक महँगी है, साथ ही इसके लिए प्रयोगशाला में आधुनिक उपकरणों व विशिष्ट रसायनों की जरूरत होती है। इसलिए रोजमर्रा के निदानों में अभी इस तकनीक का उपयोग संभव नहीं हो पाया है।

शव–परीक्षण द्वारा निदान – क्षय रोग से ग्रसित ऊँट का शव परीक्षण करने पर फेफडों में सफेद–पिली कठोर गाँठे (ग्रेनुलोमा) दिखाई देती हैं (चित्र क्र. 3)। कभी–कभी इनमें मवाद भी हो सकता है। यह गाँठे दीर्घकालीन रोगग्रस्त ऊँटों में अन्य अंगों जैसे यकृत, प्लीहा, हृदय, गुर्दे, गर्भाशय, आँत व मस्तिष्क मे भी पाई जा सकती है। इन गांठों में एसीड फास्ट स्टेन तकनीक द्वारा स्मीअर परीक्षण से क्षय रोग के जीवाणु आसानी से देखे जा सकते हैं।

चित्र 3. क्षय रोग से ग्रसित ऊँट के फेफड़ों पर पाई गयी कठोर सफेद गाँठे (ग्रेनुलोमा)

उपचार

इस रोग का उपचार काफी लंबा व खर्चीला है व इसमें ठीक होने की संभावना भी काफी कम होती है। इसलिए क्षय रोग से ग्रस्त ऊँटो को पशुचिकित्सक की सहायता से मानवीय तरीकों से नष्ट करने का प्रयास करना चाहिए जिससे कि इस रोग के जीवाणु अन्य स्वस्थ ऊँटों व मनुष्यों में संक्रमण न कर पाएं। क्षय रोग से ग्रस्त ऊँट के शव को भी या तो जला दें या जमीन में गहराई में दफन कर दें ताकि आवारा कुत्ते संक्रमित शव बाहर न निकाल पाएं तथा यह बीमारी अन्य स्वस्थ ऊँटों व मनुष्यों मे न फैल पाए। भारत में नैतिक, धार्मिक व आर्थिक कारणों से रोगग्रस्त पशु का वध करना मुश्किल है, इसलिए इस रोग की पूर्ण रुप से रोकथाम संभव नहीं हो पा रही है।

बचाव

मवेशियों में होने वाले क्षय रोग के विरूद्ध टीका विकसित किया जा चुका है, किन्तु यह अब तक प्रचलन में नहीं आ पाया है क्योंकि इससे क्षय रोग से संक्रमित पशु की ट्यूबरकुलीन अथवा प्रतिरक्षा प्रणाली पर आधारित टेस्ट द्वारा पहचान करने में अवरोध उत्पन्न होता है।

कुछ विकसित देशों में ट्यूबरकुलिन परीक्षण द्वारा सकारात्मक परिणाम वाले मवेशियों को मानवीय तरीकों से नष्ट करने से इस रोग को कुछ हद तक खत्म करने में सफलता प्राप्त हुई है, किन्तु यह तरीका भारत तथा अन्य विकासशील देशों में सामाजिक व आर्थिक कारणों से अपनाना संभव नहीं है।

यदि किसी ऊँट में क्षय रोग जैसे लक्षण (जैसे लंबे समय से बुखार, खाँसी, कमजोरी) दिखाई दें तो उसकी ट्यूबरकुलीन जाँच अवश्य करनी चाहिए। यदि क्षय रोग की पुष्टि हो जाए तो ऐसे ऊँट को तुरंत अन्य स्वस्थ ऊँटों से दूर रखें व पशु चिकित्सक के मार्गदर्शन से उसके रखरखाव के बारे में निर्णय लें, अन्यथा इस बीमारी के जीवाणु ऊँटों का रखरखाव करने वाले व ऐसे पशुओं का दूध सेवन करने वाले मनुष्यों में फैल सकते हैं। इस सम्बन्ध में राज्य स्तर के पशुचिकित्सालय अथवा किसी उपयुक्त स्वास्थ्य सम्बन्धी एजेंसी को भी जरुर सूचित करना चाहिए।

ऊँट पालकों द्वारा ऊँट प्रायः झुण्ड में ही रखे जाते हैं व सही समय पर संक्रमित ऊँट को यदि अलग न किया जाए तो इस रोग का प्रसार अन्य स्वस्थ ऊँटों में होने की संभावना रहती है। इसलिए संक्रमित ऊँट को भीड़–भाड़ वाले स्थानों जैसे पशु मेला, बाजार इत्यादि में न ले जाए व ऐसे ऊँट को बाकी ऊँटों से अलग से चारा व पानी दें।

चूँकि इस रोग के जीवाणु संक्रमित पशु के गोबर में भी मौजूद रहते हैं, इसलिए पशुओं के बाड़ों में स्वच्छता का

विशेष ध्यान रखें। बाड़ों में गोबर, मल–मूत्र इत्यादि ज्यादा समय तक इकट्ठा न होने दें व इसे बाड़ों से दूर ऐसी जगह फिकवाएं जहाँ पर पशु न पहुंच पाते हों।

कच्चे दूध का सेवन कभी भी न करें व दूध को हमेशा अच्छे से उबालकर ही पिएं ताकि न केवल क्षय रोग बल्कि अन्य रोग के जीवाणु (ब्रसेल्ला इत्यादि) अथवा विषाणु भी मर जाएं। दूध से तैयार होने वाले अन्य उत्पादों जैसे दही, लस्सी, आइसक्रीम इत्यादि को बनाने के लिए भी हमेशा उबले हुए अथवा पास्तुरीकृत दूध का ही इस्तेमाल करें।

नए पशु जहाँ तक हो सके किसी सरकारी अथवा जानकार स्त्रोत से ही खरीदने चाहिए, जिसमें कभी क्षय रोग संक्रमण का पूर्व इतिहास न हो। नए पशु को खरीदने के पश्चात और यदि संभव हो तो खरीदने से पहले क्षय रोग के लिए ट्यूबरकुलीन जाँच अवश्य करनी चाहिए व जब तक इस टेस्ट के नतीजे नहीं आते तब तक नए पशु को टोले के बाकि पशुओं से अलग ही रखें। साथ ही पशुपालक को अपने टोले के सभी ऊँटों की भी नियमित अंतराल में (लगभग 6 महीने में एक बार) पशुचिकित्सक की सहायता से ट्यूबरकुलीन जाँच करानी चाहिए।

चूँकि क्षय रोग होने की संभावना बूढ़े पशुओं में अधिक होती है, इसलिए नए पशु खरीदते समय जवान अथवा अल्प वयस्क पशुओं को खरीदने के लिए यथासंभव प्रयत्न करना चाहिए।

ऊँट पालकों को अपने ऊँटों को पौष्टिक आहार खिलाना चाहिए ताकि उनकी प्रतिरक्षा प्रणाली किसी भी प्रकार के संक्रमण से लड़ने में सक्षम रहे।

ऊँटों को हमेशा खुले हवादार वातावरण में रखे व बाड़े में ज्यादा भीड़ न हो, इसका ध्यान रखें।

यदि किसी ऊँट में क्षय रोग की आशंका भी पड़े तो जाँच होने तक ऐसे ऊँट का दूध उपयोग में न लें तथा बछड़े को भी ऐसे ऊँट का दूध पीने न दें, नर ऊँट को भी जाँच होने तक प्रजनन के लिए प्रयोग में न लें।

ऐसी कोई भी जगह जहाँ क्षय रोग के संदिग्ध व ज्ञात ऊँटों को रखा जाता है, वहां पर काम करने वाले कर्मचारियों की सुरक्षा के लिए नियमित अंतराल से व्यावसायिक स्तर पर स्वास्थ्य कार्यक्रम लागू करने चाहिए।

क्षय रोग से ग्रस्त अथवा क्षयरोग से संदिग्ध ऊँटों के बीच में कार्य करने वाले व्यक्तियों व बाड़ों की सफाई करने वाले व्यक्तियों को हमेशा मुँह व नाक पर मास्क अथवा कपड़ा ढकना चाहिए, हाथ में दस्ताने व कपड़ों के ऊपर अप्रोन पहनना चाहिए। बाड़ों में काम करते समय पहनने वाले कपड़ों को अलग रखना चाहिए व उनकी नियमित रूप से धुलाई करानी चाहिए।

क्षयरोग से ग्रस्त व्यक्ति को पशुओं के बाड़े में काम नहीं करना चाहिए क्योंकि ऐसे व्यक्ति के थूक व बलगम में इस रोग के जीवाणु मौजूद होते हैं जो सहकर्मियों व पशुओं में संक्रमण कर सकते हैं।

"मेरा यह मत है कि हिन्दी को ही हिन्दुस्तान की राष्ट्रभाषा बनने का गौरव प्रदान करें। हिन्दी सब समझते हैं। इसे राष्ट्रभाषा बनाकर हमें अपना कर्तव्य पालन करना चाहिए।"
- महात्मा गांधी

उष्ट्र संरक्षण एवं संवर्धन में मरुस्थलीय पादपों से निर्मित होमियोपैथिक औषधियों के उपयोग की संभावनाएँ

अमित कुमार व्यास
वरिष्ठ होम्योपैथिक फिजिशियन
एस.जी.सी. होम्यो क्लिनिक एवं अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर,

पृथ्वी पर हो रहे जलवायु परिवर्तन के कारण मानव एवं पशु, दोनों की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो रही है और इनमें तेजी से रोग बढ़ रहे हैं। वर्तमान में संश्लेषित एलोपैथिक दवाओं का दुष्परिणाम दोनों पर ही समान रूप से पड़ रहा हैं। फलस्वरूप वैकल्पिक औषधियाँ जो कि प्राकृतिक पदार्थो से तैयार होती है और जिनमें न्यूनतम दुष्परिणाम होते है; की माँग बढ़ती जा रही है।

डॉ. सी.एस.एफ. हैनीमैन द्वारा आविष्कृत होमियोपैथी एक न्यूनतम दुष्परिणाम वाली वैकल्पिक चिकित्सा की उत्प्रेरक पद्धति हैं। यह "SIMILIA SIMILIBUS CURANTER" यानी 'समान द्वारा **समान का उपचार'** सिद्धान्त पर आधारित हैं; जिसमें रोग का उपचार समान गुण वाली औषधि से किया जाता हैं। स्थानीय मरूस्थलीय पादप एवं जन्तु जो प्राकृतिक रूप से विषम पारिस्थिति की आवासों में रहते हैं और पनपते हैं तथा इनमें रोग प्रतिरोधक क्षमता अधिक पायी जाती है, इसीलिए डॉ. सी.एस.एफ. हैनीमैन के **समान द्वारा समान का उपचार'** के आधार पर मरूस्थलीय पादपों एवं जन्तुओं से बनायी गयी होमियोपैथिक औषधियाँ; आधुनिक जीवन शैली एवं जलवायु परिवर्तन के कारण मानव एवं पशुओं में घटती रोग प्रतिरोधक क्षमता एवं बढ़ते रोगो में ज्यादा प्रभावशाली होगी क्योंकि होमियोपैथिक औषधियाँ; न्यूनतम दुष्परिणाम वाली, ज्यादा प्रभावशाली सस्ती एवं सरलता से उपलब्ध हो जाती हैं।

उष्ट्र रेगिस्तान का जहाज है। रेगिस्तान के जन–जीवन मे इसकी महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। बदलते परिदृश्य में इस पशु का महत्व कम होने से इसकी जनसंख्या एवं उपयोग निरन्तर कम होता जा रहा है। बीकानेर स्थित राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र (एन.आर.सी.सी.) उष्ट्र संरक्षण एवं संवर्धन हेतु शोध कार्य करने वाला राष्ट्रीय स्तर का अनुसंधान केन्द्र है जहाँ पर राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ऊँट उत्पादों, विशेष ऊँटनी के दूध से निर्मित उत्पादों के व्यवसायिकरण के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया जा रहा है।

अन्य पशुओं के समान ही उष्ट्र मे भी जलवायु परिवर्तन के कारण रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो रही है जिसके फलस्वरूप ऊँटों मे भी तेजी से रोग बढ़ रहे हैं जिनका उपचार संश्लेषित एलोपैथिक दवाओं से करने के कारण उसके दुष्परिणाम हो रहे हैं। इसीलिए वैकल्पिक रूप से परम्परागत दुष्प्रभावहीन प्रचलित विधियों का उपयोग उष्ट्र के रोगों के उपचार के लिए किया जा सकता है,

खींप

खेजड़ी

झरबेर

कैर

जिसमें स्थानीय स्तर पर उपलब्ध रेगिस्तानी वनस्पतियाँ घरेलू औषधीय नुस्खें तथा साथ ही न्यूनतम दुष्प्रभाव वाली होमियोपैथिक विधि से बनायी औषधियाँ जो स्थानीय पादपों से तैयार की जाए, का उपयोग किया जा सकता है।

उदाहरणार्थ जिस प्रकार कुतिया के दूध से बनी होमियोपैथिक औषधि लैक–केन (LAC-CAN) का उपयोग महिलाओं की अनेक बीमारियों में किया जाता है, उसी तरह ऊँटनी के दूध से होमियोपैथिक औषधि बनायी जाए तो उसके वांछित परिणाम मिलने की संभावना रहेगी।

रेगिस्तानी झाड़ी ''खींप'' लेप्टाडेनिया पाइरोटेकनिका के सेवन से उष्ट्र मे गर्भपात हो सकता है, इसीलिए खींप लेप्टाडेनिया पाइरोटेकनिका से डॉ. सी.एस.एफ. हैनीमैन के समान द्वारा समान का उपचार' के आधार पर होमियोपैथिक विधि से औषधि बनायी जाए तो यह गर्भपात रोकने के साथ–साथ उष्ट्र की उत्पादकता बढ़ाने मे सहायक हो सकती है। इन संभावनाओं को पादप की रासायनिक संरचना एवं प्रारंभिक प्रयोगों के परिणामों के पश्चात ही घोषित किया जा सकता है। इसी प्रकार से अन्य रेगिस्तानी पादपों का होमियोपैथिक औषधि बनाने मे प्रयोग होने की संभावनाएं हैं जिनका उष्ट्र मजबूरी में चारे के रूप में सेवन करता है।

इसके लिए स्थानीय रेगिस्तानी वनस्पतियाँ, होमियोपैथिक औषधियों के निर्माण हेतु उष्ट्र के लिए चारागाह विकसित किये जा सकते है। रेगिस्तानी पादप न्यूनतम पानी की सिंचाई मे भी अच्छी तरह पनपते हैं जिससे कि उष्ट्र को अच्छा और पौष्टिक आहार प्राप्त होगा और साथ–साथ न्यूनतम दुष्प्रभाव वाली होमियोपैथिक औषधियाँ प्राप्त हो सकेगी जिससे चारागाहों के विकास के साथ–साथ मरूस्थल के फैलाव को रोकने के भी सहायता मिलेगी।

"हिन्दी का प्रचार राष्ट्रीय काम है, निःसन्देह वह दिन दूर नहीं जब हिन्दी असली अर्थ में "राजभाषा'' होगी। हिन्दी राष्ट्रीय एकता का माध्यम है। इसकी विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं से शुत्रता नहीं।"
- डॉ. जाकिर हुसैन

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

ऊँट पालन : विशेषताएँ एवं भविष्य की संभावनाएँ

मुहम्मद मतीन अंसारी, वैज्ञानिक एवं राकेश रंजन, वरिष्ठ वैज्ञानिक

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

अपनी कई अनोखी विशेषताओं के कारण ऊँट बहुत कठोर जलवायु जैसे गर्म रेगिस्तान या ठंडे रेगिस्तान में भी जीवित रह सकते हैं। वर्तमान मे ऊँट की मुख्यतः दो जीवित प्रजातियाँ होती है, एक कूबड़ ऊँट (कैमलस ड्रोमेडेरियस) मध्य–पूर्व भारत और अफ्रीका में पाए जाते हैं जबकि दो कूबड़ ऊँट (कैमलस बैक्ट्रियनस) मध्य एशिया में पाए जाते हैं। दोनों प्रजातियाँ दूध, बाल तथा चमड़ा प्रदान करते हैं और माल–परिवहन, पर्यटन के लिए उपयोग में ले सकते हैं।

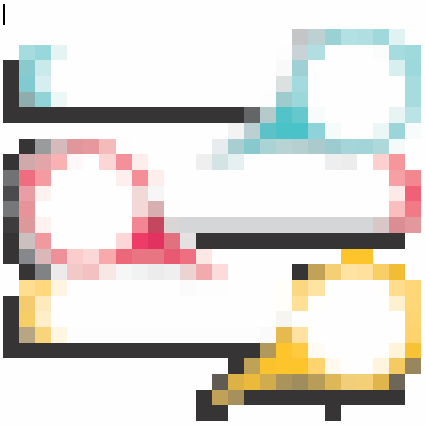

ऊँट के बहुआयामी उपयोग

ऊँटों में रेगिस्तान में जीने के लिए आवश्यक कई गुण पाए जाते हैं, जैसे स्तनधारियों (मैमलस्) में वसा सिर्फ त्वचा के नीचे शरीर की सतह पर फैला हुआ होता है। परन्तु ऊँटों में वसा कूबड़ में केंद्रित होता है। इससे पसीना शरीर की सतह के बाकी हिस्से पर आसानी से आ सकता है और ऊँट आसानी से अपने शरीर को ठंडा कर सकता है। ऊँट की त्वचा कोमल होती है, इसके ऊपर बाल होते हैं जो मध्यम उष्मारोधी (इन्सुलेटर) के रूप में गर्म क्षेत्रों (तापमान) में ठण्ड के मौसम के दौरान इस्तेमाल हो सकता है। पोल ग्रंथियाँ कान के पीछे और गर्दन के पीछे से ऊपर की ओर स्थित होती हैं। यह ग्रंथियाँ संशोधित पसीना ग्रंथि के रूप में कार्य करती हैं और प्रजनन के मौसम में एक विशेष रासायनिक पदार्थ निकालती है।

जल जीवन के लिए आवश्यक है और ऊँट लम्बी अवधि के लिए सीमित जल की मात्रा पर जीवित रह सकते है, जबकि अन्य स्तनधारी जीव ऐसा नहीं कर सकते। पानी की कमी के दौरान ऊँट पानी के उपयोग की दर को बहुत कम कर देता है और पानी की कमी को सीमित करने के लिए उसमें तंत्र भी सक्रिय हो जाता है। ऊँट की कूबड़ में मुख्य रूप से वसा होती है जिसके ऑक्सीकरण के बाद पानी बनता है, जबकि स्टार्च या प्रोटीन के बराबर राशि के ऑक्सीकरण से कम पानी का उत्पादन होता है। ऊँट के पेट में ग्रंथियों के सैक द्वारा बड़ी मात्रा मे पानी स्रावित होता है। इस तरह ऊँट बिना पानी पिए कई दिनों तक जीवित रह सकता है ।

ऊँट की पलकें दो पंक्तियों मे होती हैं जो उड़ती रेत और सूरज की रोशनी से रक्षा करती हैं। ऊँट उड़ती रेत को बाहर रखने के लिए नाक बंद कर सकता है और रेत की आंधी से अपने को बचा सकते हैं। इसके बाल रेगिस्तान में दिन की गर्मी और रात में ठंड के दौरान इन्सुलेशन प्रदान करने हैं। ऊँट के घुटनों पर मोटी चमड़े के पैच होते हैं जो गर्म रेगिस्तान में रेत पर घुटने टेकते समय जलने से इसे बचाते हैं। मुंह के अंदर की त्वचा बहुत ठोस होने के कारण ऊँट कांटेदार पोधों को भी आसानी से खा सकते हैं। ऊँट का पेट केवल तीन भाग में ही विभक्त होता है जबकि जुगाली करने वाले दूसरे रुमिनेंट पशुओं में पेट चार हिस्सों में बंटा होता है। इस वजह से ऊँट को स्यूडो रुमिनेंट भी कहते हैं। इसके पेट में एक विशिष्ट और विभेदित गतिशीलता एवं बहुत सक्रिय मिक्रोफ्लोरा होते हैं जो बेहतर माइक्रोबियल पाचन क्षमता प्रदान करते हैं।

ऊँट के विविध उपयोग

दूध

ऊँट के दूध में क्लोराइड, आयरन और विटामिन 'सी' प्रचुर मात्रा में होते हैं। विटामिन 'सी' का स्तर गाय के दूध

की तुलना में अधिक होता है। रेगिस्तानी क्षेत्रों मे फल और सब्जियॉ बहुत कम होती हैं। इसलिए इसका दूध विटामिन 'सी' का एक महत्वपूर्ण स्रोत बन जाता है। ऊँट का दूध खनिज, असंतृप्त वसा, अम्ल और एंटीबॉडी में भी समृद्ध होता है। ऊँट का दूध कई बीमारियों जैसे कि डायबिटीज, ट्यूबरक्लोसिस, आटिज्म, कैंसर आदि में भी लाभदायक पाया गया है।

बाल

गर्म रेगिस्तान जलवायु में रहने वाले एक कूबड़ वाले ऊँट द्वारा उत्पादित अंडरडाउन बाल दो कूबड़ वाले ऊँट के बाल से जादा मोटे होते हैं। ऊँट पालक नरम ऊनी फर की बुनाई करके कपड़ा और गर्म कंबल बनाते हैं। दो कूबड़ वाले ऊँट की लंबी फर कपड़े में बुनाई के लिए विशेष रूप से अच्छे होते हैं। इसके बालों के कपड़े, कंबल, कोट और सूट बनाने के लिए दुनिया के कई हिस्सों में बेचे जाते हैं।

चमड़ा एवं हड्डियाँ

ऊँट का मजबूत चमड़ा जूते, बैग और सैंडल इत्यादि बनाने के काम में लिया जाता है। इस पशु की सूखी हड्डियों पर हाथी दाँत की तरह खुदाई की जाती है और आभूषण एवं बर्तन बनाने के काम आती है। इसके अलावा ऊँट के शरीर के विभिन अंगों का उपयोग पारम्परिक दवाओं में भी होता है।

ऊँट की हड्डियों से बने आकर्षक उत्पाद

परिवहन

ऊँट, ऊँट–गाड़ी के रूप में सामान ढोने के उपयोग मे लाया जा सकता है। रेगिस्तान में जहां मोटर गाड़ी नहीं जा सकती, वहां यह परिवहन (ट्रांसपोर्ट) का महत्वपूर्ण साधन है। आजकल मोटर सवारी के आ जाने के बाद इसकी ट्रांसपोर्ट में उपयोगिता में काफी कमी आई हैं।

पर्यटन

राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय पर्यटक ऊँट की सवारी के रोमांच के लिए रेगिस्तान में आते हैं। वे ऊँट की सवारी दौड़ एवं कारवाँ आदि का भी आनंद लेते हैं। राजस्थान एवं गुजरात में इसका पर्यटन उद्योग में विशेष उपयोग होता है।

ऊँट : पर्यटन की दृष्टि से

भविष्य की संभावनाएँ

ऊँटों में रोगों से लड़ने के लिए एक विशेष प्रकार की इम्युनोग्लोबुलिन पाई जाती है जो आम तौर पर इन्सान एवं अन्य जानवरो में पाई पाई जाने वाली इम्युनोग्लोबुलिन से अलग एवं जादा प्रभावशाली होती है। इसका उपयोग विभिन रोगों के उपचार के लिए वैक्सीन/टीका बनाने के लिए किया जा सकता है। इसी प्रकार ऊँट की इम्युनोग्लोबुलिन भी कई प्रकार के रोगों मे लाभकारी हो सकती है।

निष्कर्ष

उपयुक्त अनोखी विशेषताओं के लिए ऊँट 'रेगिस्तान का जहाज' और 'मरुधर की शान' कहा जाता है। ऊँट रेगिस्तान में चरम स्थितियों से बचने में सक्षम है और यह मनुष्य को भोजन, दवाइयाँ कपड़े और परिवहन प्रदान कर सकते है। ऊँट के शरीर क्रिया विज्ञान और व्यवहार के विषय में ज्ञान प्राप्त करके इसके उपयोग में वृद्धि की जा सकती है।

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

राजस्थान में पशुधन उत्पादकता में सुधार : अवसर और बाधाएँ

राकेश रंजन, वरिष्ठ वैज्ञानिक, वेद प्रकाश एवं मुहम्मद मतीन अंसारी, वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

राजस्थान भारत का सबसे बड़ा राज्य है जहां कुल आबादी का लगभग 76 प्रतिशत हिस्सा ग्रामीणों का है। अतः राज्य की अर्थव्यवस्था में कृषि और संबद्ध क्षेत्र एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यहाँ की आबादी का हर तीसरा व्यक्ति अभी भी अपनी आजीविका के लिए कृषि सम्बंधित गतिविधियों पर निर्भर है। राज्य में कृषि काफी हद तक वर्षा पर निर्भर है और शुद्ध बोया क्षेत्र के केवल 34.5 प्रतिशत क्षेत्र में सिंचाई का प्रबंध (तालिका 1) है। चूंकि वर्षा की मात्रा बहुत कम और अनियमित है, इसलिए राज्य के किसानों को अक्सर कठिनाई का सामना करना पड़ता है। भविष्य में जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग से स्थिति अधिक खराब होने की संभावना है। अतः पशुपालन को बढ़ावा देकर इस क्षेत्र में किसानों को खेती में समय–असमय होने वाले नुकसान की भरपाई कुछ हद तक की जा सकती है। साथ ही कृषि की तुलना में पशुपालन से किसानों की आय में ज्यादा वृद्धि का अवसर भी है। राजस्थान का पशुधन भारत के कुल दूध उत्पादन का 10 प्रतिशत से अधिक, मटन उत्पादन का 30 प्रतिशत से अधिक और देश के कुल ऊन उत्पादन का 35 प्रतिशत हिस्सा प्रदान करता है। राज्य के सकल घरेलू उत्पाद (जी.डी.पी.) में पशुधन क्षेत्र का योगदान लगभग 8 प्रतिशत है जिसके भविष्य में बढ़ने की उम्मीद है।

भारत में किसानों की आय का आकलन करने के लिए जनवरी से दिसंबर 2013 तक आर्थिक विकास संस्थान, नई दिल्ली द्वारा आयोजित राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (एन. एस. एस.) के 70 वें दौर में यह पाया गया कि पशुओं से होने वाले आय की वृद्धि दर अन्य आय के स्रोतों के वृद्धि दर से 4 प्रतिशत से 13 प्रतिशत ज्यादा थी। अतः राजस्थान में किसानों की आमदनी को बढ़ाने में पशुधन क्षेत्र एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है, ऐसा कहना अनुचित नहीं होगा। केंद्र और राज्य सरकार ने पशु पालन को बढ़ावा देने के लिए कई योजनाएँ भी चलायी है जिनमें भामा शाह पशु बीमा योजना, प्रगतिशील महिला पशुपालक सम्मान योजना, उष्ट्र विकास योजना, प्रजाना सांडों का पंजीकरण एवं नाकारा सांड/बछड़ा बधियाकरण योजना एवं निःशुल्क आरोग्य दवा योजनाएँ शामिल हैं। कई बार जानकारी के अभाव में किसान भाई इनका फायदा नहीं उठा पाते। अतः पशु पालन विभाग तथा अन्य कृषि से सम्बंधित विभागों के द्वारा ऐसे कार्यक्रमों का प्रचार–प्रसार पूरे राज्य में करके किसानों को पशुपालन की ओर प्रोत्साहित करने की आवश्कयता है।

तालिका 1. राजस्थान के स्थलाकृति और जनसांख्यिकी

क्र. सं.	सूचक	राजस्थान	प्रतिशत हिस्सेदारी (भारत का)
1.	क्षेत्र	3,42,000 वर्ग किलोमीटर	10.4
2.	जनसंख्या	56.5 मिलियन	5.49
3.	ग्रामीण आबादी	43.2 मिलियन	5.8
4.	कुल वन क्षेत्र	32,627 वर्ग किमी	4.19
5.	सकल फसली क्षेत्र	2,16,99,000 हेक्टेयर	11.25
6.	नेट बोया क्षेत्र	1,68,36000 हेक्टेयर	11.87
7.	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	62,64,000 हेक्टेयर	10.46
8.	पशुधन	49 मिलियन	10.13
9.	अनाज उत्पादन	1,14,45,000 टन	5.49
10.	तिलहन उत्पादन	59,64,000 टन	21.31
11.	वर्षा	57.5 सेमी (वार्षिक औसत)	

पशुपालन : सूखा प्रबंधन में सहायक

सूखे की स्थिति में पशुपालन कृषि के मुकाबले फायदे का सौदा है। सूखे के दौरान कृषि उत्पादन सामान्य वर्षो की तुलना में सिर्फ 10 प्रतिशत तक रह जाता है, जबकि पशुधन उत्पादन इन विषम परिस्थितियों में भी सामान्य वर्षो का करीब 50 प्रतिशत तक हो सकता है। यदि किसी वर्ष औसत वर्षा सामान्य का सिर्फ 25 प्रतिशत हुई हो तो कृषि उत्पादन क्षेत्र में 20 प्रतिशत तक की कमी आती है जबकि 50 प्रतिशत से भी कम सालाना बारिश वाले वर्षों में, शुष्क क्षेत्र में पशुओं की आबादी में लगभग 10 प्रतिशत तक की ही कमी होती है। इसी कारण पशुपालन को कृषि के क्षेत्र में सूखा प्रबंधन के एक कारगर उपाय के रूप में मान्यता दी गई है।

"ड्रॉट प्रोन एरिया" प्रोग्राम कार्यक्रम के प्रमुख घटक 'ऊन, मटन और डेयरी' के विकास के लिए 'भेड़ और बकरी' को विकसित करना है। पशुधन उत्पादन का शुष्क क्षेत्र की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान है, लेकिन इसमें खेती की तुलना में श्रम शक्ति की ज्यादा जरुरत होती है। भेड़ और बकरी पालन के मुकाबले डेयरी में श्रम शक्ति की आवश्यकता ज्यादा है। गाय एवं भैस के उत्पादन के वर्तमान स्तर पर, अकेले डेयरी रोजाना 10 मिलियन मानव–घंटों के लिए रोजगार प्रदान कर सकता है। भेड़, बकरी और ऊँट पालन से रोजगार के समान अवसर उपलब्ध होने का अनुमान है। सूखे के समय बकरी व ऊँट की दूध उत्पादन क्षमता, गाय एवं भैस की तुलना में कम प्रभावित होती है, खासकर जब जमीन पर लवणता और हवा के क्षरण का प्रभाव ज्यादा हो।

1. गाय एवं भैस उत्पादन

1.1 देशी पशु नस्लों के संरक्षण और सुधार

देशी पशु गर्मी एवं चरम जलवायु स्थितियों के प्रति उच्च सहनशीलता के लिए विश्व विख्यात है। देशी पशुओं के नस्लों के संरक्षण के महत्व को ध्यान में रखते हुए 12 वीं पंचवर्षीय योजना में केंद्र सरकार द्वारा राष्ट्रीय 'गोकुल मिशन' लागू किया गया था। यह योजना राज्य पशुपालन विभाग और सी एफ एस पी टी आई, सी सी बी एफ, आई सी ए आर, विश्वविद्यालयों, कॉलेजों, गैर–सरकारी संगठनों, गौशालाओं और अन्य राज्य द्वारा समन्वित एजेंसियों के जरिए उनके संरक्षण तथा उनके अच्छे जर्मप्लाज्म तैयार करने के लिए कार्यान्वित की गई थी।

थुई वाली स्वदेशी गायों के दूध में ए 2 वैरिएंट के बीटा–कैसिन का अंश अधिक होता है जबकि ए 1 वैरिएंट के बीटा–कैसिन का स्तर विदेशी नस्लों के गायों के दूध में उच्च होता है। यह देखा गया है कि जो लोग ऐसे दूध का सेवन करते हैं जिसमें ए 2 वैरिएंट के बीटा–कैसिन का अंश अधिक हैं उनमें हृदय रोग और मधुमेह (प्रकार 1) होने की संभावना कम होती हैं। इसलिए, स्वदेशी पशुओं का दूध मानव स्वास्थ्य के लिए बेहद फायदेमंद माना जाता है और भविष्य में उसका बाजार निश्चित रूप से बढ़ने की संभावना है। राठी और नागौरी गाय राजस्थान में काफी संख्या में है और साथ ही यहाँ की जलवायु में अच्छा उत्पादन भी देते हैं। इसके अलावा, गीर, साहिवाल, थारपारकर, हरियाणा और कंकरेज नस्ल भी बहुतायत में पाई जाती है। इन देशी नस्लों को लोकप्रिय बनाकर बड़े पैमाने पर डेयरी उत्पादन शुरू करने की आवश्यकता है। इनसे उत्पादित दूध उच्च पोषकता और स्वास्थ्य वर्धक गुणों के कारण किसानों को अधिक मुनाफा दिला सकते है।

1.2 भैंस उत्पादन

राजस्थान में वर्ष 2012 में भैंस की आबादी वर्ष 2007 की तुलना में लगभग 17 प्रतिशत बढ़ गई थी। यह इस तथ्य के बावजूद हुआ है कि राज्य के अधिकांश हिस्सों में पर्यावरण की स्थिति भैंस उत्पादन के लिए अनुकूल नहीं है। भैंस के दूध और मांस के उत्पादन हेतु अत्यधिक मांग शायद इसका प्रमुख कारण है।

2. भेड़ और बकरी पालन

2.1 भेड़ उत्पादन और ऊन प्रसंस्करण

कुल भेड़ की आबादी के मामले में राजस्थान भारत का तीसरा सबसे बड़ा राज्य है। यह उल्लेखनीय है कि वर्ष 2007 (तालिका 2) की तुलना में वर्ष 2012 में राज्य में भेड़ की जनसंख्या में लगभग 19 प्रतिशत की गिरावट आई है। यह संभवतः गरीब भेड़ पालकों द्वारा प्रसंस्करण और विपणन उद्योग में आ रहे बदलाव के साथ सही तालमेल न बिठा पाने और इस क्षेत्र के प्रति राज्य और केंद्रीय एजेंसियों की उदासीनता के कारण हो रहा है। भेड़, रेगिस्तान की स्थिति के लिए एक अत्यधिक उपयुक्त जानवर है और अक्सर शून्य इनपुट (लागत) पर सीमांत और भूमिहीन

किसानों द्वारा पाले जाते हैं। राजस्थान की महत्वपूर्ण भेड़ प्रजातियों में चोकला, मगरा, मारवाड़ी, नाली, पुगल और जैसलमेरी हैं, जिनकी वार्षिक ऊन उत्पादन क्षमता क्रमशः 1.54, 1.80, 1.38, 2.12, 1.67 और 1.65 किलोग्राम की है। राजस्थान में औसतन, प्रति भेड़ प्रति वर्ष 1.56 किलोग्राम ऊन प्राप्त किया जाता है जो देश में प्राप्त औसत ऊन (0.88 किलोग्राम) से अधिक है। सबसे अच्छा कालीन–ऊन उत्पादक जानवर भारत के शुष्क और अर्ध–शुष्क भागों में पाया जाता है, जहां से प्रति वर्ष लगभग 23 मिलियन किलोग्राम ऊन का उत्पादन होता है। ठंड शुष्क हिमालय क्षेत्र में कुल ऊन उत्पादन 3 मिलियन किग्रा है। मालपुरा और सोनादी को छोड़कर गर्म शुष्क क्षेत्र के भेड़ नस्लों से मुख्यतः कालीन ऊन का उत्पादन होता है। मारवाड़ी राजस्थान के शुष्क इलाके में सबसे लोकप्रिय नस्लों में से एक है। राज्य में भेड़ उद्योगों की प्रमुख बाधाएं उपज के लिए असंगठित बाजार और खराब गुणवत्ता वाले चारागाह हैं। भेड़ पालक भेड़ प्रबंधन के पुराने तौर तरीके पर ही चल रहे हैं जिससे न केवल उत्पादन की क्षमता प्रभावित होती है बल्कि भेड़ का उत्पादक जीवन काल भी कम हो जाता है। इसलिए भेड़ पालन में लगे किसानों को वैज्ञानिक और आधुनिक तौर तरीकों के बारे में प्रशिक्षण देकर उनकी आमदनी बढाई जा सकती है। राज्य में ऊन प्रसंस्करण इकाइयों की स्थापना तथा ऊन खरीद और विपणन से संबंधित नीतियों को तैयार करने की भी आवश्यकता है।

तालिका 2. राजस्थान में पशुधन और पोल्ट्री आबादी

पशु	2007	2012	परिवर्तन (प्रतिशत)	राज्यवार रैंक
गाय	1,21,19,512	1,33,24,462	9.94	विदेशी / क्रोस ब्रेड –दसवीं स्वदेशी– पांचवें
भैंस	1,10,91,974	1,29,76,095	16.99	दूसरा (यूपी के आगे)
भेंड़	1,11,89,855	90,79,702	–18.86	तीसरा
बकरी	2,15,02,996	2,16,65,939	0.76	प्रथम
घोड़े और टट्टू	25,438	37,776	48.5	4
खच्चर	886	3,375	280.93	11 वीं
गधा	1,02,130	81,468	–20.23	प्रथम
ऊँट	4,21,836	3,25,713	–22.79	प्रथम
सुअर	2,08,556	2,37,674	13.96	17 वीं
कुल	5,66,63,183	5,77,32,204	1.89	दूसरा (यूपी के आगे)
मुर्गी	49,93,620	80,24,424	60.69	

2.2 बकरी पालन और विपणन

राजस्थान बकरी आबादी के लिहाज से भारत में पहला स्थान रखता है। राज्य में कुल बकरी की आबादी में वर्ष 2007 की तुलना में वर्ष 2012 में मामूली वृद्धि भी दर्ज की गई है। राजस्थान की महत्वपूर्ण बकरी नस्लें मारवाड़ी, परबतसर, झखराना, सिरोही, मेहसाणा, कच्छी और शेखावती हैं। बकरियों को मुख्यतः मांस उत्पादन के लिए पाला जाता है। विस्तृत चरागाह की उपलब्धि, अनुकूल जलवायु एवं कम लागत में ज्यादा मुनाफा को देखते हुए राज्य के किसानों को बकरी पालन के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है।

चित्र : बकरी और भेड़ पालन

3. ऊँट पालन

ऊँट राजस्थान का राजकीय पशु है। हालाँकि सामान ढोने और यातायात में इसकी उपयोगिता कम होने के कारण ऊँट पालन में लोगों की रुचि कम हुई है। वर्ष 2012 की पशु गणना में यह पाया गया की राज्य में इस पशु की संख्या में 2007 की तुलना में लगभग 23 प्रतिशत की कमी आई है (तालिका 2)। स्थिति की गंभीरता कों देखते हुए राज्य सरकार में इसके संरक्षण एवं विकास के लिए उष्ट्र विकास योजना 2 अक्टूबर 2016 से चलायी है, जिनमें नए बच्चे के जन्म पर उष्ट्र पालकों को दस हजार रुपये तक की आर्थिक सहायता का प्रावधान है, पर इस योजना का लाभ लेने के लिए भामा शाह कार्ड का होना आवश्यक है। हाल में उष्ट्र दूध में कई औषधीय गुण होने के प्रमाणिक दस्तावेज आने और राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसन्धान केंद्र बीकानेर द्वारा सतत प्रयास के कारण राज्य और राज्य के बाहर इस दूध की मांग में काफी बढ़ोतरी हुई है। इसके बावजूद उष्ट्र पालकों को इसका पूरा फायदा नहीं मिल पा रहा है क्योंकि उष्ट्र दूध का व्यवसाय अभी भी असंगठित है और उसके प्रसंस्करण और मूल्य संवर्धन का ज्यादा विकास नहीं हो सका है। राज्य सरकार और प्राइवेट कंपनियाँ इस क्षेत्र में निवेश कर अच्छा मुनाफा कमा सकती है। साथ ही उष्ट्र पालकों का भी भला होगा। किसान भाई छोटे–छोटे सहकारी समूह बनाकर भी राज्य के विभिन्न हिस्सों तथा राज्य के बाहर इसके विपणन को बढ़ावा देकर ज्यादा मुनाफा कमा सकते हैं।

चित्र : ऊँटनी का ताजा दूध

"जाट कैवै सुण जाटणी बीं गांव में रैणो, ऊँट बिलाई लेयगी तो हांजी-हांजी कैणो।
-जाट कहे, सुन जाटनी उस गाँव में रहना, ऊँट को बिल्ली ले गई, ऐसा सुने तो हामी भर लेनी।"
-उजास ग्रन्थ माला से साभार

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

बदलती जलवायु एवं घटते चरागाहों से प्रभावित होता पशुधन

एम. के. राव, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी, प्रियंका गौतम, वैज्ञानिक, बलदेव दास किराडू, वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केंद्र, बीकानेर एवं
बी. लाल, वैज्ञानिक, भाकृअनुप–केंद्रीय भेड़ एवं ऊन अनुसन्धान संस्थान, अविकानगर

पशुधन के मामले में हमारा देश सचमुच बहुत धनी है। राजस्थान में पशु–सम्पदा का विशेष रूप से आर्थिक महत्व माना गया है। राजस्थान की अर्थव्यवस्था के बारे में यह कहा जाता है कि यह पूर्णत कृषि पर निर्भर करती है तथा कृषि मानसून का जुआ मानी जाती है। इस स्थिति में पशुपालन का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है। राज्य के कुल क्षेत्रफल का 61 प्रतिशत मरुस्थलीय प्रदेश है, जहाँ जीविकोपार्जन का मुख्य साधन पशुपालन ही है। देश की राष्ट्रीय आय में पशुपालन का प्रत्यक्ष योगदान कोई 6 प्रतिशत है, पर परोक्ष योगदान इससे कहीं ज्यादा है। देश के जीवन में इन पशुओं की बड़ी अहम भूमिका है–जैसे बोझा ढोने और खींचने का मुख्य साधन, खाद्य पदार्थ और गांवों के उद्योगों का कच्चा माल बड़ी मात्रा में इनसे ही मिलता है। विशेषज्ञ भी यह तथ्य भूल जाते हैं कि हमारे यहां का किसान केवल अन्न का उत्पादक नहीं है, उसके नित्य जीवन में खेती और पशु बाने की तरह गुंथे हुए हैं। सूखा–राहत कार्यों में पहला लक्ष्य तो लोगों को बचाने का होता है। पशुओं का नंबर बाद में आता है। लेकिन चरवाहों की जीविका का प्रमुख और एकमात्र साधन जानवर ही हैं, इसलिए सूखा पड़ते ही फौरन वे अपना गांव छोड़कर जानवरों को लेकर ऐसी जगह चले जाते हैं जहां वे उन्हें ठीक से खिला–पिला सकें। इतनी तकलीफ उठाकर ये जहां पहुंचते हैं वहां के लोग अब इन्हें एक मुसीबत मानने लगे हैं।

राजस्थान में पशुधन का महत्व

राजस्थान के सूखे इलाके में खेती के बाद महत्वपूर्ण संपदा पशु ही है। राजस्थान के पश्चिमी हिस्सों में, जहां अक्सर सूखा पड़ता रहता है, लोगों का प्रमुख उद्योग पशुपालन है। राजस्थान में करीब चार करोड़ जानवर हैं। राजस्थान पशुधन वाले राज्यों में तीसरे स्थान पर आता है। देश के कुल दूध का 10 प्रतिशत इसी राज्य से आता है। राजस्थान में गाय, बैल, भेड़, ऊँट, बकरी और घोड़ों तक की उत्तम नस्लें मौजूद हैं। पिछले 30 सालों में यहां पशुओं की संख्या काफी बढ़ी। 1951 और 1983 के बीच गाय 25 प्रतिशत, भैंस 72 प्रतिशत, भेड़ 238 प्रतिशत और बकरियां 100 प्रतिशत बढ़ी है। इस बढ़ोत्तरी से अनेक पर्यावरणवादी तक चिंतित हुए। आज तो बकरियों को पर्यावरण का सबसे बड़ा दुश्मन मान लिया गया है। कहा जाता है कि उनके कारण जमीन ज्यादा खुश्क हो जाती है, खेती योग्य जमीन का उपजाऊपन घट जाता है।

पश्चिमी राजस्थान के विपरीत परिस्थितियों वाले इलाकों में रहने वाले लोगों की पीड़ा और दर्द उनकी लोक कथाओं का हिस्सा है। सातकाल, सत्ताइसजमना, त्रिसथकुरिआकचा, तीन काल, आइसापडेला, मापूत, मिले नपाचा आदि वहां की स्थानीय कथाएं रही हैं। इसका मतलब है कि प्रत्येक 100 वर्षों में 67 वर्ष का समय ही यहां अच्छा होता है। 27 वर्ष सूखे रहते हैं। 7 वर्षों तक भयंकर सूखा पड़ता है और तीन साल इतने अधिक संकट के रहते हैं, जिस वजह से एक मां और उसका बच्चा मजबूरन एक–दूसरे से अलग हो जाते हैं। अपने अस्तित्व के पारंपरिक तौर पर बनाई जाने वाली रणनीतियों में प्रभावी जल प्रबंधन, पशुपालन, मिश्रित कृषि एवं संयुक्त इच्छा शक्ति शामिल हैं। 'दास होवे चौखी बकरियां, एकसांतरों ऊँट, दास होवे खेजड़ला, तो कालकाड दू कूट' अर्थात एक

परिवार सूखे से तभी निपट सकता है, यदि उसके पास दस बकरियां, एक ऊँट और दस खेजड़ी के पेड़ (खेजड़ी बहुउद्देश्य वाला वृक्ष है, जिसके हिस्से को भोजन, जानवरों के लिए चारा और घर बनाने के लिए कच्चे सामान के तौर पर उपयोग किया जाता है।

दोष तो असल में हमारा है, सोच–समझकर खेती नहीं करते, परती जमीन पर ध्यान नहीं देते और जो थोड़ी–बहुत चरागाह की जमीन बची है और जहां अच्छी घास पैदा भी नहीं होती, वहीं सभी तरह के जानवरों को ठेल देते हैं। इन चरागाहों में घास की पैदावार और उसके गुण दोनों घट रहे हैं। चरागाहों की देखभाल या विकास की ओर ग्राम पंचायतें शायद ही ध्यान देती हैं। राजस्थान में स्थायी चरागाह के रूप में लगभग 10 लाख 18 हजार हेक्टेयर जमीन बताई जाती है। इनमें से ज्यादातर हिस्से की देखभाल का भार तो ग्राम पंचायतों पर है लेकिन इसके लिए उन्हें कोई सुविधा नहीं दी जाती।

जंगल विभाग अपने मातहत के चरागाह में पैदा होने वाली घास इकट्ठा करके उसका कुछ हिस्सा नीलाम करता है और बाकी हिस्सा अभाव की स्थिति में खिलाने के लिए भंडारण कर लेता है। उत्तम प्रबंध वाले कुछ ही अच्छे चरागाह हैं, जहां नाममात्र का शुल्क लेकर मवेशी को चराने दिया जाता है, लेकिन उनके उपयोग के मामले में गांव वालों और जंगल विभाग वालों के बीच हमेशा ही झगड़े चलते रहते हैं।

छोटे किसान और जलवायु संबंधी चिंता

छोटे और हाशिए पर मौजूद किसान, जिनकी 78 फीसदी के करीब आबादी, सिंचाई के लिए वर्षा पर निर्भर है, इनकी आजीविका का प्राथमिक स्रोत पशु ही हैं। ये लोग पारंपरिक रूप से सामान्य सामुदायिक भूमि और संसाधनों पर ही भरोसा करते हैं। बड़े किसानों द्वारा खेती के लिए व्यक्तिगत जल आपूर्ति प्रणाली की ओर रुख करने के चलते, सामान्य समुदायों द्वारा उपयोग में लाए जाने वाले ओरन एवं गौचर (समुदाय चराई भूमि) तथा नदी (ग्रामीण तालाब) जैसे आम संपत्ति संसाधन काफी तेजी से घट रहे थे। इसका सीधा परिणाम यह हुआ कि हाशिए पर मौजूद आबादी के लिए खाद्य एवं चारा असुरक्षा, गरीबी और विस्थापन तेजी से बढ़ने लगा। जलवायु संबंधी खतरों की तीव्रता और आवृति में वृद्धि की वजह से वर्ष 1961 के बाद से लगातार सूखे की घटनाओं में वृद्धि होती रही है। करीब 80 फीसदी कृषि वर्षा से होने वाली सिंचाई पर आधारित है। राजस्थान के थार रेगिस्तान क्षेत्र में सालाना औसतन 100 से 300 एमएम के बीच वर्षा होती है। इसके अतिरिक्त एक तथ्य यह भी है कि उच्च क्षमता वाले रेगिस्तान की मिट्टी में पोषक तत्वों की कमी है और इसमें नमी की मात्रा भी काफी कम है। घास के मैदानों के घटते आकार और घासों की गुणवत्ता (पोषक तत्त्वों की कमी) में आई गिरावट चिंता की बात है। यह इसलिए भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि देश में ज्यादातर छोटे एवं पिछड़े किसान और भूमिहीन लोग अपनी जीविका के लिए पशुपालन पर निर्भर हैं। मवेशी क्षेत्र के लिए विकास योजनाएं एवं नीतियां चारा उत्पादन पर जोर देती हैं, लेकिन उन खुले मैदानों को संरक्षित रखने के उपाय नहीं किए गए हैं जिन पर देश के ज्यादातर मवेशी अपना गुजारा करते हैं।

चारा उत्पादन के लिए चिन्हित क्षेत्रों की भी हालत खराब है, जो कुल कृषि योग्य भूमि के पांच प्रतिशत से भी कम है। इन क्षेत्रों के विस्तार की गुंजाइश नहीं के बराबर है, क्योंकि भारत जैसे देश में इस्तेमाल योग्य भूमि की कमी है। कृषि, अधोसंरचना, उद्योग और अन्य इस्तेमाल के लिए देश में भूमि की उपलब्धता कम हो रही है। इन पहलुओं को ध्यान में रखते हुए उपलब्ध चरागाहों के रखरखाव और उनकी उत्पादकता में सुधार के उपाय किए जाने आवश्यक हो गए हैं। घास के मैदानों की बुरी हालत का एक प्रमुख कारण यह है कि वे किसी खास एजेंसी या सरकारी विभाग से ताल्लुक नहीं रखते हैं, इसलिए उनके रखरखाव में समस्या आती है। जिन क्षेत्रों पर वन या राजस्व विभाग मालिकाना हक होने का दावा करता है, वहां भी वे इनके प्रबंधन की जिम्मेदारी उठाने के लिए तैयार नहीं हैं।

राजस्थान में चरागाह की स्थिति

मध्य और पश्चिमी राजस्थान में, जहां सालाना बारिश औसत 500 मिमी है और सूखा छह–आठ महीने का है, सूखी छोटी घास पर चराने की प्रथा ज्यादा अनुकूल है। चूँकि पेड़ जो भी हैं, छितरे हुए हैं, इसलिए उनकी छाया बहुत कम पड़ती है। इससे घास बढ़ोत्तरी में खास बाधा नहीं पड़ती। जहां अच्छा पानी मिलता है, वहां घास

100–120 सेमी ऊंची हो जाती है। वृक्षविहीन चराई वाले क्षेत्र में और छोटी घास वाले मैदान में मुख्य अंतर यह है कि वृक्षविहीन चरागाह में चारा केवल तर मौसम में ही मिलता है, जबकि छोटी घास वाले चरागाह में चारा तर मौसम में पैदा तो होता है, पर सूखे मौसम में भी दुबारा थोड़ी–बहुत मात्रा में घास मिलती रहती है।

पश्चिमी राजस्थान में जुलाई से सितंबर तक तीन महीने नमी रहती है। बाकी महीने आमतौर पर सूखा रहता है। कर्क रेखा के पास होने के कारण इस भाग में सूरज की गरमी ज्यादा होती है और वाष्पीकरण की मात्रा भी बढ़ जाती है। झाड़ियां ही यहां की कुदरती वनस्पति हैं। लेकिन पेड़ों की कटाई और चराई के कारण अगर एक बार ये झाड़ियां खत्म हो जाएं तो नौ महीने के सूखे मौसम की तेज धूप (उन्हें) झुलसा देती है। ज्यादा चराई से घास के मैदानों की हालत भी तेजी से बिगड़ती है। सूखे और अधसूखे इलाकों में बारिश के मौसम में हर साल पेड़ लगाने का कार्यक्रम चलाया जाता है। सितंबर–अक्टूबर तक पौधे काफी पनपते भी हैं। लेकिन फिर नवंबर के आसपास सूखने लगते हैं। उत्तरी क्षेत्र में जाड़ों में भी बारिश होती है, इसलिए वहां दिसंबर और जनवरी महीनों में पेड़ों को फिर से पनपने का एक और मौका मिलता है।

ज्यादा सूखे और अधसूखे भागों में हरियाली कुछ ज्यादा ही खत्म हो रही है। पश्चिमी राजस्थान में जुलाई से सितंबर के बीच बारिश के समय सालाना घास खूब उग आती है, पर अभाव की परिस्थितियां ऐसी हैं कि तुरंत ही वह चरा दी जाती हैं। बाद में कुछ समय तक ज्वर–बाजरे के डंठल खिलाए जाते हैं और आखिर में किसी नमी वाले इलाके की ओर चले जाना पड़ता है। सूखे वाले वर्षों में तो बड़ा बुरा हाल हो जाता है।

हरे चारे की सख्त कमी के कारण पशुओं को गेहूं और धान का पुआल भी खिलाया जाता है। दरअसल, खाद्य के मामले में पशुओं और मनुष्यों के बीच कोई होड़ नहीं है। मनुष्य पौष्टिक दाना खाते हैं और बचे पुआल से पशु गुजारा करते हैं। अमेरिका जैसे देशों में इससे बिलकुल उलटा चलन है। भारत में 60 प्रतिशत खेती की जमीन में चारे के लिए केवल 5 प्रतिशत है। देश के कुछ भागों में तो सिंचाई वाली जमीन में चारे के लिए न के बराबर ही हिस्सा रखा जाता है।

ज्यादातर मवेशियों को फसलों के डंठल वगैरह खिलाए जाते हैं और बाकी को बंजर जमीन में, उजाड़ पंचायती जमीन में, नदियों और सड़कों के किनारे, खाली पड़ी भूमि और बिरले होते जा रहे जंगलों में अपना नसीब आजमाने के लिए छोड़ दिया जाता है। जानवरों को हमारे यहां ऐसे ही सूखे कचरे पर गुजारा करना पड़ता है और अधपेट भूखा रहना पड़ता है।

लगता है हमारे पशु चारे की इस अनिश्चितता के आदी हो गए हैं। ये आधा पेट खाकर तथा सत्वहीन चारा पाकर भी जैसे–तैसे कुछ साल जी लेते हैं और अपने पालक की जीते जी और मरकर भी कुछ सेवा कर जाते हैं। ज्यादा उत्पादन क्षमता वाले संकर नस्ल के पशुओं को बढ़ाने के प्रयत्न, चारे की समस्या को और भी कठिन बना रहे हैं।

सिकुड़ते चरागाहों के कारण पशुओं की उत्पादकता घटती है और पशुओं पर ही जिनकी जीविका निर्भर है उनकी आर्थिक स्थिति ही नहीं, पूरी जीवनशैली खतरे में पड़ती है। पशुपालक बेजमीन मजदूर बनने को मजबूर होते हैं। इन सबके बावजूद मुख्य तीनों प्रकार की भूमि–चरागाह, जंगल और खेती की जमीन में से आज भी सरकर की ओर से चरागाह की उपेक्षा ज्यों की त्यों जारी है।

कई जगह तो खुद सरकार ने ही ऐसी सिंचाई परियोजनाएं लागू कीं जिससे चरागाह खेती की जमीन में बदल गए। पर उन पर निर्भर चरवाहों के पुनर्वास की ओर ध्यान नहीं दिया गया। जैसे राजस्थान नहर के कारण बहुत बड़ा भूभाग खेती की जमीन में बदल गया है और वहां जो लोग अपने पशु चराते थे, उनके लिए अब चराने की जगह न के बराबर रह जाएगी।

चरागाहों पर अतिरिक्त भार पड़ने का तीसरा कारण है कि हमारे यहां चारा उत्पादन की और चरागाहों के रख–रखाव की कोई ठीक योजना नहीं है। अनाज ज्यादा पैदा करने पर जोर दिया गया और छोटी–नकदी फसलों को भी खूब बढ़ावा मिला। फिर छोटी जोत होने और खेतों को परती छोड़ने का चलन के कारण चारे वाली फसलें खत्म हो चली हैं। कृषि के बदलते परिवेश में, बढ़ते तापमान, पर्यावरण प्रदूषण, मृदा ह्रास एवं बीमारियों के प्रकोप को कम करने के लिए उन्नत एवं स्वच्छ क्रियाओं को अपनाना आवश्यक है।

राजस्थान में देश के कुल पशुधन का लगभग 11.5 प्रतिशत मौजूद है। यहाँ पशुपालन रोजगार का प्रमुख स्रोत है। इस व्यवसाय से राज्य की अर्थव्यवस्था अनेक प्रकार के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष घटकों से लाभान्वित होती है। राज्य में पशुओं की उत्पादकता बढ़ाने के लिये जहाँ एक ओर पशुपालकों को शिक्षित करते हुए उन्हें आधुनिक पद्धतियों का प्रशिक्षण देना जरूरी है वहीं दूसरी ओर सभी क्षेत्रों में पशुओं की नस्ल सुधार योजनाओं को और प्रभावी ढंग से लागू करना अति आवश्यक है। वैसे तो राजस्थान आपदा से निपटने की दिशा में निश्चित रूप से सफलता हासिल कर रहा है, मगर अभी भी लंबी दूरी तय किया जाना बाकी है।

"जेठ बीती पहली पड़वा जे अम्बर धरहरै। असाढ सावण काड कोरा भादरवै बिरखा करै।।
-आषाढ़ की प्रथमा को यदि बादल गरजेगा या वर्षा हो तो आषाढ़ और
श्रावण मास सूखे जायेंगे और भादों वर्षा होगी।"
- उजास ग्रन्थ माला से साभार

भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

स्वस्थ एवं सुंदर स्वास्थ्य के लिए शुद्ध नमक : सेंधा नमक

अशोक कुमार नागपाल, प्रधान वैज्ञानिक, फतेह चन्द टुटेजा, वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं जितेन्द्र कुमार, तकनीकी अधिकारी
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केंद्र, बीकानेर

सदियों से सेंधा नमक हमारे घर की रसोई का एक महत्वपूर्ण अंग रहा है जिसे हम आधुनिक युग में भूल चुके हैं। आयुर्वेद में इसके गुणों का बहुत खूबसूरत वर्णन मिलता है। आज आवश्यकता है कि हम इसके गुणों को फिर से याद करें ही नहीं अपितु इसे अपने दैनिक जीवन का एक अंग बनाएँ क्योंकि इसके अदभुत गुण हमारे स्वास्थ्य के लिए बहुत ही लाभकारी हैं। इसमें पाए जाने वाले गुणकारी तत्व हृदय–घात, उच्च रक्त–चाप, अस्थि–दर्द, वात पित और पाचन सम्बन्धी विभिन्न विकारों से हमें सुरक्षा प्रदान करते हैं। बहु–गुणी कारणों से ही सेंधा नमक का प्रयोग आयुर्वेद की बहुत–सी दवाइयों जैसे कि पेट दर्द, पेट की गैस, पेट फूलना, चर्बी कम करना में प्रयोग होता है। घरों में अक्सर इसे चटनी, दही, लस्सी, रायता, चाट, स्नैक्स में इस्तेमाल करते हैं। इसके गुणों को देखते हुए कम्पनियों ने सेंधा नमक वाले उत्पाद जैसे आलू चिप्स, केला चिप्स, चिवड़ा मीठा, चिवड़ा तीखा इत्यादि बाजार में उतार दिए हैं।

अंग्रेजी में इसे रॉक साल्ट व हिमालयन नमक, हिंदी में सेंधा नमक और संस्कृत में सेंधवा लवण नाम से जाना जाता है।

चित्र : सेंधा नमक

सेंधा नमक, पाकिस्तान के पश्चिमी पंजाब प्रान्त में सिन्धु नदी के साथ लगे भागों और खैबरप्ख्तून्ख्वा के कोहाट जिले की पहाड़ी श्रृँखला में पाया जाता है और सिंध इलाके से ही इसे सैन्धव/सेंधा नमक नाम मिला। कोहाट जिले में ही प्रसिद्ध खेवड़ा नमक खान है। इस नमक को लाहौरी नमक के नाम से भी जाना जाता है क्योंकि व्यापारिक रूप से इसे लाहौर के मार्ग से उत्तर भारत में विक्रय हेतु भेजा जाता था। वर्ष 1930 से पहले, भारत में समुद्री नमक का प्रयोग नहीं किया जाता था। विदेशी कम्पनियों के कहने पर ही अँग्रेजी प्रशासन द्वारा भारत की सीधी–सादी प्रजा को आयोडीन मिलाकर समुद्री नमक बेचा जाने लगा।

सेंधा नमक भारत मे काफी कम मात्रा मे होता है और वह भी अशुद्ध होता है। भारत में 80 प्रतिशत नमक समुद्र से, 15 प्रतिशत जमीन से और केवल 5 प्रतिशत पहाडी यानी कि सेंधा नमक पाया जाता है।

सेंधा नमक, सैन्धव नमक, रॉक साल्ट यानी चट्टान नमक, लाहौरी नमक या हैलाईट, सोडियम क्लोराइड यानी साधारण नमक पत्थर अथवा क्रिस्टल रूप में पाया जाने वाला एक खनिज पदार्थ है। अधिकतर यह रंगहीन या सफेद होता है, लेकिन कभी–कभी अन्य पदार्थों की मौजूदगी से इसका रंग हल्का से गाढ़ा नीला और जामुनी, गुलाबी, नारंगी, पीला या भूरा भी हो सकता है। भारतीय भोजन में और आयुर्वेद चिकित्सा में पाचन के लिए प्रयोग होने वाला काला नमक भी एक प्रकार का सेंधा नमक ही है। सेंधा नमक के पश्चात काला नमक दूसरे नंबर पर आता है और गहरे लाल अथवा गुलाबी रंग के क्रिस्टलीय आकार में पाया जाता है।

खनिज तत्व

सेंधा नमक में सोडियम क्लोराइड 98 प्रतिशत तक प्रमुख घटक है। इसमें कई उपयोगी खनिज तत्व जैसे आयोडीन, लिथियम, मैग्नीशियम, कैल्शियम, फास्फोरस,

चित्र : क्रिस्टल

सल्फर, क्लोराइड, पोटेशियम, क्रोमियम, मैंगनीज, आयरन, कॉपर, कोबाल्ट जिंक, स्ट्रोंटियम आदि शामिल हैं। सेंधा नमक में लगभग 94 खनिज तत्व पाए जाते हैं। सोडियम की मात्रा कम होने के कारण यह कम नमकीन होता है। सेंधा नमक में आयोडीन की मात्रा भी कम पाई जाती है। सेंधा नमक में पाए जाने वाले खनिज तत्व हमारे शरीर में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सेंधा नमक के खनिज तत्व शरीर में ऊतकों, हड्डी, दाँत, मांसपेशियों और नसों की उचित संरचना और ऊतक विकास हेतु आवश्यक हैं। एंजाइम प्रतिक्रियाओं के लिए खनिज तत्व सह–कारक के रूप में कार्य करते हैं। खनिज तत्वों के बिना एंजाइम काम नहीं करते। सभी कोशिकाओं को काम और समारोह के लिए एंजाइमों की आवश्यकता होती है और हमें जीवन शक्ति देते हैं। ये शरीर के भीतर पीएच संतुलन बनाए रखते हैं। खनिज तत्व वास्तव में सेल झिल्ली में पोषक तत्वों के हस्तांतरण की सुविधा प्रदान करते हैं। समुचित तंत्रिका चालन बनाए रखते हैं। मांसपेशियों को क्रिया और आराम करने में मदद करते हैं। खनिज तत्व स्वस्थ तंत्रिका समारोह, मांसपेशियों की टोन के विनियमन को बनाए रखने और स्वस्थ कार्डियोवास्कुलर सिस्टम को समर्थन देने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। तात्पर्य है कि सेंधा नमक हमारे शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण है।

सेंधा नमक के गुण

ये भार में हल्का, स्वाद में नमकीन, थोड़ा मीठा स्वाद, ठंडी तासीर वाला होता है।

त्रिदोष पर प्रभाव – घरों में अक्सर प्रयोग होने वाला सफेद साधारण समुद्री नमक का स्वाद आमतौर पर पित्त बढ़ाता है, लेकिन सेंधा नमक तासीर में ठंडा होने से पित्त संतुलन में मदद करता है। अपने नमक स्वाद के कारण, यह वात और शेष राशि को संतुलित करता है। कफनाशक प्रकृति के कारण छाती में कफ संचय नहीं होने देता और छाती जकड़न की समस्या को दूर करने में मदद कर खांसी में राहत प्रदान करता है। इसलिए यह दुर्लभ आयुर्वेदिक पदार्थ में से एक है जो सभी तीन दोषों को संतुलित करता है।

सभी लवणों में से सबसे अच्छा सेंधा नमक को माना जाता है। आयुर्वेद के अनुसार दैनिक उपयोग के लिए यह सलाह दी जाती है। इसके गुण, उपयोग और स्वास्थ्य लाभ साधारण नमक से काफी अलग हैं। यह हृदय के लिये उत्तम, दीपन और पाचन में मददरूप, त्रिदोष शामक, शीतवीर्य अर्थात ठंडी तासीर वाला, पचने मे हल्का है। इससे पाचक रस बढ़ते हैं।

स्वास्थ्य लाभ

1. चयापचन : सेंधा नमक के दैनिक उपयोग से हम अपने शरीर को सक्रिय और चुस्त रख सकते हैं। सेंधा नमक के सेवन से शरीर का चयापचन स्तर सही बना रहता है। शरीर में पानी की उचित मात्रा को भी बनने से शरीर पाचन भी सही रहता है।
2. देहभार कम करना : आयुर्वेद के अनुसार, सेंधा नमक वसा बर्नर है। यह शरीर में चयापचय में सुधार करता है, भोजन की तीव्र इच्छा को रोकता है। सेंधा नमक का वसा बर्नर प्रभाव इसमें मौजूद खनिज तत्वों के कारण होता है। हालांकि, वसा को नष्ट करने पर इसका असर महत्वपूर्ण नहीं है, लेकिन आप वजन घटाने में सहायक चिकित्सा के रूप में इसका इस्तेमाल कर

सकते हैं। यह मृत वसा कोशिकाओं को हटाने में भी मदद करता है।

3. पाचन : सेंधा नमक पित्त नाशक, त्रिदोष शामक, ठंडी तासीर वाला, पाचन उतेजक गुणों वाला, सुपाचक और पाचक रसों की वृद्धि से भूख को बढ़ाने में सहायक है। कम भूख लगने की समस्या से सेंधा नमक द्वारा निजात पाई जा सकती है। पानी अथवा लस्सी में चुटकी भर मात्रा खाने से पाचन ठीक हो जाता है। खाने–पीने में असावधानी, पेट गड़बड़ी से अपच, कब्ज, गैस और अम्लता की समस्या आम बात है और कई बीमारियों का कारण बनती है। ऐसी किसी भी समस्या की मुक्ति हेतु भोजन पश्चात सेंधा नमक का सेवन लाभकारी है। वायु शामक गुणों के कारण पेट फूलने की समस्या में निजात दिलाता तथा इसके सेवन से डकार शुद्ध आती है। आयुर्वेद में, सेंधा नमक को और पाचन व भूख में सुधार के लिए सौंफ, धनिया, जीरा, काली मिर्च, अदरक, लंबे काली मिर्च और दालचीनी के साथ प्रयोग किया जाता है।

4. नींबू के रस के साथ सेंधा नमक, उल्टी को नियंत्रित करने में मदद कर सकता है।

5. सेंधा नमक एंटैसिड गुणों के कारण अमाशय में अम्लता एसिड यानी तेजाब उत्पादन घटाता है और तेजाब/एसिड भाटा को भी रोकता है, जिसके परिणाम स्वरूप सीने की जलन, हृदय–जलन की शिकायत होती है।

6. आयुर्वेद में, सेंधा नमक का उपयोग अम्लता को कम करने और पाचन में सुधार के लिए सौंफ, धनिया पाउडर और जीरा के साथ किया जाता है।

7. लस्सी में चुटकी भर सेंधा नमक के साथ पुदीने के पत्ते मिलाने से एक ताजा पेय तैयार कर किया जा सकता है जो लार और पाचन रस के प्रवाह को बनाए रखने में मदद करता है।

8. सेंधा नमक शरीर में ऑक्सीजन की उचित मात्रा और स्तर को भी बनाए रखता है। ऑक्सीजन के ठीक प्रवाह से सेंधा नमक श्वसन सम्बन्धी परेशानियों को दूर करने में फायदेमंद है। अस्थमा से पीड़ित मरीजों को सेंधा नमक का सेवन अवश्य करना चाहिए।

9. आहार में इसे शामिल करके रक्त प्रवाह को भी सही रखा जा सकता है जिससे रक्त प्रवाह सम्बन्धित कई सारी बीमारियों से बचाव होता है। रक्त विकार इत्यादि रोगों में भी जहाँ नमक प्रयोग वर्जित हो तब इसका उपयोग किया जा सकता है।

10 मधुमेह, उच्च रक्तचाप, लकवा जैसी गंभीर बीमारियो से बचाव : हमारे देश में आमतौर पर लोग समुद्र से बने नमक का भोजन में प्रयोग करते हैं जो मधुमेह, उच्च रक्तचाप, लकवा जैसी गंभीर बीमारियो के प्रकोप को बढ़ाता है पर सेंधा नमक समुद्री नमक से श्रेष्ठ है। आयुर्वेद की बहुत–सी दवाइयों मे सेंधा नमक का उपयोग किया जाता है। आम तौर से उपयोग मे लाये जाने वाले समुद्री नमक से उच्च रक्तचाप, डाइबिटीज, लकवा आदि गंभीर बीमारियो का भय रहता है। इसके विपरीत सेंधा नमक हृदय के लिय उत्तम होने से रक्तचाप पर नियन्त्रण रहता है। इसकी शुद्धता के कारण ही इसका उपयोग व्रत उपवास में किया जाता हैं।

11. सेंधा नमक का उपयोग, घेंगा थाइरोइड रोग में भी लाभकारी है।

12. तनाव की समस्या : सेंधा नमक में विद्यमान अरोमा, शरीर और मस्तिष्क दोनों को विश्राम मिलता है तथा तनाव, चिंता जैसी समस्याएं बहुत दूर रहती हैं।

13. सेंधा नमक मांसपेशियों की एंठन में भी लाभप्रद है। सेंधा नमक मिले एक गिलास पानी के सेवन से कुछ समय पश्चात मांसपेशियों की एंठन से राहत का एहसास होता है।

14. दाँतों की चमक : गुनगुने पानी में सेंधा नमक मिलाकर, कुल्ला करने से न केवल दाँतों की चमक और मजबूती बढ़ती है, बल्कि मुंह–गले से दुर्गन्ध, गले की खराश, गले की सूजन, गले का दर्द, खांसी, टॉन्सिल इत्यादि संबंधित कई प्रकार की परेशानियां भी दूर होती हैं।

15. सेंधा नमक आंतों से कीड़े को खत्म करने में अन्य कृमि–नाशक दवाओं की सहायता करता है। आयुर्वेद में, इस उद्देश्य हेतु आमतौर पर इस नमक के साथ विदंग का उपयोग किया जाता है।

सावधानी : जहाँ सेंधा नमक हमें काफी लाभ देता है वहीं इसके कुछ नुकसान भी हैं। उच्च रक्तचाप के रोगियों को इसके अधिक सेवन से हानि पहुँच सकती है क्योंकि अधिक मात्रा के सेवन से रक्तचाप बढ़ सकता है।

सेंधा नमक में जहाँ अन्य खनिज तत्वों भरपूर मात्र में मौजूद होते हैं पर आयोडीन कम होता है इसलिए इसे स्वास्थ्य लाभ के लिए आयोडीन युक्त नमक के साथ मिश्रित करके प्रयोग में लाना उचित रहता है।

सेंधा नमक मनुष्यों के लिए ही नहीं अपितु पशु–पक्षियों के लिए भी उतना ही लाभदायक है इसलिए इसे पशु आहार में शामिल कर पशु स्वास्थ्य और उत्पादन में वृद्धि निश्चित है।

"राबड़ी कै मनै ई दांतां सूं खावो। -राबड़ी कहती है मुझे भी दाँतों से खाओ। कमजोर व्यक्ति भी ताकतवर की तरह पैतरा दिखाये तब यह उक्ति कही जाती है।"
- उजास ग्रन्थ माला से साभार

नये प्रतिजैविक (एंटीबायोटिक) की खोजः वर्तमान परिदृश्य एवं भविष्य की रुपरेखा

अमिता रंजन, प्रतिष्ठा शर्मा एवं एल.एन.सांखला
सहायक आचार्य, फार्माकोलॉजी और विष विज्ञान विभाग
पशु चिकित्सा विज्ञान महाविद्यालय, राजुवास, बीकानेर

प्रतिजैविक (एंटीबायोटिक) एक प्रकार के रसायनिक पदार्थ हैं, जिनका निर्माण कुछ सूक्ष्मजीवियों द्वारा होता है जो अन्य (रोग उत्पन्न करने वाले) सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि को रोकते हैं अथवा उन्हें मार सकते हैं। सर्वप्रथम, 'पेनिसिलिन' नामक एंटीबायोटिक की खोज 1928 में एलेक्जेंडर फ्लेमिंग के द्वारा की गयी थी, जिसने चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन किये। उस समय से आज तक 100 से भी अधिक ऐसे यौगिकों की खोज हो चुकी है, परन्तु खोज के महत्वपूर्ण दशक 1950 और 1960 के मध्य ही रहे। 1987 के बाद से प्रतिजैविकों की नई श्रेणी की खोज की रफ्तार मंद पड़ गई। इस आलेख में नये प्रतिजैविक के खोज की आवश्यकता तथा इसके आविष्कार की वर्तमान परिस्थिति को प्रस्तुत किया गया है।

प्रतिजैविकों के गलत एवं अधिकाधिक प्रयोग के कारण जीवाणुओं में रोग–प्रतिरोधक क्षमता का विकास होता चला गया। इसका आशय यह है कि पहले एंटीबायोटिक्स के प्रयोग से बीमारियों का इलाज कारगर एवं प्रभावी होता था, जीवाणु या रोगाणु समाप्त हो जाते थे, परन्तु पिछले कुछेक वर्षों में इनके अनुचित प्रयोग से जीवाणुओं में प्रतिरोधक क्षमता विकसित हो गई, इनके प्रति एक दीवार बन गई है जिसके फलस्वरूप अब ये काम नहीं कर रहे हैं। इसे इस प्रकार समझते हैं–लगभग 70 साल पहले स्ट्रेपप्टोकोकस जीवाणु और अन्य प्रकार के 95 प्रतिशत जीवाणु पेनिसिलिन के प्रयोग से समाप्त हो जाते थे, पर वर्तमान परिस्थिति में 95 प्रतिशत जीवाणुओं पर उपरोक्त प्रतिजैविक बेअसर है, क्योंकि जीवाणुओं ने अपने शरीर में इससे लड़ने की क्षमता विकसित कर ली है। इस तरह प्रतिजैविक–प्रतिरोधकता (एंटीबायोटिक रेसिस्टेंस) की शुरुआत हुई।

एंटीबायोटिक रेसिस्टेंस के कारण : ज्यादातर मामलों में जीवाणुओं में रोग–प्रतिरोधक क्षमता विकसित होने के कारण निम्नांकित हैं :

1. जीवाणुओं में पारगम्यता या दवाओं को प्रवेश प्रक्रिया का कमतर हो जाना
2. सूक्ष्मजीवों द्वारा दवाओं को शिकाओं से बाहर करने की प्रक्रिया में बढ़ोतरी
3. जीवाणुओं में एंजाइम की अक्रियाशीलता की उत्पत्ति
4. प्रतिजैविक दवाओं के टारगेट्स का ज्यादा एक्सप्रेस होना या उनमें बदलाव आना
5. म्युटेशन के कारण जीवाणुओं का दवाओं या प्रतिजैविकों के प्रति सहनशील होना

उपरोक्त परिस्थितियों में नए–नए प्रतिजैविकों की खोज एक जरूरत बन गई है, परन्तु खोजों के बीच 15–30 सालों का फासला देखा गया है जो एक विचारणीय प्रश्न है। इसके कारणों में तीसरी दुनिया के देशों के प्रति फार्मास्यूटिकल कम्पनियों की सोच एवं दृष्टि में कमी, कठिन एवं थकाऊ प्रक्रिया और बाजार में निवेश से काफी कम का टर्न ओवर या रिटर्न आना प्रमुख है। हालाँकि, विगत कुछ वर्षों में बदलाव देखने को मिल रहा है। अब प्रतिजैविकों की कमी होने से सरकारी तंत्र, उन फार्मास्यूटिकल कम्पनियों को प्रोत्साहन दे रही हैं। यह निश्चित ही आशा की एक किरण है जिससे इस क्षेत्र में तेजी से विकास देखने को मिलेगी।

किसी भी ड्रग की खोज का एक महत्वपूर्ण पहलू है– 'रोग का चयन'। ज्यादातर फार्मास्यूटिकल कम्पनियां एक व्यापारिक उपक्रम होने के कारण उन तथ्यों को दरकिनार

कर देतीं हैं, जो लघु बाजार या आबादी के छोटे उप–समूह को लक्षित करती हैं क्योंकि इससे उन्हें आर्थिक नुकसान या कम मुनाफा होता हैं। वे ऐसे उत्पाद बनाने से बचती हैं, जो निम्न आर्थिक स्थिति या तीसरी दुनिया के देश के लोगों से संबन्धित हैं एवं जिससे लागत व प्रतिशत लाभ के अनुपात में बढ़ोतरी देखी गयी हो। अधिकांश अनुसन्धान उन रोगों के लिए किये जाते हैं, जिनका सीधा सम्बन्ध 'फर्स्ट वर्ल्ड कंट्री' के लोगों से है (जैसेः कैंसर, हृदय सम्बंधित रोग, डिप्रेशन, मधुमेह, फ्लू, माईग्रेन, ओबेसिटी इत्यादि)। प्रतिजैविकों की खोज के तीन महत्वपूर्ण पहलू हैं :

लक्ष्य का चुनाव एवं प्रमाणिकता की प्रक्रिया

इस क्रम में रोग को परिभाषित करना या चिकित्सा की जरूरत को पहचानना, उस रोग के आणविक तंत्र को समझना, उस तंत्र (मेकेनिज्म) के किसी मार्ग (पाथव यथा– कोई जीन, की –एंजाइम, रिसेप्टर या आयन–चैनल आदि) पर कोई चिकित्सीय एजेंट काम कर सकता है या नहीं– उसकी पहचान करना तथा यह दर्शाना कि रोगों के मैकेनिज्म उस टारगेट से सम्बन्ध रखते हैं या नहीं। इसे करने हेतु अनुवांशिकी, पशु–मॉडल या कुछेक विशेष यौगिकों की मदद ले सकते हैं।

खोज की प्रक्रिया

इस चरण में लक्ष्य (टारगेट) पर यौगिकों की क्रियाशीलता को परखने के लिए तीन विधियों को अपनाया जाता हैः इन–विट्रो, इन–विवो एवं एक्स –विवो परीक्षण विधि। मुख्य (लीड) यौगिकों की पहचान हेतु 'यौगिकों की लाइब्रेरी' का प्रयोग, प्रकाशित साहित्य एवं अन्य प्राकृतिक तत्वों की स्क्रीनिंग में तालमेल का होना अति आवश्यक है। फिर ''ड्रग जैसी गुणवत्ता'' को जाँचने के लिए फार्माकोकाइनेटिक्स तथा मेटाबोलिज्म की क्रिया का अध्ययन किया जाता है। अंतिम चरणों में इसकी सुरक्षा (सेफ्टी) की परख की जाती है।

दवाओं के विकास का क्रम

दवाओं के विकास की प्रक्रिया लम्बी एवं जटिल है। इसमें प्री क्लिनिकल ट्रायल से क्लिनिकल ट्रायल तक की क्रिया महत्वपूर्ण है। प्री–क्लिनिकल डेवलपमेंट के विभिन्न चरणों में ड्रग के फोर्मुलेसन, व निर्माण प्रक्रिया, एनालिटिकल विधियों, स्थाईत्व (स्टेबिलिटी), शेल्फ–आयु, विभिन्न शारीरिक तंत्रों पर प्रभावों, दवा की खुराक व् रिस्पांस का लेखा–जोखा, प्रभाविकता, दवाओं की पारस्परिक क्रिया, अर्द्ध–आयु, विभिन्न तरह के विषाक्ता के प्रभावों को परखा जाता है। क्लिनिकल डेवलपमेंट की विधि व्यावहारिक है जिसमें मूलतया फेज–।, फेज–।। व् फेज–।।। ट्रायल्स, दवाओं के अवशेषों की जानकारी व पारिस्थितिक तंत्रों पर प्रभावों का अध्ययन एवं आकलन किया जाता है। आखिरी चरणों में रेगुलेटरी–तंत्र द्वारा नयी दवाओं को अनुमोदित कर इसकी मार्केटिंग एवं विपणन के बाद की निगरानी की जाती है।

वर्तमान परिदृश्य एवं भविष्य की अपेक्षाएं

लगभग 20–25 वर्षों के बाद 'टेक्सोबैक्टीन' नाम के नए एंटीबायोटिक की खोज मैसाचुसेट्स के बोस्टन में नॉर्थइस्टर्न यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिकों की टीम ने की है। यह खोज 7 जनवरी 2005 को 'नेचर' नाम के जनरल में ऑनलाइन प्रकाशित हुई। इस प्रतिजैविक को मृदा में रहने वाले जीवाणु (*Eleftheria terrae*) ('माइक्रोबियल–डार्क मैटर') द्वारा विलग किया गया। इस प्रकार के जीवाणु को "मौजूद, लेकिन प्रयोगशाला में गैर–संश्लेषित" की श्रेणी में रखा गया है। इसके विशिष्ट गुणों के अध्ययन हेतु मृदा के भीतर ही "डब्र्ड आइचिप" नामक विशेष उपकरण काम में लाया गया। इस जीवाणु का चुनाव 10,000 जीवाणु स्ट्रेन की स्क्रीनिंग के उपरांत 25 संभावित जीवाणुओं में से किया गया। सर्वाधिक उपयुक्त जीवाणु अमेरिका के 'मेन' नामक स्थान में घास के मैदान के नीचे पाया गया, जिससे इस नये 'टेक्सोबैक्टीन' नामक प्रतिजैविक की खोज हुई।

'टेक्सोबैक्टीन' की मुख्य विशेषताएं

टेक्सोबैक्टीन, जीवाणुओं की कोशिका भित्री में लिपिड ।। (पेप्टीडोग्लायकन) और लिपिड ।।। (टीकोइक एसिड) पर कार्य कर निष्क्रिय करने में सक्षम है। यह एक संकीर्ण परास का ड्रग है जो 'ग्राम–पोजिटिव' जीवाणुओं पर कार्य करता है। मेथिसिल्लिन–प्रतिरोधी स्टेफिलोकोक्कस ऑरियस या माइकोबैक्टेरियम ट्यूबरकुलोसिस नामक जीवाणुओं पर भी यह प्रभावी सिद्ध हुआ है। अन्य पहलुओं में यह गौर करने

योग्य तथ्य है कि टेक्सोबैक्टीन को फार्मेसी की दुकानों एवं बाजारों तक पहुँचने हेतू अभी एक लम्बी प्रक्रिया से गुजरना होगा। इस सन्दर्भ में यह आशा है कि आने वाले समय में यह प्रतिजैविक 'सुपर रेजिस्टेंस' की श्रेणी में रखा जाएगा एवं इसकी महत्ता लम्बे समय तक जीवनदायी औषधि के रूप में होगी।

जीवाणुओं द्वारा प्रतिरोधक–क्षमता के विकसित होने से बचाव हेतु हमें निम्न बिन्दुओं पर गौर करना होगाः

1. प्रतिजैविक, डिफेन्स का अंतिम ऑप्शन होना चाहिए। ज्यादातर आम संक्रमण समय के साथ, आराम करने, सही आहार, विचार एवं संतुलित जीवन जीने से ठीक हो जाते हैं। इन सबके लिए तुरंत औषधियों पर निर्भरता ठीक नहीं है।
2. प्रतिजैविक बिना योग्य चिकित्सक के परामर्श के लेना उचित नहीं है। अगर लेने की आवश्यकता हो तो पूरी अवधि तक लेना सही होगा।
3. बचे–खुचे तथा एक्सपायर्ड प्रतिजैविकों का इस्तेमाल दुष्प्रभावी होता है।

अंततः यह कहना उचित होगा कि "मानवता के प्रति कम्पैशन एवं विज्ञान के प्रति निष्ठा" ही हमें भविष्य में प्रतिजैविक के क्षेत्र में बदलाव की दिशा एवं सफलता सुनिश्चित कर सकती है।

"सौ हाथी सौ करहट्ठा, पूत निपूती होय। मेहा तो बरसत भला, होंणी हो सो कोय।।
-अत्यधिक वर्षा से भले ही सौ हाथी, सौ ऊँट बह जायें, पुत्रवती स्त्री पुत्र रहित हो जाये फिर भी वर्षा का होना सदा अच्छा है।"
- उजास ग्रन्थ माला से साभार

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

ऊँट पालन - कल, आज और कल

दिनेश मुंजाल,
सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

'ऊँट मरुस्थल का जहाज है' यह कहावत कल, आज और कल के संदर्भ में एकदम उचित है।

कल

ऊँट का प्रयोग बाबरनामा के साहित्य में उल्लेखित किया गया है, ऊँट का प्रयोग आदिकाल से ही हो रहा है। इसकी उपयोगिता को सभी ने माना व सराहा है क्योंकि इसकी विशेषता ही ऐसी है। ऊँट का कई दिनों तक बिना पानी के रहना, रेगिस्तान के वातावरण के अनुकूल बनावट शरीर व विशेष रूप से उसके पैर उसकी उपयोगिता को कठिन परिस्थितियों में सही साबित करते हैं।

ऊँट के महत्व का पता इस बात से भी चलता है कि देवी–देवताओं में भी ऊँट को अपनी सवारी का रूप दिया है अर्थात् इसकी धार्मिक मान्यता भी है। बीकानेर में उष्ट्र–वाहिनी देवी का मंदिर है तथा मेड़ता में भी एक मंदिर ऊँट को लेकर इसकी धार्मिक उपस्थिति दर्शाता है।

सीमा सुरक्षा बल वर्षों से ऊँट का प्रयोग हमारे देश की सीमा की सुरक्षा हेतु कर रहा है। उनके लिए ऊँट से उपयोगी मरुस्थल क्षेत्र में कुछ भी नहीं है क्योंकि यह

ऊँटों के साथ सीमा सुरक्षा बल के जवान

आँधी–बरसात व विपरीत मौसम में भी सीमा पर समान रूप से कार्य करता है। वह भी कई दिनों तक भूखा–प्यासा रह कर भी।

ऊँट का प्रयोग बीकानेर के राज घरानों में भी प्राचीन समय से हो रहा है चाहे ऊँट की राजशाही सवारी हो या एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिए यातायात की बात हो।

ढोला–मारू की कथा को कौन नहीं जानता ? उस समय ढोला–मारू के मिलन में ऊँट की उपयोगिता जग–जाहिर है।

आज

आज के संदर्भ में विश्व में कई जगह ऊँट की उपयोगिता को देखते हुए विभिन्न शोध हो रहे हैं। ऊँट की घटती जनसंख्या आज के संदर्भ में बेहद चिंतनीय है क्योंकि जैसे–जैसे हम मशीनीकरण पर निर्भर होते जा रहे हैं वैसे–वैसे इसका इस्तेमाल भी कम होता जा रहा है। ऊँट को पालना एक सामान्य कृषक के लिए काफी महंगा साबित हो रहा है क्योंकि चरागाहों का सिमटना व शहरीकरण होना भी इसकी घटती संख्या का मुख्य कारण है। हमें इस हेतु निरंतर प्रयास करने होंगे।

कल

आने वाले समय में हमें कृषक व जनता से सीधे संवाद की जरूरत है। इसमें हमें कृषकों को ऊँट की अनदेखी व अनजानी उपयोगिता के बारे में जागरूक करना होगा।

केन्द्र द्वारा चलाए जा रहे ''ऊँटा री बातां'' रेडियो वार्ता ने इस संदर्भ में उल्लेखनीय कार्य कर जन तक इसकी उपयोगिता को बताया जा रहा है। ऊँट के दूध को मधुमेह,

क्षय रोग व त्वचा संबंधी रोगों में तथा मानसिक रूप से कमजोर बच्चों में आश्चर्यजनक सुधार की शोध को आम जनता तक लाना ही इसके भविष्य को सुरक्षित करेगा। ऊँट के दूध से विभिन्न उत्पाद बनते हैं तथा कई बीमारियों में भी इसका इस्तेमाल काफी सराहा जा रहा है। इसे आम जनता तक अलग–अलग माध्यमों से पहुंचाना होगा तभी इसे सरंक्षित किया जा सकेगा।

हमारे केन्द्र में ऊँट के भविष्य को लेकर कई योजनाओं पर समय–समय पर विचार–विमर्श व गोष्ठी द्वारा कृषक व उष्ट्र पालकों को जागरूक किया जाता है तथा भविष्य में हमें गांव–गांव, ढाणी–ढाणी ऊँट के दूध, बाल, चमड़ी के उत्पाद व हड्डी की उपयोगिता भी ऊँट पालकों तक पहुंचानी होगी तभी इसका भविष्य संवर सकता है। इस हेतु सभी को जागरूक कर जनता को इसकी उपयोगिता हेतु अखबार व मीडिया द्वारा ही घर–घर तक पहुंचा जा सकता है।

विदेशों में मुख्य रूप से अरब देशों में ऊँट के दूध के विभिन्न उत्पाद काफी महंगे दामों पर उपलब्ध है। हमें इस हेतु लोगों में दूध के प्रति भ्रान्तियों को दूर कर उन्हें इसके औषधीय गुण के रूप में जागरूक करना ही होगा।

ऊँट की खाल पर आधारित 'उस्ता आर्ट' की देश ही नहीं विदेशों में भी पहचान है। इसकी खाल पर सोने के द्वारा की गई कारीगरी बेहद ही सुंदर प्रतीत होती है तथा काफी महंगे दामों पर उपलब्ध होती है। ऐसा ही इसकी हड्डी के बारे में भी है।

लेकिन हमें मुख्य रूप से इसके दूध के औषधीय गुणों को विभिन्न प्रचार–प्रसार के माध्यमों से आम जनता तक लाना होगा तभी इसका भविष्य संवर सकता है। इस हेतु बहुत ही गंभीर प्रयासों की जरूरत है।

हिन्दी निबन्ध प्रतियोगिता 2016 – पुरस्कृत आलेख

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

मानवीय भावों से परिपूर्ण है: ऊँट

अनिल कुमार बारियां

सहायक प्रोफेसर

राजकीय डूंगर महाविद्यालय, बीकानेर

यथार्थ जगत् में ऊँट एक विशालकाय शरीर धारी जिसमें लम्बी गर्दन, बड़ा शरीर, लम्बी टाँगे, छोटे कान, छोटी पूंछ और कूबड़ आदि शारीरिक संरचना ही हमारे समक्ष उभरती है। परन्तु इसके इतर भी ऊँट का एक चरित्र है। साहित्यकारों की लेखनी जब कल्पना में गोते लगाती हैं तो संवेदनाओं से परिपूर्ण, मानव का सहज साथी और एक संत प्रवृति की छवि, ऊँट की ऊभर कर हमारे सामने आती है। साहित्य, संवेदनाओं को अभिव्यक्ति प्रदान करता है, ये भाव मानवीय हो या चर में विचरण करने वाले जीव जन्तु के प्रति। राजस्थानी साहित्यकारों ने इन्सानी हाव भावों के साथ प्रकृति और पशुओं का भी जीवन्त चित्रण किया है। इस प्रदेश में अन्य चौपाइयों की तुलना में ऊँट का विशेष महत्व रहा है। सरल प्रकृति धारक ऊँट कृषक के साथ कृषक, मजदूर के साथ मजदूर, सैनिक के साथ सैनिक तो कलाकारों के साथ कलाकार भी बन जाता है। बीकानेर में आयोजित 25वाँ अन्तर्राष्ट्रीय ऊँट महोत्सव में कदम ताल करते, नृत्य करते, नख से शिख तक श्रृंगारित होते ये ऊँट किसी भी दृष्टि से मानव कलाकारों से कम नहीं है।

लम्बी ग्रीवाधारी ये जीव केवल करतब ही नहीं दिखाता वरन् इनका शरीर भी कलाओं की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इनके बालों की कलात्मक कतराई द्वारा धरती–अम्बर, भारत का मानचित्र, पनिहारिनें, देवी–देवता, पशु–पक्षी, धर्म गाथाएँ आदि चित्रित की जाती है। जिससे देशी–विदेशी सैलानी अभिभूत हुए नहीं रह सकते। श्रृंगाारित प्रतियोगिताएँ, ऊँट महोत्सव का प्रमुख आकर्षण केन्द्र होती है। जिसमें दुल्हा–दूल्हन का श्रृंगार, फुल–काँच के गोरबंध, मावड़, तिरंगाध्वज, गहने, पैरों में घूंघरु, नथ, बेलबूटों के गोरबंध आदि पर्यटकों के लिए अद्भूत व अद्वितीय, आनन्द का आगार है।

भारतीय कलाकारों के साथ विदेशी कलाकार भी इन प्रतियोगिताओं के सहभागी बनने हेतु आते है और अविस्मरणीय भारतीय संस्कृति को उकेरकर सब को अचम्बभित कर देते है। जापानी ब्यूटीशियन मेमूगी ने शिव और कृष्ण लीला को ऊँट की पीठ पर उकेरकर लोगों को दाँतों तले अंगुली दबाने के लिए विवश कर दिया।

ऊँट नृत्य करते हुए

ऊँट की पीठ पर चित्रकारी

नख से शिख तक श्रृंगारित होने के साथ–साथ ऊँट हमारे युद्ध और युद्धोत्तर कार्यों में अति महत्तवपूर्ण प्राणी है। ऊँटों की उपयोगिता को देखते हुए 1889 में बिट्रिश शासन के दौरान राज्य के तत्कालीन महाराज गंगासिंह ने बीकानेर कैमल कोर (गंगा रिसाला) की स्थापना की थी।

विश्व के कई देशों में ऊँटों के साहसिक कार्यों को बीकानेर अभिलेखागार ने प्रकाशित किया है। चीन का बक्सर विद्रोह, अफ्रीका के सोमाली लैण्ड का विद्रोह; प्रथम विश्वयुद्ध में गंगा रिसाला ने मिश्र में मोर्चा संभालने के साथ कई युद्धों में अद्‌भूत पराक्रम का परिचय दिया है। अभिलेखागार के अनुसार ही सन् 1950 में जैसलमेर की ऊँट सेना में विलय कर दिया गया। 1975 में भारत की उष्ट्र सेना को विघटित कर दिया गया था परन्तु सीमा सुरक्षा बल की बीकानेर कैमल कोर इकाई आज भी विद्‌यमान है। ग्रीष्म ऋतु में आग उगलते धोरों तथा सर्द ऋतु में बर्फीले धोरों पर सीमा की सुरक्षा बिना ऊँटों के कल्पनातीत है।

प्रकृति में समस्त जीवों को वातावरण के साँचे में ढालकर ही उत्पन्न किया है। ऊँट को भी इसी प्रकृति ने ही संरचना प्रदान की है। ऊँट की शारीरिक संरचना की बात करें तो लम्बे गद्‌देदार पैर रेगिस्तानी धरती के अनुकूल ही है। जिसके कारण तपते टीलों पर भी आसानी से दौड़ सकता है। प्रकृति प्रदत झाड़ झखाड़ों को खाकर कई दिनां की उदरपूर्ति एक साथ ही कर लेता है। इस जीव को नियमित दाना–पानी मिल गया तो ठीक वरना सात–आठ दिन तक निर्जला उपवास भी करना पड़े तो भी जीवन की गति संचालित रखता है। विज्ञान की दृष्टि में कूबड़ की जो भी परिभाषा हो, प्रकृति ने जिस आवश्यकता के निमित उसे प्रदान किया हो पर मानव के सिंहासन विराजना और मजबूत पकड़ के लिए जबरदस्त महत्ता रखता है।

लघुमानव के सुख दुःख का साथी ये प्राणो संत सी भूमिका का निवर्हन करता हैं। सर्दी–गर्मी या कोई भी मौसम हो, कोहरा हो, रात हो या दिन हो, कैसा भी वातावरण हो हर पल भक्त और भगवान की प्रवृति अपनाता है अर्थात अपने मालिक के प्रति समर्पण। कृषि मण्डी में घंटो कतार में लगे ऊँट, कृषि में सहायता करने वाला, मेलों–मगरियों में सवारियों को ढोता, पानी की टंकी, चारा आदि को ढोता है कुल मिलाकर ये भार को ढोते हुए मालिक के कई बोझों को कम करता है।

ऊँट केवल बोझ ढोने वाला जीव ही नहीं वरन् पर्दे पर भी कलाकार और वातावरण निर्माण में पूर्ण सहायक है। करन–अर्जुन का दिल छूने वाला मधुर गीत – ''सूरज कब दूर किरन से'' ऊँट गाड़े पर ही फिल्माया गया। मदर इंडिया के परिदृश्य किसी से अछूते नहीं है। राजस्थानी फिल्मों में तो ऊँट प्रेमी–प्रेमिकाओं के मिलन का हेतू भी है। 'रामूचनणा' का मिलन गीत '' धीरे धीरे बोल रामूडा, धीरे धीरे बोल चनणा' म्हारी छाती धड़के, थारा हियो भड़के ...'' तथागीत की पक्तियां आज भी ग्रामीण परिवेश के युवाओं की धड़कन है। आदि से अन्नत तक राजस्थानी फिल्मों में ऊँट आवश्यक ही नहीं वरन् राजस्थानी संस्कृति के प्रकटीकरण के लिए भी इसकी महता है।

साहित्य प्रेमियों ने भी इसकी महता को ध्यान में रखकर अपनी रचनाओं में स्थान दिया है। कहावतें, मुहावरे, लोकगीत आदि में तो इसकी उपस्थिति है ही साथ ही राजस्थानी साहित्य में उष्ट्र श्रृँगार और वीर रस में सहायक है। 'ढोला मारू रा दूहा' में ढोला और मारू के विरह मिलन के बहाने राजस्थान की प्रकृति और संस्कृति से रूबरू करवाया है।

देश विरंगउ ढोलणा, दुःखी हुअया इहाँ आइ।
मन गमता पाम्या नहीं, ऊँट कटाला खाइ।।

मारवाड़ पानी के अभाव तथा अकाल के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ पर ऊँट आदि पशुओं को कंटीली झाड़ियां खाकर ही जीवन निर्वाह करना पड़ता है, मालवणी द्वारा मरूधर की प्रकृति का यथा तथ्य चित्र उपर्युक्त कवितांश में उकेरा गया है।

युगानुरूप आज उष्ट्र विभिन्न कलाओं में पारंगत कर पर्यटन को बढ़ावा दिया जा रहा है। हवेलियां, महल, गढ़, बावड़ियां तो ठीक है, पर जीवित और थिरकती कला को देखने के लिए विदेशी शैलानियों के कदम बीकाणे की तरफ सहज ही चल पड़ते है। इसी कारण आज राष्ट्रीय ऊँट महोत्सव, अन्तर्राष्ट्रीय ऊँट महोत्सव का रूप धारण कर चुका है। पर्यटक इस कला सें सिर्फ आनंद ही नहीं लेते वरन् इसमें प्रवीण भी होना चाहते हैं। पर्यटन विभाग

का इस चहल–पहल से खुशनुमा मिजाज है। क्यों न हो गत 10 वर्षो का रिकॉर्ड धराशाही किया है। बीकानेर की धरा विदेशियों से इस महोत्सव से लबालब रही है। एस.बी. आई. की अस्पताल की शाखा के आधार पर इस बार 1.53 लाख विदेशी मुद्रा का लेन–देन हुआ है।

विज्ञान की दृष्टि से भी ऊँट ओझल नहीं हुआ। विज्ञान ने अपने शोध के द्वारा यह सिद्ध किया हैं कि ऊँटनी के दुध से बने प्रोडेक्ट रोग–प्रतिरोधक क्षमता को मजबूत करता है। स्वस्थ शरीर की कामना के निमित्त प्रोडेक्ट बाजार में सहज उपलब्ध है। उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, जोड़बीड़, बीकानेर द्वारा किये गये विभिन्न प्रयोगों का सुखद परिणाम आज प्रत्यक्ष हो रहे हैं। भारत सरकार के अधीन यह स्वायत संस्था हैं जो ऊँटों के अनुवांशिक संसाधनों, भारवाहकता, दुग्ध उत्पादकता क्षमता, जनन क्षमता, तथा ऊँटो के प्रतिरक्षा तंत्र पर अनुसंधान कर मानव रोगों के निदान एवं उपचार कि उपयोगिता आदि ज्ञात करना विशेष्य प्रयोजन हैं। कुल मिलाकर ऊँट धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक, सभी दृष्टियों से महत्वपूर्ण है, और मानवीय संवेदनाओं का बड़ा जहाज है।

संदर्भ :

बीकानेर अभिलेखागार, बीकानेर
राजस्थान पत्रिका, बीकानेर संस्करण
दैनिक भास्कर, बीकानेर संस्करण
राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, जोड़बीड़, बीकानेर
ढोला मारू रा दूहा–कुशल लाभ
एस.बी.आई. बैंक, अस्पताल शाखा, बीकानेर

"चैत मास मैं बीज ल्हकोवै, बैसाखं मैं केसू धोवै। जेठ मास जे जाय तपतां, तो कुंण रोकै जट्ठ बरसंता।। - चैत्र मास में बिजली न चमके, बैशाख में कुछ वर्षा हो और ज्येष्ठ मास खूब तपे तो फिर वर्षा को कौन रोक सकता है?"
- उजास ग्रन्थ माला से साभार

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

ऊँट की मोरी से कार के स्टीयरिंग तक

उम्मेद सिंह गोठवाल, सहायक आचार्य (हिंदी)
राजकीय लोहिया महाविद्यालय, चूरू

यूँ तो कार पिछले पन्द्रह वर्षों से चला ही रहा हूँ पर स्विफ्ट के रूप में नई गाड़ी के साथ स्मृतियों के सफर पर लौटा हूं। ये कोई छठी–सातवीं कक्षा के दिनों की बात है। शहर से छुट्टियों में गाँव लौटना होता था। ऊँट हमारी कृषि व्यवस्था की रीढ़ हुआ करता था। मैं मोहर सिंह (मोहरसिंगियो) और पृथ्वी सिंह (पिरथियों) तीनों ऊँटों को चरने के लिए रोही में छोड़ने जाते थे। ये रोज का नियम था। कभी आथूणै सिमाणै (पश्चिमी दिशा) में तो कभी दिखणादै सिमाणै (दक्षिण दिशा) में। ऊँटों के पाँव में दावणा लगाकर गिरबाण से मोरी निकाल लेते थे। फिर शाम को तीनों साथ में ऊँटों को वापिस लेने जाते थे। ऊँट सामान्यतः इरणा, कंकेड़ा और जांटी से अपना पेट भरते थे। चरते–चरते वे दो–तीन कोस की परिधि तक चले जाते थे। हमने जहाँ ऊँट छोड़े थे वहाँ से उनके खोजों के निशान के सहारे ढूँढते हुए उन तक पहुँचते थे। मोहरसिंह के पास डाग (ऊँटनी) हुआ करती थी। ऊँटों के मिलने के बाद दावणे खोलकर उनके गले में लटका देते थे और गिरबाण में मोरी डालने के बाद रेगिस्तान के इन जहाजों को हम सच में जहाज बना देते थे। गाँव से दो–तीन कोस की दूरी को हम कुछ मिनटों में तय कर लेते थे। दिन भर के चरे ऊँटो की ताकत गाँव तक पहुँचते मीगणौ के रूप में निकल जाती थी। आज ये सोचकर आश्चर्य होता है बिना किसी पिलाण, तांगड–पट्टिये के ऊँट के अगले आसन पर बैठकर उतना तेज शायद ही कोई ऊँट को दौड़ा सकता हो, कभी हम में से कोई गिरा नहीं, हाँ ये जरूर है कि कभी–कभी दौड़ते समय हम खिसककर ऊँट की गरदन तक आ जाते थे। लेकिन ऊँट समझदार होते थे, रूक जाते थे। पशुओं में ऊँट ही एकमात्र ऐसा पशु है जो अपनी धणी (मालिक) की जान ले सकता है। बिगड़ा ऊँट और बिगड़ी गाड़ी दोनों ही मालिक पर भारी।

खैर ऊँट से गिरने का हमारा कोई किस्सा नहीं रहा। ये किस्सा दादा जी के साथ का है। ऊँट पर घास का बोरा लादकर उस पर भरौटी बाँधकर लाई जाती थी। क्योंकि घर पर दो तीन भैंस हुआ करती थी। सच में सुबह जिसने बिलोवणे में बजती झेरणे की धुन और सुबह निकाली जाने वाली बुहारी में उड़ती मिट्टी की गंध को नथूनो में नहीं भरा वो दुनिया के सर्वोत्तम संगीत व गंध से वंचित ही है। हाँ तो, बोरे और भरौटी को रास से ऊँट के ऐडर के नीचे से लेकर पूँछ के नीचे से ऐसे कसकर बाँधा जाता था कि गिरे नहीं। बोरे और भरौटी के ऊपर बैठना किसी आनन्द से कम नहीं था, मैं वहाँ बैठना चाहता था लेकिन चूँकि ऊँट की मोरी आगे बैठने वाले के हाथ में होती है और जिसके हाथ में मोरी हो उसी के हाथ में कन्ट्रोल। दादा जी ने तमाम हथकंडों और दाँवपेच के बाद भी मुझे आगे बैठने नही दिया। मैं मन मारकर मजबूरी में पिछले आसन पर रास के बीच अपने दोनों पाँव डालकर बैठ गया। गाँव के कुएँ पर ना जाने किससे चिमककर ऊँट तापडिया निकालने लग गया। ऊँचे आसन पर बैठे दादा जी धड़ाम से नीचे आ गिरे। लोगो ने फिर चारपाई पर लिटाकर ही दादा जी को घर पहुँचाया। ईमानदारी से कहूँ मेरे बालपन को उस दिन दुख से ज्यादा खुशी हुई। दादा जी कई दिनों तक हल्दी मिला दूध और मेरी कड़वी दवा कि "लो और बैठ लो आगे" पीते रहे।

आज के युग में विशालकाय पशु

ऊँट के साथ बहुत सारे संस्मरण है। चाहे कुएं से पानी खींचते हुए लाव पर बैठना हो, या घरट और ग्वार के गाटे में चक्कर काटते ऊँट पर बैठना हो, ऊँट का साथ बना रहता था। गर्मियो में रात को अक्सर ऊँट को नहलाने के लिए चौक पर बने कुएँ पर लेकर जाते थे। वहाँ खेत के पास ऊँट को बैठाकर बाल्टियो में पानी भरकर स्टील के गिलास से खुरड़–खुरड़ कर ऊँट को खूब नहलाते थे। भीमकाय शरीर वाला ऊँट नहलाते वक्त किसी बच्चे–सा जमीन पर बिछ जाता था। एक बार हमारा एक ऊँट बहुत खाणा था। मैं उसे अकेला खेळ पर पानी पिला लाया। नतीजा ये हुआ कि चाचा जी ने साळ की कड़ी में रास बाँधकर उल्टा लटका दिया। ऊँट को चराने और छोड़ने के क्रम में एक बार अकेला ही था। वो बारिशों के दिन थे। घर पर लौटते वक्त जोरदार बारिश शुरू हो गई थी। ऊँट ने अपनी गति शिथिल कर दी थी। बारिश के पानी के साथ बहते जा रहे शरीर के खार ने उसे सुकून दिया था। जिस रास्ते से गुजर रहा था वहाँ टीलों के बीच एक घोबी थी। उस घोबी में बारिश में भीगती हुई लड़की नृत्य कर रही थी। सच कहूँ उस दिन मेरा ऊँट इन्द्र का ऐरावत हो गया था और वो लड़की स्वर्ग से उतरी अप्सरा। मैं ऊँट को रोककर उसकी मुग्धता, उसकी तन्म्यता देखकर विस्मित था। जैसे धरती पर वो अकेली और ऊपर झुका आसमां। बादल भी वो दृश्य कभी नहीं भूल पाता।

आज ऊँट की मोरी की जगह कार का स्टीयरिंग हाथ में है। मोहर सिंह ने भी मोरी छोड़कर किताबे थाम ली है। पृथ्वी सिंह ने भी मोरी छोड़कर ट्रेक्टर का स्टीयरिंग थाम लिया है, आज ऊँट से किये जाने वाले सारे काम वो ट्रेक्टर से करता है। पर ऊँट के साथ जो हमारा भावनात्मक रिश्ता है वो किसी मशीन से जुड़ सकता है क्या ? इतना समय बीतने पर आज भी किसी भीगती बारिश में मैं मोरी थामे ऊँट पर बैठा हूँ और एक लड़की मेरे भीतर नाचती है हरदम।

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

घालूं रै टोरड़िया सोनलियौ गिरबाण....

कृष्णा जाखड़, सहायक आचार्य (हिन्दी)
आरजेडी तोला बालिका महाविद्यालय, सादुलपुर, चूरू

दूर–दूर तक फैले रेगिस्तानी धोरों में बालू मिट्टी की हिलोरें उठती रहती हैं। मिट्टी की इन लहरों के बीच पानी की बूंद तक नजर नहीं आती। यहां के जीव को जीने के लिए सबसे अधिक संघर्ष अपनी प्यास के लिए करना पड़ता है। राजस्थान कृषि प्रधान रहा है। यहां का वासींदा अपनी खेती–बाड़ी के साथ–साथ पशुओं पर निर्भर रहा है। वह पशु केवल सहयोग के लिए नहीं पालता, बल्कि पशु उसके व्यवसाय से जुड़े रहे हैं। पानी के अभाव में पशुओं को पालना भी कम संकट नहीं। धोरों के वासींदे ने उन पशुओं को अधिक तरजीह दी जो कम पानी में अपना जीवन बचाना जानते थे। भेड़, बकरी और ऊँट राजस्थान की धरती पर सबसे अधिक उपयोगी साबित हुए। ये पशु अपने पालक को कृषि के साथ–साथ अन्य तरह के लाभ भी मुहैया कराते। भेड़–बकरी ऊन, मांस, खाल, दूध के व्यवसाय से जोड़ती तो वहीं ऊँट इन सभी लाभों के साथ परिवहन का सबसे उपयुक्त और सुरक्षित साधन बना। भले ही वह किसी भी तरीके का परिवहन हो, ऊँट अपना महत्व बनाता गया और राजस्थान की लोक संस्कृति का एक मजबूत हिस्सा बन गया। ऊँट व्यवसाय के साथ व्यक्ति के निजी जीवन में इस प्रकार रच–बस गया कि वह गीतों की लय तक में गाया जाने लगा। राजस्थान के वासींदे के हर–एक रीति–रिवाज, संस्कार, सामाजिक क्रिया–कलापों में ऊँट सहज रूप से शामिल रहा।

मनुष्य–जीवन में तकनीक के हस्तक्षेप ने उसके सामाजिक जीवन में भी बदलाव ला दिया। इस बदलाव से ऊँट का जीवन बड़ी गहराई तक प्रभावित हुआ। इतना गहराई तक कि उसका अस्तित्व संकटों से घिर गया। सुविधाभोगी मानव अपने उस चिर–परिचित सहयोगी से कतराने लगा। नफे–नुकसान के फेर में वह भूल गया कि इस भोले–जीव के साथ उसकी एक पूरी की पूरी संस्कृति खत्म हो रही है। अपने अतीत में जरा झांककर देखें तो ऊँट बड़े ही मोहक अंदाज में हमारे जीवन के ताने–बाने में गढ़ा हुआ है। कृषक परिवार का तो वह एक ऐसा अनिवार्य हिस्सा है, जिसके बिना सोचा ही नहीं जा सकता।

किसान की दैनिकचर्या अपने ऊँट से ही शुरू होती और ऊँट के साथ–साथ ही पूर्ण भी होती। कृषक के घर में बड़ा–सा खुला दालान और उसमें बंधा एक बड़ा व सुंदर पशु। यह पशु किसान का सबसे बड़ा मित्र और सहयोगी। किसी भी परिस्थिति में सहयोग के लिए तैयार। अकाल या अन्य कोई संकट या सुरक्षा के लिहाज से ऊँट हरदम तैनात रहता। कृषक भी अपने इस प्यारे साथी से मन का जुड़ाव रखता। त्योंहारों पर उसे सजाता। मेले में ऊँट का श्रृँगार व्यक्ति को मोह लेता और बस इसी प्रकार ऊँट कृषक के परिवार का एक सदस्य होता।

राजस्थान का व्यापार ऊँट के माध्यम से ही होता। एक गांव के या कहें आसपास के गांवों के लोग इकट्ठे होते और अपनी जरूरत की चीज–बस्त लाने के लिए ऊँटों पर सवार होते। ऊँटों के इस काफिले को 'कतारिया' कहा जाता। सुंदर जवान ऊँट सजे हुए एक कतार में चलते और मीलों का रास्ता तय करते। यह सफर कई दिनों का होता। थकान होने पर कतारिये एक जगह ठहरते, खाना पकाते, खाते और रात्रि में आराम करते। यह ऊँटों की

टोरडिए के साथ सामंजस्य

कतार किसी भी गांव का जीवन था। घर रह गई औरतें देवताओं से मन्नतें मांगती और ऊँटों के देवता के रूप में किसी भी लोक देवता के गीत गाती। गीतों के माध्यम से रात को देर तक जागती। शायद इसके पीछे सुरक्षा की भावना रही होगी। बिना पुरुषों के घरों में देर तक जागना इसी परंपरा के कई हिस्से हैं। जैसे आज भी बरात जाने के बाद औरतें देर तक 'टूंडलिया' या 'टूंटिया' करती है। बस वही सुरक्षा का भाव कतारियों के पीछे–से लोक देवता का रातीजगा करना रहा होगा। पाबूजी, बाळीनाथ आदि कितने ही लोग देवता ऊँटों के देवता के रूप में जाने जाते हैं। पाबूजी की फड़ तो प्रसिद्ध है, औरतें बाळीनाथ का गीत गाती और उसमें ऊँटों के स्वास्थ्य की कामना करती है–

''भोळै अे घूंघट में बाबौ रमे रैयौ जी राज... ऊंचै अे बंधावूं धोळी पाळ बाबा बाळीनाथ.... थारोड़ी पीपी उथरी ओ बाळीनाथ.... लांबी अे घेटी रा ऊँट बाबा बाळीनाथ... छोटै टोरड़ियां री माय ओ बाळीनाथ, पाळी करै किळोळ बाबा बाळीनाथ..... भोळै अे घूंघट में बाबौ रमे रैयौ जी राज...''

औरतें जब अपने दामाद का स्वागत करती हैं तो कतारिया गीत गाती हैं और बड़े ही गर्व से अपने जंवाई के टोरड़े को सबसे सुंदर साबित करती हैं–

''आई रै करवलिया ऊँटां री कतार... ज्यांमें तौ कैयीयौ जी म्हारै लाड जंवाई रौ टोरड़ौ.... घालूं रै टोरड़िया सोनलियौ गिरबाण, मोहरी तौ रेसम डोर री जी म्हारा राज. ... घालूं रै टोरड़िया नागरबेल, ऊंचै तौ बांधूं जी गढ़ रै कांगरै.... प्याऊं रै टोरड़िया समद–झिकोळ, ऊपर तौ मांडूं जी गदरा–छेवटी.... चढ़सी रै टोरड़िया चतर–सुजान....''

राजस्थान की लोक संस्कृति में ऊँट को 'करवा' कहा जाता है। इस संस्कृति में ऊँट गहरे तक समाया हुआ है। होली के आसपास ऊँटों के बाल कतरे जाते हैं और वह इतने सुंदर और मोहक अंदाज में कतरे जाते हैं कि देखने वाला देखता रह जाए। फाग खेलते समय कृषक सबसे पहले रंग अपने ऊँट को ही लगाता है। ऊँट से प्रेम का ऐसा बंधन कि उसके नाक में डाली हुई रस्सी भी इतनी सुंदर और मोहक होती है कि बच्चे उसको पकड़ने की जिद्द करते हैं। गिरबाण तो पीतल, तांबे, चांदी के बने होते हैं जो अनिवार्य होते हुए भी सुंदरता को दर्शाते हैं। सारे पशु घर के पिछवाड़ में बांधे जाते मगर ऊँट लगभग घर के आगे बने दालान में ही बंधता। घर में प्रवेश करने

पाबू जी की फड़ बांचते लोक कलाकार

वाले को सबसे पहले ऊँट ही नजर आता। भाायद वह घर की प्रतिष्ठा होती होगी या फिर सुरक्षा के कारणों से भी आगे बांधे जाता रहा होगा। मगर जो भी हो, ऊँट अपनी गौरवान्वित लंबी गर्दन के साथ सबको मोह लेता।

ऊँटनी बच्चे को जन्म देती तो उसकी प्रसूति बड़ी सावधानी से करवाई जाती। समझदार लोगों की मानें तो ऊँट की प्रसूति सबसे मुश्किलों भरी होती। ऊँट की प्रसूति वाले स्थान को विशेष रूप से साफ रखा जाता और वह स्थान लगभग चारों तरफ से छुपा रहता। उस जगह तक सबकी पहुंच नहीं रहती। जैसे कि स्त्री की प्रसूति के समय होता था। लगभग वैसा–सा ही ऊँट की प्रसूति के समय भी। जब ऊँट का बच्चा छह दिन का हो जाता तो उसकी छठी का उत्सव धूमधाम से मनाया जाता। देवताओं की पूजा–अर्चना की जाती, खीर–हलवा बनाया जाता। परिवार के लोग मीठा भोजन करते, टोरड़िये को आशीष देते।

ऊँट का बच्चा बड़ा सुंदर व चंचल होता है। उसको नजर न लग जाए, इसलिए मिथकों के चलते उसे कई दिन अंदर ही रखते। थोड़ा बड़ा होने के बाद वह अपनी मां के साथ बाहर जाता तो उसके गले में काली डोर में घुंघरू बंधा होता। ऊँट का बच्चा 'टोरड़िया' कहलाता और जब वह जवान, किशोरवय होता तो उसे टोरड़ा या टोरड़ी कहते। खरीदते–बेचते समय सयाने लोग उसकी उम्र का अंदाज दाँतों से लगाते रहे हैं। टोरड़िये की मस्ती चरम पर रहती मगर वह चंचल मस्ती बड़ी शर्मिली होती। टोरड़ा मदमस्त रहता और उसकी ताकत का अंदाजा लगाना मुश्किल। वह अपनी मस्ती के साथ–साथ प्रशिक्षण लेता और समझदार ऊँट बन जाता।

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

सूचना विज्ञान के क्षेत्र में इंफार्मेटिक्स के प्रमुख सूचना उत्पाद एवं पुस्तकालय प्रबंधन

रामदयाल रैगर
वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

'इंफार्मेटिक्स' ने भारत में 1980 से ई–सूचना प्रदान करना शुरू किया था और आज यह भारत में उच्च शिक्षा में ई–सूचना को बढ़ावा देने में अहम भूमिका निभा रही है। इंफार्मेटिक्स का मुख्य उद्देश्य सीखने वालों के लिए ज्ञान एवं सूचना का निर्माण एवं प्रसार करना है। उच्चतर शिक्षा, शोध एवं व्यवसाय के क्षेत्र में इनके प्रयोक्ता है।

प्रमुख सूचना उत्पाद :

1. जे–गेट
2. इंडिया बिजनस इन्साइट (आईबीआई)
3. आई–स्कॉलर
4. ईबुक्स.इन

इनका विस्तृत विवरण इस प्रकार है-

1. जे-गेट :

जे–गेट की शुरूआत इंफार्मेटिक्स इण्डिया लिमिटेड द्वारा सन 2001 में की गई थी। यह वैश्विक ई–पत्रिका साहित्य का ई–गेटवे है। इसमें 47,000 से अधिक जर्नलस जिनमें 23,700 से अधिक मुक्त द्वार जर्नलस भी शामिल हैं, के लेखों के मेटाडेटा डेटाबेस है। पुस्तकालयों एवं कंसोर्शिया की आवश्यकतानुसार जे–गेट में आवश्यक बदलाव किये जा सकते हैं।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद में 'कंसोर्शियम फॉर ई–रिसोर्सिज इन एग्रीकल्चर' (सेरा) इसी प्लेटफार्म पर उपलब्ध करवाया जा रहा है। इसमें ऑन–लाइन जर्नलस डेटाबेस में सर्च कर वांछित लेख प्राप्त किए जा सकते हैं।

2. इंडिया बिजनस इनसाइट (आईबीआई) :

यह एक व्यापक डेस्क–शोध उपकरण है जो कि भारतीय व्यवसायों और उद्योगों को व्यापक, विश्वसनीय तथा उत्तम अनुक्रमित डेटा प्रदान करता है। यह एक प्लेटफार्म पर डेटा समेकित कर स्वचालित रूप से उपलब्ध करवाता है। इमसें 44 उद्योगों के 90 हजार से अधिक कंपनियों तथा 12 हजार उत्पादों के डेटा उपलब्ध होने से इसकी काफी महत्ता है।

3. आई-स्कॉलर

यह इंफार्मेटिक्स द्वारा प्रदत्त 'जर्नलस का संग्रह' है। यह अकादमिक तथा कॉर्पोरेट अनुसंधान खंड के लिए डिलीवरी प्लेटफार्म है। यह भारतीय पत्रिकाओं में पूर्व समीक्षित लेखों का संग्रह है जो कि संस्थानों तथा व्यक्तियों को ब्राउज करने, सब्सक्राइव करने, एक्सेस करने तथा लेख खरीदने की सुविधा प्रदान करता है।

आई–स्कॉलर में अभियांत्रिकी, प्रबंधन, एप्लायड साइंस, कृषि, मेडिकल तथा समाज विज्ञान से संबंधित राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं को शामिल किया जाता है।

4. ईबुक्स.इन :

यह भारतीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशकों दोनों के लिए भारत की पहली और अनूठी पूर्ण सदस्यता वाली ई–पुस्तक पोर्टल है। इसमें वर्तमान में वास्तुकला, ऊर्जा, कृषि, सतत विकास, चिकित्सा विज्ञान विषयों से संबंधित पुस्तकें शामिल हैं तथा दूसरे विषयों को भी इसमें जोड़ने के प्रयास जारी है।

सूचना प्रबंधन समाधान :

1. कोहा :

'कोहा' विश्व की लगभग 3000 शैक्षणिक, सार्वजनिक और विशिष्ट पुस्तकालयों द्वारा उपयोग किया जाने वाला ओपन सोर्स पुस्तकालय स्वचालन सॉफ्टवेयर है। भारत में ब्रिटिश काउंसिल पुस्तकालयों, भारतीय प्रबंध संस्थान, अहमदाबाद और मैसूर विश्वविद्यालय जैसे प्रतिष्ठित पुस्तकालय इस सॉफ्टवेयर का उपयोग कर रहे हैं। 'कोहा' एक बढ़िया सॉफ्टवेयर की तरह ही सभी मॉडयूल उपलब्ध करवाता है।

2. फेडगेट :

'फेडगेट' पुस्तकालय में उपलब्ध एक से अधिक सूचना संसाधनों में उपलब्ध सूचनाओं में से खोजने का एकल खोज बॉक्स है। यह फालतू की जानकारी को रोकता है जिससे शोधकर्ताओं तथा छात्रों की उत्पादकता में वृद्धि होती है। यह शैक्षणिक, सरकारी तथा कॉर्पोरेट क्षेत्र में लगे छात्रों, अनुसंधानकर्ताओं, पेशेवरों तथा पुस्तकालयाध्यक्षों के लिए खोज का अमूल्य उपकरण है।

3. ईजेडप्रॉक्सी :

यह एक रिमोट प्रमाणीकरण सेवा है। यह विश्व की सबसे बड़ी पुस्तकालय सहभागिता 'ओसीएलसी' द्वारा विकसित की गई है। यह एक्सेस और प्रमाणीकरण सॉफ्टवेयर पुस्तकालयों को ई–कंटेंट तक दूरस्थ सुरक्षित ऑनलाइन पहुंच प्रदान करने की सुविधा देता है। इसका उपयोग पुस्तकालय द्वारा प्रदत्त कार्ड नम्बर, पिन या यूजरनेम तथा पासवर्ड डालकर किया जा सकता है।

4. आरएफआईडी :

आरएफआईडी का पूर्ण रूप 'रेडियो फ्रिक्वेंसी आइडेन्टफकेशन' है। पुस्तकालयों में जैसे–जैसे स्वचालन सेवाओं में बढ़ोत्तरी हो रही है, आरएफआईडी तकनीक बेहतर एवं कम लागत वाली स्वचालन समाधान बनकर उभरी है। पुस्तकालय आरएफआईडी सक्षम होने के लिए टैग और स्टाफ स्टेशन के मूल कार्यान्वयन से शुरूआत कर सकते हैं। इस तकनीक से पुस्तकों/प्रकाशनों के आने–जाने, खोजने तथा सही जगह स्थानापन्न में मदद मिलती है।

अधिक जानकारी के लिए http://www.informaticsglobal.com पर विजिट किया जा सकता है।

"देश की एकता के लिए एक भाषा का होना जितना आवश्यक है, उससे अधिक आवश्यक है- देशभर के लोगों में देश के प्रति विशुद्ध प्रेम तथा अपनापन का होना। यदि आज हिन्दी मान ली गई है, तो वह अपनी सरलता, व्यापकता और क्षमता के कारण। वह किसी प्रान्त की भाषा नहीं है, बल्कि सारे देश की भाषा है।"
- नेताजी सुभाषचन्द्र बोस

धन का लेन-देन ऑनलाइन कर खुद को बीमारियों से बचाएँ

एफ.सी. टुटेजा, वरिष्ठ वैज्ञानिक, ए.के. नागपाल, प्रधान वैज्ञानिक एवं अविनाश कुमार शर्मा, अनुसंधान सहायक

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान, केन्द्र बीकानेर

हम सबको 08 नवंबर 2016 सायं का वो समय याद होगा, जब हमारे माननीय प्रधान मंत्री जी ने 500 व 1000 रुपये के पुराने नोटों को कानूनी रूप से मान्य नहीं रहने बाबत सूचित किया। इसके विभिन कारण बताए गए जिसमें विशेषतया कालेधन पर प्रहार, आतंकवाद फंडिंग में कमी लाना, ई–लेन देन को बढ़ावा देना इत्यादि थे। इस लेख के माध्यम से हम आपको धन का लेन–देन ऑनलाइन कर खुद को बीमारियों से बचाव के बारे में कुछ जानकारी देने का प्रयास कर रहे हैं।

क्या आप जानते है कि आपकी जेब एवं तिजोरी में पड़ा धन किसी को बिना बताए, आपको सीधे–सीधे बीमार कर सकता है, अगर नहीं जानते तो अब जरुर जान लो!

जब भी हम किसी परिचित व्यक्ति से मिलते हैं, तो कई बार हम हाथ नहीं मिलाते और कहते हैं कि जुखाम हो रहा है, तुम्हे भी जुखाम लग जायेगा ! तात्पर्य यह है कि हम सब जानते हैं कि जुखाम वायरस से होता है और वायरस हाथ मिलाने मात्र से ही दूसरे स्वस्थ व्यक्ति में फैल सकता है एवं संक्रमण कर सकता है। ऐसे में हम थोडा दूर बैठकर बाते करते हैं और जरुरत अनुसार रुपयों का लेन–देन कर लेते हैं और बाद में एक दूसरे को दूर से हाथ जोड़ कर चल देते हैं, और समझते हैं कि हमने अपने आप को बीमारी अथवा जुखाम से बचा लिया है, वास्तव में हम दूसरे व्यक्ति को बीमारी के वायरस या बैक्टीरिया दे चुके होते हैं, चूँकि जिन रुपयों का लेन–देन हमने बेहिचक ईमानदारी के साथ किया है, ये रुपये रोगाणुओं के लिए प्रवाहक का काम कर रहे होते हैं।

कैशियर से लेकर भिखारी तक हर जगह मुद्रा नोट हस्तांतरण होता है, इसलिए संक्रामक रोगों को फैलाने वाले प्राथमिक स्रोतों में से यह एक है। क्यों और कैसे इस प्रकार के रोगाणु मुद्रा पर पाए जाते है, आइये जाने (1) संदूषण नाक स्राव, खांसी, छींकने के दौरान मुद्रा नोट दूषित हो जाते हैं और रोगाणुओं के हस्तांतरण के प्राथमिक स्रोत बनते हैं, (2) नोटों की गिनती करते समय उंगलियों पर लार अथवा थूक लगाने से भी रोगाणुओं का हस्तांतरण होता है (3) मुद्रा नोट जब खुले घावों या हाथों पर खरोंच के संपर्क में आते हैं तो इन घावो से रोगाणु नोटों में स्थानांतरित हो जाते हैं (4) मुद्रा नोट अक्सर हमारे शरीर की गर्मी से गर्म रहते हैं और यहां तक कि हमारे शरीर की नमी को भी अवशोषित कर लेते हैं, यह नमी बैक्टीरिया को तेजी से बढ़ने में मददगार होती हैं। (5) हर कोई अपनी पर्स में नकदी नहीं रखता, कुछ लोग जेब में अन्य दूषित वस्तुओं के साथ भी नकदी रखते हैं, और कुछ लोग तो अपने इनरवियर में भी नकदी रखते हैं (6) हमारी परम्पराएँ जैसे कि विवाह इत्यादि में मुद्रा नोटों एवं सिक्को का गलियों आदि में उछालना भी नकदी को दूषित करता है। इसलिए कोई आश्चर्यचकित नहीं होना चाहिए कि नकद सूक्ष्मजीवों का वाहक है।

कागज मुद्रा और सिक्के सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए एक जोखिम हो सकता है। भोजन और मुद्रा के एक साथ संचालन से नोसोकोमीअल संक्रमण हो सकता है। अस्पताल से बरामद की गई मुद्रा स्टेफाईलोकोक्स ऑरियस से अत्याधिक दूषित हो सकती हैं। साल्मोनेला, ईस्चेरचिया

कोलाई और स्टेफाईलोकोक्स ऑरियस आम तौर पर खाद्य पदार्थों की दुकानों से प्राप्त की गई मुद्रा पर अधिक होता हैं। प्रयोगशाला सिमुलेशन से पता चला कि मेथिसिलिन प्रतिरोधी स्टेफाईलोकोक्स ऑरियस आसानी से सिक्कों पर जीवित रह सकते हैं, जबकि ई–कोलाई, साल्मोनेला और वायरस (मानव इंफ्लूएंजा वायरस, राइनोवायरस, हेपेटाइटिस–ए वायरस और रोटावायरस) हाथ के संपर्क माध्यम से प्रेषित किया जा सकता है। एक इन–विट्रो अध्ययन में पाया गया कि स्टेफाईलोकोक्स ऑरियस कमरे के तापमान पर 8 दिनों के लिए भारतीय कागज मुद्रा पर जीवित रहने में सक्षम था। अनुसंधान ने यह खुलासा किया है कि बलगम के साथ फ्लू वायरस 17 दिनों तक जीवित रह सकता है।

न्यू–यॉर्क के स्वास्थ्य आयुक्त ने एक शोध में पाया कि मुद्रा के एक नोट में 135000 रोगाणु होते हैं जबकि अन्य शोध में 126000 रोगाणु होने का पता चला।

बॉश–स्टेन अनुसंधान से पता चला चला कि 1997 के दौरान परिचालित दक्षिण–अफ्रीकी बैंक नोटों में से 90 प्रतिशत नोट, बैक्टीरिया अथवा फफूंद के साथ दूषित थे।

क्षेत्रीय परिष्कृत उपकरण केन्द्र (आर.एस.आई.सी.) मद्रास ने एक अध्ययन में तपेदिक, दिमागी बुखार, टॉन्सिलिटिस, पेप्टिक अल्सर, गले में संक्रमण, जननांग पथ संक्रमण आदि पैदा करने वाले रोगाणुओं से भारतीय मुद्रा नोटों को दूषित पाया।

रोग नियंत्रण और रोकथाम केंद्र (सी.डी.सी.) अमरीका का अनुमान है कि फ्लू संबंधी कारणों से हर साल 36000 अमेरिकी मारे जाते हैं, इनमें से 10 प्रतिशत लोगों को फ्लू कागजी मुद्रा से होता हैं। फॉरेंसिक साइंस इंटरनेशनल की जाँच में 92 प्रतिशत अमेरिकी मुद्रा नोटों पर कोकेन के नामोनिशां मिले, ये कोकेन के नामोनिशां, हेपेटाइटिस–सी का स्रोत बनते हैं।

सन 2000 में लंदन में 5000 बैंक नोट्स पर एक शोध अध्ययन ने साबित कर दिया था कि 99 प्रतिशत मुद्रा नोटों पर कोकेन का नामोनिशां था। अनुमान लगाया गया था कि ब्रिटेन में प्रति वर्ष 200000 हेपेटाइटिस सी के मामले रिकॉर्ड होते हैं, जिनमें से कम से कम 5000 हेपेटाइटिस–सी के मामले मुद्रा नोटों के कारण होते हैं।

दंत चिकित्सा क्लिनिक के अंतरराष्ट्रीय जर्नल से अनुसंधान निष्कर्ष– अनुसंधानकर्ताओं ने नाम–निर्देशन के 25 मुद्रा नोट (5 नोट प्रत्येक 5 रु., 10 रु., 20 रु., 50 रु. व 100 रु.) दैनिक सब्जी बाजार, रिहायशी घर, दुग्ध पार्लर, भिखारी, बैंक, पान की दुकानें, पेट्रोल बंक, मोची आदि जैसे विभिन्न स्त्रोतों से एकत्र किए। अध्ययन में पाया गया कि सभी नोट विभिन्न स्वास्थ्य जोखिम सूक्ष्मजीवों के साथ दूषित थे।

जीनोमिक्स और इंटीग्रेटिव जीवविज्ञान संस्थान, दिल्ली में वैज्ञानिकों ने विभिन्न संप्रदायों के रुपयों का अध्ययन किया। नोट किराने की दुकानों, चिकित्सा दुकानों और सड़क विक्रेताओं से एकत्र किए गए। नोटों पर विभिन रोगाणु होने का पता चला। विशेष यह है कि डी.एन.ए. परीक्षण में 78 प्रकार के रोग जनकों का पता चला जिनमें से कुछ जीन इरिथ्रोमाइसिन और पेनिसिलिन के लिए भी प्रतिरोधी थे। इसका मतलब यह है कि अगर इन रोगजनकों द्वारा रोग हुआ तो उपरोक्त एंटीबायोटिक दवाएँ इलाज करने में प्रभावी नहीं होंगी।

नकदी रहित जीवन शैली के समर्थकों ने बिलों के ई–भुगतान की सुविधा और दक्षता को इंगित किया। लेकिन एक बेहतर तर्क यह भी है कि नकद, जो अनगिनत अनजाने लोगों के हाथों में बदल गया है, सेहत की दृष्टि से शायद अच्छा न हो। छोटे नोटों का अधिक बार उपयोग किया जाता है, इसलिए यह बड़े नोटों की तुलना में अधिक लोगों के हाथों में जाते हैं, इसलिए अधिक दूषित हो सकते हैं, अतः उभरते हुए स्मार्टफोन भुगतान विकल्पों को भी अपनाने की अधिक जरुरत है।

मुद्रा नोटों से पूरी तरह से रहित भौतिक दुनिया की कल्पना करना असंभव है। शोधकर्ता लेन–देन के बीच पैसे को साफ करने के तरीकों पर काम कर रहे हैं। एक मशीन के माध्यम से पुराने नोटों को कार्बन डाइऑक्साइड में एक विशिष्ट तापमान और दबाव पर पार करने से, दबाव नोटों में समाए तेल एवं गंदगी को साफ करता है एवं तापमान

रोगाणुओं को मारता है।

अमेरिकी डालर अभी भी कपास और सनी के मिश्रण से बना है, जिसमें बैक्टीरिया का विकास, प्लास्टिक पॉलिमर की तुलना में अधिक होता है। कई देशों में प्रचलित प्लास्टिक पॉलिमर के नोटों में बैक्टीरिया कम पनपते हैं एवं प्लास्टिक मुद्रा को आसानी से धोया जा सकता है।

कई कारकों में से निजी स्वच्छता एक ऐसा कारक है जो जीवाणु विविधता के बढ़ने में योगदान करता है। अच्छा यह है कि आप नियमित रूप से अपने हाथ धोकर, हाथों को साफ रखें।

धन लेन–देन के व्यापार के पारंपरिक तरीकों का प्रतिस्थापन इलेक्ट्रॉनिक तरीके से करना वर्तमान की जरूरत है।

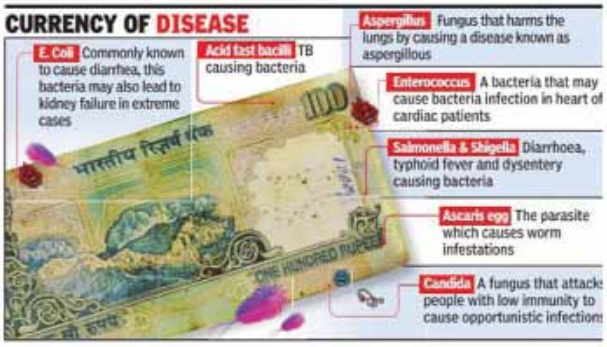

स्रोत : द टाइम्स ऑफ इंडिया, अक्टूबर 17, 2015

उपवास - शरीर पवित्रता का साधन !

देवाराम काकड़
योग एवं नैचुरोपेथी विशेषज्ञ
श्रीमती फूसीदेवी योगा एण्ड नैचुरोपेथी संस्थान, बीकानेर

उपवास का महत्व

उपवास क्यों और कैसे करें (फास्टिंग) ?

उपवास एक प्राकृतिक स्थिति है। प्रकृति की मांग हैं। पशु, पक्षी आदि सभी जीवधारियों को उपवास की जरूरत पड़ती हैं, जो स्वाभाविक हैं। रोगी पशु, रोगी मनुष्य से अधिक समझदार होता है, जो रोगावस्था में अच्छे से अच्छे घास या चारा नहीं खाता। कारण हैं कि रोगावस्था में कुछ खाना विष और कुछ न खाकर उपवास करना अमृत तथा रोग की औषधि हैं। हम जब बीमार होते हैं, तो हमारी भी भूख स्वभावतः बन्द हो जाती है, पर हम बुद्धिशील प्राणी होते हुए भी प्रकृति के आदेश को नहीं मानते और रोगी होने पर भी कुछ न कुछ खाते ही रहते हैं, जिससे बीमारी ज्यादा होने की संभावना रहती है। रोग होने पर रोग के कारण विजातीय द्रव्य को दूर करने का उपवास एक प्रबल साधन है। उपवास काल में शरीर की सारी जीवन शक्ति केवल रोग को दूर करने में लग जाती है और उसे दूर करके ही दम लेती हैं। विधि पूर्वक उपवास के माध्यम से शरीर को स्वयं का उपचार करने की आंतरिक शक्ति को अधिकतम कार्यक्षम बनाया जा सकता है। सम्पूर्ण विश्राम अवस्था में शरीर में पानी अथवा फलों के रस के अलावा कुछ नहीं लेना उपवास कहलाता है।

संसार की बात तो नहीं कह सकते परंतु भारत देश में आदि काल से उपवास का बहुत अधिक महत्व रहा है। हमारी धार्मिक पुस्तकों में उपवास को शारीरिक और मानसिक पवित्रता का एक साधन माना गया है। उपवास की यह परम्परा जैन धर्मावलम्बियों में विशेष रूप से और अन्य हिन्दुओं में साधारण रूप से चली आ रही है। उपवास आध्यात्मिक स्वच्छता के लिए अपूर्व एवं एक ही उपाय हैं किंतु उसका सम्पूर्ण लाभ उसी को मिलता है जो उपवास विधि का पूरा ज्ञान रखता हों। उपवास का वास्तविक ज्ञान न होने, या उपवास नियमों का ठीक प्रकार पालन न होने पर उसका परिणाम लाभदायक नहीं होता है।

गंभीर रोगों से ग्रसित व्यक्ति को जीवन शैली में वांछित बदलाव करना जरूरी होता है। उपवास करने के बाद जीवन शैली में बदलाव करना आसान हो जाता हैं। उपवास की सबसे उत्तम और सुरक्षित विधि फलों के रस पर आधारित है। केवल पानी पर आधारित उपवास भी प्रचलित है और बहुत वर्षों पुराना उपवास का विधान हैं। लेकिन प्राकृतिक चिकित्सा के अनुसार उपवास संबंधी मत हैं कि फलों के रस पर आधारित उपवास सुरक्षित और अधिक सफल रहता है।

उपवास प्रारम्भ करने से पूर्व प्राकृतिक चिकित्सा उपचार विधि एनीमा लगाकर आंतों की भली प्रकार सफाई कर लेना चाहिए। अवशिष्ट पदार्थ आंतों में जमे रहेंगे तो पेट में गैस बनने से तकलीफ होगी। बाद में उपवास की अवधि में एक दिन छोड़कर एनीमा लेने से अधिक सफलता मिलती है। जब प्यास लगे तो सामान्य गर्म पानी पर्याप्त मात्रा में पीना चाहिए। आप चाहें तो ज्यूस में भी पानी मिलाकर पी सकते हैं। दिन भर में कुल तरल 8 से 10 लीटर पीया जा सकता है। उपवास के दौरान शरीर में एकत्रित विजातीय पदार्थ भस्म होने लगते हैं और (टाक्सिक मेटर) शरीर से बाहर निकलने लगते हैं। इस निष्कासन की प्रक्रिया को गति देने के लिए हम पानी के बजाय फलों का रस इस्तेमाल करते हैं। (अल्केलाईन) इससे यूरिक एसीड व अन्य विजातीय पदार्थ आसानी से निष्कासित होंगे। हां, ज्यूस में जो शर्करा होती हैं, उससे हृदय को भी शक्ति मिलती रहेगी। हरी सब्जियों के रस में और फलों के रस में जो विटामिन, मिनरल्स और सूक्ष्म पौषक तत्व होते हैं वे हमारे शरीर की प्रणालियों को चुस्त–दुरूस्त बनाने में जुट जाते हैं। सभी ज्यूस ताजे फलों और सब्जियों से

निकालकर तुरंत पीना चाहिए। फ्रीज में रखे पानी व ज्यूस लाभदायक नहीं होते हैं।

उपवास कम से कम 5 दिन और अधिकतम 40 दिन तक का किया जा सकता है। उपवास की अवधि में आपको थकावट, उल्टी होने, दस्त लगना, पेट में दर्द होना, पेट फूलना, जोड़ों में दर्द, चमड़ी में खुजली होना, घबराहट आदि सामान्य लक्षणों का अनुभव होगा। यह इसलिए होता है कि विजातीय पदार्थ बाहर निकलने की प्रक्रिया में ज्यादा मात्रा में रक्त प्रवाह में आ जाते हैं। रक्त में इनकी मात्रा ज्यादा होने से उपरोक्त लक्षण प्रकट होते हैं।

सावधानियाँ

उपवास के दौरान शरीर में उपस्थित विजातीय पदार्थों को बाहर निकालने में काफी ऊर्जा खर्च होती है। इसलिए रोगी को संपूर्ण विश्राम की सलाह दी जाती है। मानसिक तनाव बिल्कुल भी नहीं रहना चाहिए। मन को शान्त समभाव में रखें। उपवास के समय तथा उसके उपरांत बहुत दिनों तक शरीर की हालत बहुत ही नाजुक होती है। अतः इन अवसरों पर औषधियों आदि को प्रयोग करने से शरीर पर बुरा प्रभाव पड़ता है। उपवास काल में किसी उपद्रव के होने पर या तबीयत गड़बड़ाने पर सीधे सादे प्राकृतिक चिकित्सा उपचार का ही सहारा लेना युक्ति संगत हैं। उपवास काल में यथासम्भ व खुली हवा में रहना और सोना चाहिए। प्रातःकाल खुले बदन कुछ देर तक धूप में बैठना चाहिए, क्योंकि शरीर का तापमान घट जाने पर या देह के भिन्न–भिन्न अवयवों में रक्त संचार की क्रिया बढ़ाने के लिए प्राकृतिक मालिश लाभकारी होती है।

उपवास कैसे तोड़े ?

उपवास भंग करते समय बहुत सावधानी, अतीव सतर्कता तथा कठोर आत्म संयम की आवश्यकता होती हैं। उपवास के दिनों में पाचन–शक्ति क्षीण होकर बहुत दुर्बल पड़ जाती है। इसलिए उपवास समाप्ति के समय बहुत सतर्कता के साथ अत्यंत हल्का भोजन, अल्प मात्रा में लिया जाना अनिवार्य है। उपवास भंग करने के लिए पानी समान तरल पदार्थ लेना चाहिए और साग सब्जियों का सादा रस (सूप), कच्चे नारियल का पानी, रसदार फलों का रस जैसे–सन्तरा, मौसम्बी आदि।

दूध इस काम के लिए उपयोगी नहीं हो सकता। क्योंकि दूध एक पूर्ण भोजन है। वह उपवासी की निर्बल आंतों के लिए भार स्वरूप ही सिद्ध होगा। जितना सुपाच्य, शीघ्र पाच्य, व हल्का भोजन उपवास तोड़ने के लिए लिया जाएगा, उतना ही वह गुणकारी व स्वास्थ्य वर्द्धक सिद्ध होगा और उपवासी की दशा सुधार में उतनी ही जल्दी होने की संभावना रहेगी। लम्बे उपवासों में उपवास तोड़ने के बाद कुछ काल तक केवल साग–सब्जियों पर रहना व कुछ दिनों तक फलों पर रहना चाहिए और तदुपरांत धीरे–धीरे अन्न भोजन पर आना चाहिए। लम्बे उपवासों की दशा में तरल खाद्य जितना लम्बा उपवास हो उसके तिहाई समय तक चलाना चाहिए।

विशेष

उपवास विधि का प्रयोग करके शराब, धूम्रपान, कोकेन, गांजा आदि मादक द्रव्य सेवन करने की आदत से मुक्ति पाई जा सकती है। साधारण अवस्था में इन पदार्थों का सेवन बंद करने पर जो विथड्राल सिम्पटम पैदा होते हैं वे उपवास करने पर नहीं होते हैं। बहुत से लोगों को आश्चर्य होता है कि उपवास विधि से शराब और धूम्रपान बड़ी आसानी से छोड़ा जा सकता है। मोटापा दूर करने के लिए उपवास विधि का सहारा लेना सर्वोतम उपाय है। एक ताजा अध्ययन में बताया गया है कि उपवास के जरिए कैन्सर रोग में भी अच्छा लाभ हो सकता है।

राजभाषा एवं स्वच्छ भारत अभियान

अश्विनी कुमार रॉय
वरिष्ठ वैज्ञानिक
राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)

आधुनिक हिन्दी के निर्माता श्री भारतेंदु हरिश्चंद्र जी की भाषा के संबंध में लिखे गए ये शब्द हमारे लिए आज भी एक अभूतपूर्व प्रेरणा का स्रोत हैं कि निज भाषा के बिना हमारी उन्नति नहीं हो सकती! वैसे हमारे देश के विभिन्न भागों में कई भाषाएँ बोली जाती है फिर भी हिन्दी हमारे देश की एक मात्र ऐसी भाषा है, जो अत्यधिक व्यवहार में लाई जाती है। भारत में सारा राजकाज हिन्दी में होता है, इसीलिए इसे राजभाषा का दर्जा दिया गया है। प्रजातांत्रिक देश में राजकाज की भाषा जनता की भाषा होती है। हमारे देश में लगभग 1652 भाषाएँ बोली जाती हैं, जिनमें से 15 भाषाओं को संविधान में राष्ट्रभाषा के रूप में मान्यता दी गई है। संघ सरकार के राजकाज तथा केंद्र व राज्यों के बीच संपर्क भाषा का उत्तरदायित्व हिन्दी को दिया गया है क्योंकि इसे भारत देश के अधिकांश लोग बोलते तथा समझते हैं। यह भारत की धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक परंपराओं से जुड़ी हुई भाषा है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343 (1) के अनुसार देवनागरी में लिखी जाने वाली हिन्दी संघ की राजभाषा है, लेकिन 343 (2) के अंतर्गत यह व्यवस्था भी है कि संविधान के लागू होने के समय से 15 वर्ष की अवधि तक, अर्थात वर्ष 1965 तक संघ के सभी सरकारी कार्यों हेतु पहले की भांति अंग्रेजी का प्रयोग होता रहेगा। यह व्यवस्था इसलिए की गई थी ताकि हिन्दी न जानने वाले लोग भी हिन्दी सीख जाएँ और हिन्दी भाषा को प्रशासनिक कार्यों के लिए अधिक सक्षम बनाया जा सके।

वर्ष 1950 में हिन्दी को राजभाषा घोषित किए जाने पर यह अनुभव किया गया कि हिन्दी के प्रकाशन कार्य चलाने हेतु कुछ प्रारंभिक तैयारियों की आवश्यकता पड़ेगी जैसे– प्रशासनिक, वैज्ञानिक, तकनीकी एवं विधि–शब्दावली का निर्माण, प्रशासनिक एवं विधि–साहित्य का हिन्दी में अनुवाद, गैर–हिन्दी भाषी सरकारी कर्मचारियों हेतु हिन्दी प्रशिक्षण और हिन्दी टाइपराइटरों एवं टंकण हेतु अन्य साधनों की व्यवस्था करना आदि। शब्दावली निर्माण हेतु शिक्षा मंत्रालय ने 1950 में वैज्ञानिक एवं तकनीकी बोर्ड की स्थापना की। तत्पश्चात प्रशासनिक साहित्य का अनुवाद किया गया। वर्ष 1952 में केंद्रीय सरकार के हिन्दी न जानने वाले कर्मचारियों हेतु शिक्षण कार्य शिक्षा मंत्रालय की देखरेख में प्रारंभ हुआ, किंतु अक्टूबर, 1955 से यह कार्य गृह मंत्रालय के तत्वावधान में हो रहा है। हिन्दी शिक्षण योजना द्वारा देश में हिंदी को बढ़ावा दिया जा रहा है। राजभाषा के संबंध में अनेक सांवैधानिक व्यवस्थाएँ दी गई हैं। राजकाज अधिनियम की धारा 3 (3) के अनुसार अधिकतर कागज–पत्रों के लिए हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग अनिवार्य है। सरकारी कामकाज में हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने के लिए 1976 में राजभाषा नियम बनाए गए जिनसे हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने में काफी सहायता मिली है। केंद्रीय सरकार के जिन कार्यालयों में चतुर्थ श्रेणी को छोड़कर कर्मचारियों की संख्या 25 या इससे अधिक है, वहाँ राजभाषा के प्रचार एवं प्रसार हेतु राजभाषा कार्यान्वयन समितियाँ बनाई गई हैं। राजभाषा के प्रचार एवं प्रसार के बिना हम देश को एक सूत्र में नहीं पिरो सकते। भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में आपसी बातचीत को बढ़ावा देने हेतु एक सशक्त माध्यम की आवश्यकता है, जिसे हिन्दी द्वारा ही पूर्ण किया जा सकता है।

आजकल देश में स्वच्छ भारत अभियान चलाया जा रहा है जिसकी सफलता में हिन्दी की भूमिका सर्वोपरि हो सकती है। प्रधानमन्त्री द्वारा स्वच्छ भारत अभियान की शुरुआत देश को स्वच्छता के प्रतीक के रुप में पेश करने हेतु की गई है। स्वच्छ भारत का सपना महात्मा गाँधी ने भी देखा था परन्तु वे अपने जीवन में इसे साकार नहीं कर

पाए। निर्मलता और स्वच्छता दोनों ही स्वस्थ एवं शांतिपूर्ण जीवन का अंग हैं। यदि स्वच्छता सम्बन्धी आँकड़ो का मूल्यांकन करें तो देश में केवल कुछ प्रतिशत लोगों के घरों में शौचालय है, इसलिए भारत सरकार गंभीरता से बापू का सपना साकार करने हेतु देश के सभी लोगों को इस मिशन से जोड़ रही है। इस मिशन को गाँधी जी की 150वीं पुण्यतिथि अर्थात् 2 अक्टूबर 2019 तक पूरा करने का लक्ष्य है। अभियान को सफल बनाने के लिये सरकार ने सभी लोगों को अपने आसपास साल में सिर्फ 100 घंटे सफाई हेतु समर्पित करने की सलाह दी है।

स्वच्छ भारत अभियान एक राष्ट्रीय मुहिम है जो केन्द्रीय सरकार द्वारा आरम्भ की गई है। यह एक बड़ा आंदोलन है जिसके तहत भारत को 2019 तक पूर्णतया स्वच्छ बनाना है। भारत के शहरी विकास तथा पेयजल और स्वच्छता मंत्रालय के तहत इस अभियान को ग्रामीण और शहरी दोनों ही क्षेत्रों में लागू किया गया है। इस मिशन का पहला स्वच्छता कदम 25 सितंबर 2014 को प्रधानमंत्री द्वारा बढाया गया था। इसका उद्देश्य सफाई व्यवस्था की समस्या का समाधान निकालना एवं सभी को इससे जोड़ कर स्वच्छ पर्यावरण का निर्माण करना है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु इस अभियान का निरंतर चलना आवश्यक है। हमें निम्नलिखित कारणों से स्वच्छ भारत अभियान की अधिक जरूरत है–

- भारत के हर घर में शौचालय होना चाहिए ताकि खुले में शौच की प्रवृति खत्म हो सके।
- लोगों को स्वास्थ्य के प्रति जागरूक करना तथा स्वच्छता नियमों का अनुपालन करवाना
- साफ–सफाई की सुविधा विकसित करने के लिये निजी क्षेत्रों को शामिल करना
- भारत को स्वच्छ एवं हरा–भरा बनाना
- ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वालों का जीवन बेहतर बनाना
- हाथों द्वारा होने वाली साफ–सफाई एवं मैला धोने जैसी व्यवस्था को समाप्त करना
- नगर निगम के कचरे का पुनर्चक्रण द्वारा पुनः उपयोग करना एवं वैज्ञानिक ढंग से मल प्रबंधन
- स्वास्थ्य शिक्षा कार्यक्रमों द्वारा लोगों को निरंतर साफ–सफाई के प्रति जागरुक करना
- देश में गंदगी रहित फ्लश किए जा सकने वाले शौचालयों का निर्माण करना

शहरी क्षेत्रों में स्वच्छ भारत मिशन का लक्ष्य हर नगर में ठोस कचरा प्रबंधन सहित अधिकाधिक स्थानों पर शौचालय उपलब्ध करवाना है। जहाँ घरेलू शौचालय की उपलब्धता कठिन है वहाँ सामुदायिक शौचालय के निर्माण की योजना बनाई गई है। इसी तरह बस अड्डों, रेलवे स्टेशन, बाजार आदि में सार्वजनिक शौचालय की व्यवस्था करनी होगी। शहरी क्षेत्रों में स्वच्छता कार्यक्रम को पाँच वर्षों में अर्थात् वर्ष 2019 तक पूरा करने की योजना है। ग्रामीण स्वच्छ भारत मिशन एक ऐसा अभियान है जिसमें गाँवों को स्वच्छ बनाया जाएगा। ग्रामीण क्षेत्रों को स्वच्छ बनाने के लिये 1999 में भारतीय सरकार द्वारा इससे पहले भी निर्मल भारत अभियान की स्थापना की गई थी लेकिन अब इसे स्वच्छ भारत अभियान–ग्रामीण के रुप में पुनः आरम्भ किया गया है। इसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीणों को खुले में शौच करने से रोकना है। इसके लिये सरकार ने शौचालयों के निर्माण हेतु आवश्यक धन राशि खर्च आबंटित की गई है। कचरे को जैविक खाद् तथा ऊर्जा में परिवर्तित करने की भी योजनाएँ बनाई है जिसमें ग्राम पंचायत, जिला परिषद तथा पंचायत समिति की भागीदारी सुनिश्चित की गई है। स्वच्छ भारत मिशन–ग्रामीण के लक्ष्य इस प्रकार हैं–

- ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे लोगों का जीवन सुधारना
- स्वच्छ भारत बनाने हेतु ग्रामीण क्षेत्रों में साफ–सफाई के लिये लोगों को प्रेरित करना
- साफ–सफाई की सुविधाओं को निरंतर उपलब्ध करवाने के लिये पंचायती राज संस्थाओं एवं समुदायों को प्रेरित करना
- ग्रामीण क्षेत्रों में ठोस व द्रव कचरा प्रबंधन पर विशेष ध्यान देना
- गाँव के लोगों को निरंतर साफ–सफाई और पारिस्थितिकी सुरक्षा हेतु प्रोत्साहित करना

केन्द्रीय मानव संसाधन मंत्रालय द्वारा स्वच्छ भारत, स्वच्छ विद्यालय अभियान भी चलाया गया था जिसका मुख्य उद्देश्य स्कूलों में स्वच्छता लाना है। इस कार्यक्रम के तहत केन्द्रीय विद्यालयों तथा नवोदय विद्यालयों में कई कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं जिनसे स्वच्छता के प्रति

छात्रों में जागरूकता बढ़े, छात्रों द्वारा सप्ताह में दो बार साफ–सफाई अभियान भी चलाया जाता है जिसमें शिक्षक, विद्यार्थी और माता–पिता सभी भाग ले सकते हैं। संक्षेप में कहा जा सकता है कि वर्ष 2019 तक भारत को स्वच्छ और हरा–भरा बनाने के लिये स्वच्छ भारत अभियान एक स्वागत योग्य कदम है। एक लोक कहावत में ठीक ही कहा गया है कि स्वच्छता ईश्वर की ओर बढ़ने वाला पहला कदम है। अतः हम विश्वास से कह सकते है कि अगर भारत की जनता इसका अनुसरण करती है तो आने वाले कुछ ही वर्षों में स्वच्छ भारत अभियान से पूरा देश एक सुन्दर दर्शनीय स्थल बन जाएगा।

यदि देश के सर्वांगीण अवकाश हेतु स्वच्छता का महत्त्व अत्यधिक है तो स्वच्छता के प्रति देश को जागरूक करने के लिए राजभाषा हिन्दी का होना भी अत्यंत आवश्यक है। जिस तरह सभी लोगों को साफ–सफाई अच्छी लगती है उसी तरह हिन्दी भाषा देश के सभी लोगों को आपस में जोड़ती है। देश में स्वच्छता के प्रति जागरूकता लाने के लिए जन–जन को शिक्षित करना होगा जो केवल हिन्दी जैसी राजभाषा के माध्यम से ही संभव हो सकता है। हमें अपने देशवासियों को साफ–सफाई हेतु प्रेरित करना होगा ताकि वे स्वस्थ नागरिक बन सकें। राजभाषा हिन्दी जहाँ लोगों को परस्पर निकट लाती है वहीं देश के स्वच्छता अभियान को निरंतरता प्रदान करने में सहायक सिद्ध हो सकती है। अतः कहा जा सकता है कि राजभाषा हिन्दी का प्रचार एवं प्रसार तथा स्वच्छता अभियान दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं। इनके सफल होने पर ही हिन्दी देश के हर नागरिक की भाषा बन सकती है तथा हिन्दी द्वारा लोगों के एक दूसरे के निकट आने पर ही स्वच्छता अभियान में आशातीत सफलता प्राप्त की जा सकती है।

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र - एक भ्रमण

अनिता गोयल, व्याख्याता (हिन्दी साहित्य)
राजकीय डूंगर महाविद्यालय, बीकानेर

समय का प्रवाह तो अपनी ही गति और लय में चलता रहता है, पर कभी ऐसा आभास होता है कि समय जैसे ठहर सा गया है और कभी महसूस होता है कि समय भाग रहा है या पंख लगाकर उड़ रहा है। मध्यमवर्गीय परिवारों की भाग–दौड़ भरी दिनचर्या और अपने कॉलेज की व्यस्तता के बीच मुझे भी अहसास होता है कि समय मानो भाग रहा है।

आज 12 फरवरी 2018 का दिन कुछ अलग–सा है। सुबह–सुबह की भागम–भाग नहीं क्योंकि परिवार के अन्य सभी सदस्य किसी कार्यवश शहर से बाहर गए हुए हैं। सुबह 5.30 बजे प्रकृति के सहचर्य से दिन की शुरूआत। बॉलकनी में चाय पीते हुए सुबह की ठण्डी–ठण्डी हवा के साथ उगते हुए सुबह की कच्ची कच्ची धूप बड़ी सुखद अहसास करा रही थी, मन प्रफुल्लित हो उठा। चिड़ियों की चहचहाट, मन्दिरों से आती आरती की ध्वनि मन को तल्लीन कर रही थी। दैनिक कार्यो के पश्चात कॉलेज पहुँचना हुआ। प्रफुल्लता के साथ अपने कार्यो को सम्पन्न किया। विभाग में अन्य साथियों के साथ बातचीत के दौरान रेगिस्तान के जहाज ऊँट की चर्चा चल निकली। इसी चर्चा के तहत बात उठी कि ऊँट से सम्बंद्ध एकमात्र उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र बीकानेर में है। बीकानेर निवासी होने पर भी मैंने यह केन्द्र पूर्व में देखा नहीं था। अतः सहसा लालसा जगी इस केन्द्र का अवलोकन करने की। साथियों के साथ मिलकर तय किया गया कि कॉलेज समय के पश्चात इस केन्द्र का अवलोकन किया जाए। हम चारों साथी डॉ. सुचित्रा कश्यप, डॉ. ब्रजरतन जोशी, डॉ. अनिल बारिया और मैं राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र पहुँच गए।

केन्द्र में उष्ट्र सवारी हेतु तैयार ऊँट गाड़ी

बीकानेर शहर से लगभग 10 किलोमीटर दूर जयपुर–जोधपुर हाइवे पर बना भव्य परिसर आकर्षण का केन्द्र है। सम्पूर्ण केन्द्र लगभग 689 हैक्टैयर में फैला है।

ठण्डी हवा, सुखद वातावरण हमारे भ्रमण को रूचिकर बना रहा था। हमारे साथी डॉ. ब्रजरत्न जोशी जी के परिचित श्रीमान नेमीचन्द जी ने द्वार पर गर्मजोशी से हमारा स्वागत किया। परिसर में प्रवेश के साथ ही यहाँ की स्वच्छता, हरियाली और व्यवस्था ने हमें मोहित कर दिया। करीने से कटे पौधें तराशी हुई कलाकृतियों का आभास दे रहे थे। जगह–जगह सूचनाओं को दर्शानें वाले साइन बोर्ड केन्द्र की व्यवस्था कुशलता का परिचय दे रहे थे।

हमने सर्वप्रथम यहाँ संग्रहालय का अवलोकन किया। व्यवस्थित तरीके से ऊँटों के सम्बंध में सम्पूर्ण जानकारी प्रदान करने वाला यह संग्रहालय दर्शनीय है। ऊँटों की चार प्रकार की प्रजातियों से यहाँ हमारा परिचय हुआ। बीकानेरी, जैसलमेरी, मेवाड़ी व कच्छी प्रजाति के ऊँट अपने–अपने विशिष्ट गुण के कारण प्रसिद्ध है। इन चारों ही प्रजातियों के रूप–आकार को प्रदर्शित करने वाले सुन्दर चित्र यहाँ मौजूद है। ऊँट के वास्तविक चर्म से बना स्टेच्यू, पीतल तथा धातु से बने स्टेच्यू बरबस ही अपनी तरफ ध्यान आकर्षित कर रहे थे। यहीं संग्रहालय से हमने ऊँटों के विभिन्न कार्यो की जानकारी प्राप्त की। वास्तव में ऊँट रेगिस्तानी रेत के समुद्र का वास्तविक जहाज है। यहाँ के लोगों की दिनचर्या का साथी होने के साथ–साथ सीमाओं की रक्षा पर तैनात हमारे जांबाज सैनिकों का वफादार साथी भी है। संग्रहालय में ऊँट के चर्म से बने बर्तन, वस्त्र, सजावटी सामान इत्यादि देखकर अहसास हुआ कि जीवन भर अपने स्वामी की सेवा

केन्द्र का आकर्षक उष्ट्र संग्रहालय

करता हुआ ऊँट मृत्यु के पश्चात भी मानव को कुछ देकर जाता है। ऊँट के बालों से बनी रस्सियाँ, जैकेट, कम्बल इत्यादि भी अवलोकनार्थ प्रदर्शित है। भीषण गर्मी से तपती रेत शीतकाल में उतनी ही ठण्डी होती है, ऊँट के बालों से बने ये गर्म वस्त्र ही यहाँ के लोगों के लिए एकमात्र सहारा होता था। यहीं संग्रहालय में ही ऊँटों द्वारा खायी जाने वाली खाद्य सामग्री भी प्रदर्शित है। ऊँटों के बालों पर की जाने वाली कटाई की कला तथा ऊँट चर्म पर उकेरी जाने वाली उस्ता कला अपनी बारीकी में बेजौड़ है। संग्रहालय में प्रदर्शित सामग्री से अभिभूत होकर हम एक स्थान पर रूक गए चूंकि साहित्य के विद्यार्थी साहित्य से अछूते नहीं रह पाते तो यहाँ प्रदर्शित एक कविता ''मारवाड़ का ऊँट सुजान'' ने हमें रोक लिया। श्री भरत व्यास जी द्वारा लिखी गई कविता बहुत अच्छी लगी। यहीं इसी कक्ष में हमें ऊँटों के 100 से भी अधिक नामो की जानकारी भी मिली।

संग्रहालय के अवलोकन के पश्चात हम प्रयोगशाला विभाग की ओर उन्मुख हुए। आधुनिक उपकरणों से सुसज्जित प्रयोगशाला, जहाँ दत्तचित्त होकर वैज्ञानिक तथा उनके सहायक अपने कार्य में रत दिखें। ईश्वर सर्वश्रेष्ठ सृजनकर्ता है तभी तो राजस्थान की विकट भौगोलिक परिस्थितियों के अनुकूल इस विशिष्ट जीव की सर्जना की। परन्तु मनुष्य की स्वार्थवृत्ति तथा अज्ञानता से यह विशिष्ट जीव तथा इसके उपयोग धूमिल होते जा रहे है। यहाँ के वैज्ञानिक, ऊँट से सम्बंधित विभिन्न अनुसंधानों के माध्यमों से इस विशिष्ट प्रजाति को सुरक्षित रखने का उपक्रम कर रहे हैं। ऊँटों में पाए जाने वाले विभिन्न रोगों के विषय में अनुसंधान कर वैकल्पिक चिकित्सा की खोज का प्रयास यहाँ निरन्तर किया जा रहा है। आधुनिक जीवन शैली ने मनुष्य जीवन को विभिन्न रोगों से ग्रसित कर दिया है। मधुमेह, क्षयरोग, ऑटिज्म जैसी बीमारियों के रोकथाम व उपचार में ऊँटनी के दूध की उपयोगिता के सम्बंध में भी संस्थान में अनुसंधान किए जाते रहे हैं और कई चौकाने वाले परिणाम सामने आए है। ऊँटनी के दूध के उपयोग के सम्बंध में और भी अनुसंधान जारी है। यहीं प्रयोगशाला में ऊँटनी के दूध को सुरक्षित रखने की प्रक्रिया का भी हमने अवलोकन किया।

प्रयोगशाला के पश्चात हम ऊँटों के रहने के स्थान की तरफ बढ़े। यहाँ नर ऊँट व मादा ऊँट के लिए अलग–अलग बाड़े बने हुए थे। वास्तविक जीवन में एक या दो ऊँटों को देखने का अनुभव रखने वाले हम सभी साथीगण इतने सारे ऊँटों को एक साथ देखकर अचम्भित से रह गए। यहाँ केन्द्र में लगभग 314 ऊँट वर्तमान में है। ऊँचा कद, ऊँची गर्दन, लम्बी टाँगें, छोटी पूंछ और विशिष्ट कूबड़ के साथ ऊँटों का यह समूह हमें बहुत ही आकर्षक प्रतीत हो रहा था। ऊँटों की देखभाल करने के लिए यहाँ 'रायका' जाति के लोगों को अनुबंध पर भी रखा जाता है। ऊँटों को संभालने में 'रायका' दक्ष माने जाते हैं। यहीं पर एक विशेष बाड़ा बना हुआ था जहाँ ऊँटनी माएँ अपने नवजात बच्चों के साथ रखी हुई थी। इस बाड़े में हमने एक ऊँट के नवजात बच्चे को देखा जिसका जन्म एक दिन पहले ही हुआ था। इस ऊँट का रंग सफेद था जो हमने पहले कभी नहीं देखा था। हमने जैसे ही इस परिसर में कदम रखा माँ ऊँटनी अपनी संतान की सुरक्षा के लिए सचेत हो गई। उसके चेहरें की भाव–भंगिमा देख लगा

कि जैसे हम अपरिचितों को देख वह शिशु सुरक्षा के लिए विचलित हो रही है। उसकी ममता भय से विस्फारित नेत्रों के साथ जुड़कर एक अलग ही अहसास करा रही थी। मुझे अहसास हुआ कि माँ–माँ ही होती है, एक 'पवित्र भावना' तो फिर हम मनुष्यों ने पशुता का अभिप्राय इतना क्रूर क्यों बना रखा है ?

यह शिशु केवल एक ही दिन का है और अपने पैरों पर खड़ा हो पा रहा था यह दृश्य हमारे लिए विस्मयकारी था। हमारे साथ ही देशी–विदेशी कई पर्यटक इस दृश्य का अवलोकन कर रोमांचित हो रहे थे।

आश्चर्य, भय, ममत्व के भावों से रूबरू होने के पश्चात यहाँ हमने ऊँट की सवारी के रोमांच का अनुभव भी किया। ऊँट की सवारी का यह मेरा पहला अनुभव था। ऊँट जब चलता है तो उसकी चाल के साथ सवार भी पूरा हिल जाता है। पहले तो डर लग रहा था फिर हम अभ्यस्त हो गए। यहाँ हमारे जैसे और भी पर्यटक थे जो शायद पहली बार ऊँट पर बैठे थे। उनकी स्थिति भी हमारे जैसी ही थी।

यह सुखद था कि सम्पूर्ण भ्रमण के समय मौसम ने हमारा साथ दिया। धूप के बजाय बादलों की आवा–जाही से हमारा भ्रमण आनंदपूर्ण रहा। इसके पश्चात हमने ऊँटों के चारा रखने व चारा बनाने का स्थान देखा। इस केन्द्र में हरा–चारा भी कई हैक्टयर जमीन पर उपलब्ध है। इसके साथ ही सूखा चारा तथा विशेष पौष्टिक आहार जो कि कई चीजों को मिलाकर बनाया जाता है। जिसे मिट्टी तथा ईंट के रूप में मशीनों के माध्यम से बनाया जाता है। यह विशेष आहार ऊँटों के स्वास्थ्य के लिए बहुत गुणकारी है। हमें बताया गया कि ऊँटों के लिए बनायी गई ये गिट्टियां (पैलेट्स) लेह लद्दाख के दो कूबड़ीय ऊँटों हेतु भी प्रयोग के लिए भेजी गई हैं।

ऊँट के जीवन के विभिन्न पहलुओं से परिचित होने के पश्चात हम इसी केन्द्र के राजभाषा अनुभाग और पुस्तकालय की तरफ उन्मुख हुए। पूर्ण व्यवस्थित, शांत, प्रकाशयुक्त, समृद्ध पुस्तकालय। प्रत्येक अनुशासन से सम्बंधित सैकड़ों पुस्तकें हमें खींच रही थी, विशेष रूप से साहित्य से सम्बंधित दुर्लभ्य है। कुछ समय अपनी चेतना में पुस्तकों को आत्मसात करने के पश्चात मन में इन्हें पढ़ने की तीव्र लालसा भी जाग उठी।

पुस्तकालय के अवलोकन के पश्चात वहीं परिसर में हस्तशिल्प की वस्तुओं से सजी दुकाने हमें अपने रंग बिरंगे साजो सामान से बुला रही थी। यहाँ हमने उष्ट्र चर्म से बने पर्स, बेल्ट, जूतियाँ, घरेलू साजो सामान देखा और खरीदा। स्थानीय कारीगरों द्वारा अद्भूत धैर्य व लगन से बने ये सामान कहीं अन्यत्र प्राप्त होना दुर्लभ है। ऊँट की हड्डियों से बना सामान तो बिल्कुल हाथी दाँत जैसा ही लगता है।

लगभग दो–तीन घण्टे के भ्रमण से हम सभी थक चुके थे तब परिसर में ही बने जलपान गृह में हम पहुँचे। यहाँ हमने ऊँट के दूध से बनी आइसक्रीम व कॉफी का सेवन किया। अद्भूत स्वाद व अनगिनत गुणों से युक्त ऊँटनी के दूध के हम मुरीद हो गए।

इस प्रकार उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र जो कि ऊँटों के जनन, प्रजनन, पोषण, संरक्षण, सुरक्षा अनुसंधान का भरोसेमंद केन्द्र है। इसका भ्रमण हमारे लिए आनंददायक व ज्ञानवर्धक रहा परन्तु एक कमी हमें महसूस हो रही थी कि हमारे बच्चे साथ नहीं थे। जिस रोमांच व आनंद का अनुभव मैंने किया, बच्चों को उससे रूबरू कराने मैं दुबारा अवश्य आऊँगी, इसी संकल्प के साथ हमने प्रस्थान किया।

अपने दिल को समझाने चले थे

जोर तो लगाते रहे पर,
बजाये आगे बढ़ने के
वो अपनी इच्छाओं को पीछे सरकाते रहे,
समय को मानो पंख लग गए,
बदलते समय का, खुशी से
हम पीछा करते रहे।

जीत हार के जीवन में,
आगे बढ़ने की कोशिश तो हम करते रहे,
अपनों के इशारों के कारण,
हम केवल, दर्शक दीर्घा की शोभा बढ़ाते रहे,

हौंसला अफजाई के इस युग में,
ना चाहते हुए भी हम हँसते–हँसते अपना उल्लू बनाते रहे।
बदलते समय की खुशी की चाह में,
पीछा करते करते हम अपनी हरकतों पर नाज करते रहे

शाम होते ही एक तस्वीर बनाने चले थे
अपने दिल को समझाने चले थे
रह रह कर उन लम्हों को गुन गुनाने लगे थे,
अपनी हरकतों से लुभाने चले थे

खोये खोये से, ओझल होती रौशनी में भी,
उंगलियों की परछाई से बतियाने चले थे
अपने दिल को समझाने चले थे,

आत्मविश्वास को दाव पर लगाने चले थे
छलकती आँखों से उन लम्हों को याद करने चले थे,
जिन तस्वीरों ने कभी कंधे से कन्धा टकराकर बोल गुन गुनाए थे,
अपने दिल को समझाने चले थे, अपने दिल को समझाने चले थे

राजेश कुमार सावल
प्रधान वैज्ञानिक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

हिन्दी भाषा में विज्ञानपरक विषयों की जानकारी

नेमीचंद बारासा, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी, राधाकृष्ण वर्मा, तकनीकी अधिकारी एवं ए.के. नागपाल, प्रधान वैज्ञानिक

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

हिन्दी भाषा सरल व सुबोध व सुग्राही, आत्मसात् की विशेषताओं को लिए होने के कारण सतत रूप से अपने गन्तव्य की ओर सतत रूप से लक्ष्यबद्ध है। देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली इस भाषा की खासियत यह है कि यह जैसी बोली जाती है वैसी ही लिखी भी जाती है, यानी कथनी व करनी में पूर्णतया जुड़ाव। अपने आप में वैज्ञानिकता लिए यह भाषा आज के आधुनिक युग में भी तेजी से पुष्पित–पल्वित हो रही है। विश्व भर की यदि बात करें तो माना जाता है कि हिन्दी लगभग 55 करोड़ लोगों द्वारा बोली जाने वाली वह भाषा है जो कि स्वर व व्यंजन के क्रमबद्ध व लयबद्ध उच्चारण की दृष्टि से वैज्ञानिकता से परिपूर्ण है। हिन्दी और हमारी अन्य भारतीय भाषाएँ ज्ञान एवं विज्ञान संबंधी विषयों को अभिव्यक्त करने का माद्दा रखती है। (खड़ी बोली) हिन्दी में वैज्ञानिक लेखन लगभग डेढ़–दो सौ साल से हो रहा है बावजूद इसके वैज्ञानिक विषयों के प्रकटन की बात जब आती है तो इसकी सीमित शब्द संपदा का हवाला दिया जाता है जबकि वास्तविकता में इस दृष्टिकोण से भी यह समृद्धता लिए हुए है। यदि सीमित शब्द–संपदा वाली यह भाषा होती तो आज बाजारवाद पर अपनी पकड़ मजबूत करने में क्या इतनी सफल रहती ?

बहुराष्ट्रीय कम्पनियां अपने विविध प्रकार के उत्पादों के व्यापक प्रचार–प्रसार एवं बिक्री हेतु हिन्दी भाषा को तेजी से अपना रही है। क्योंकि ये कम्पनियां भलीभांति जानती है कि हिन्दी भाषा की विशेषता यह है कि इसे नीचे से लेकर ऊपर तक के स्तर का व्यक्ति संवाद व संप्रेषणीयता की दृष्टि से अपनाता है। उपभोक्ता को भलीभांति एवं पर्याप्त जानकारी पहुंचाने पर ही वे इन उत्पादों के बारे में जान सकेंगे और तत्पश्चात ही कम्पनी का उत्पादन बढ़ पाएगा।

हिन्दी एवं भारतीय भाषाओं में शोध पत्रों को बढ़ावा दिए जाने के प्रयोजनार्थ पिछले वर्ष (16–17 दिसम्बर, 2016) जयपुर में विज्ञान भारती, राजस्थान (आयोजक) एवं राजस्थान विश्वविद्यालय एवं माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान (सह–आयोजक) द्वारा आयोजित तृतीय वैज्ञानिक हिन्दी सम्मेलन में जाने का अवसर मिला। इस वैज्ञानिक सम्मेलन में जहां नाना प्रकार के वैज्ञानिक अनुसंधानों की महत्वपूर्ण जानकारी शोधार्थियों द्वारा प्रदर्शन स्वरूप में हिन्दी भाषा के माध्यम से बड़े ही सरल व सहज ढंग से दी जा रही थी वहीं इस सम्मेलन में प्रस्तुत शोध पत्रों में वैज्ञानिकों द्वारा प्रयुक्त हिन्दी भाषा के सरल एवं प्रचलित शब्दों के चयन ने खासा प्रभावित किया। यहां तक की सम्मेलन में प्रकाशित कम्पेंडियम में प्रस्तुत शोध पत्रों की एक लम्बी फेहरिस्त थी। आयोजकों ने बड़े ही प्रसन्नतापूर्वक यह जानकारी दी कि शोध पत्र प्रस्तुत करने की अंतिम तिथि तक आलेख प्राप्त हो रहे थे, तथा अंत में कई शोध पत्र को पर्याप्त स्थान नहीं होने के कारण वापस लौटाना पड़ा यानी हिन्दी में वैज्ञानिक लेखन की आज भी कहीं पर भी कमी नहीं है। कमोबेश वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों में जब हिन्दी भाषा का प्रयोग किया जाता है तो इसमें अनेक कारण गिना दिए जाते हैं मसलन हिन्दी भाषा में शब्दों की कमी, विषयगत कठिन शब्दावली आदि आदि। परंतु जैसा कि इस सम्मेलन में यह विचार निकल कर आया कि यदि वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों को जब हिन्दी माध्यम से प्रस्तुत किए जाए तो कठिन शब्दों को अधिकाधिक व सतत प्रयोग में लाकर सरल बनाया जाए, क्योंकि भाषा का संबंध उपयोग से है। इससे भाषा सहज हो जाएगी। इस हेतु केवल वातावरण के सृजन भर की आवश्यकता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि भाषा कोई बाधा नहीं है, यह केवल सोच पर निर्भर करता है।

आधुनिक भारत में वैज्ञानिक अनुसंधान हेतु हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं को तरजीह देने की भी बात की जा रही है। मौलिक अनुसंधान की दृष्टि से यह नितांत जरूरी भी है क्योंकि मातृभाषा के माध्यम से विज्ञानपरक जानकारी/शिक्षा विद्यार्थियों को किसी भी विषयों को

पुख्ता तौर पर समझने में मददगार साबित होगी। जब इन विद्यार्थियों की मातृभाषा भाषा रूपी नींव मजबूत होगी तो इससे भावी समय में अधिकाधिक शोधार्थी प्रभावी तौर पर अनुसंधान कर इस राष्ट्र के विकास में सहायक सिद्ध होंगे।

साथ ही साथ देशभर में कुछ शैक्षणिक बदलाव यथा प्रारंभिक स्तर से उच्च शैक्षणिक स्तर तक शिक्षण की समुचित व्यवस्था हो। वहीं भारतीय भाषाओं में लिखने वाले अच्छे विद्वान लेखकों, भाषाविद्वों एवं अनुवादकों को प्रोत्साहित करना होगा कि वे यहां की भाषा में अधिकाधिक वैज्ञानिक लेखन करें।

दूसरी ओर वैज्ञानिक दृष्टि से हिन्दी भाषा को रोजगार की भाषा बनाया जाए ताकि युवाओं का उससे सुनिश्चित जुड़ाव उत्पन्न हो, अच्छे विद्यार्थियों के कारण न केवल उसमें नूतनता आएगी अपितु नए अनुसंधानों से इसकी गति में आशातीत वृद्धि भी होगी। क्योंकि टी.वी. चैनल व मीडिया जगत के कारण हिन्दी में रोजगार की प्रबल संभावनाएँ स्पष्टतः देखी जा सकती है युवा वर्ग उससे कॅरियर बना रहे हैं। भाषा के सरलीकरण हेतु यद्यपि वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग सतत रूप से प्रयत्नशील है साथ ही अन्य कई गैर शिक्षण संस्थाएं, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया एवं समाचार–पत्र–पत्रकारिता जगत के अलावा सरकारी विभाग भी हिन्दी भाषा को बढ़ावा दिए जाने हेतु प्रयोजनमूलक हिन्दी को अपनाते हुए बेहतर वातावरण का सृजन कर रहे हैं। आज हिन्दी भाषा देश की प्रांतीय भाषाओं के साथ चलकर निर्बाध रूप से अपना परचम फैहरा रही है। जरूरत केवल और केवल सोच को बदलते हुए दृढ़ इच्छाशक्ति से आगे बढ़ने की है। परंतु यह दायित्व हम सभी का है कि मातृभाषा को अधिकाधिक बढ़ावा मिले। जब हमारी संपूर्ण दिनचर्या इसके माध्यम से निष्पादित की जाती है तो मौलिक लेखन तो इससे और अधिक प्रभावी व कारगर सिद्ध होगा।

"युवक और युवतियाँ अंग्रेजी और दुनिया की दूसरी भाषाएँ खूब पढ़ें और जरूर पढ़ें। लेकिन उनसे मैं आशा करूँगा कि वे अपने ज्ञान का प्रसाद भारत को और सारे संसार को उसी तरह प्रदान करेंगे, जैसे बोस, राय और स्वयं कवि रवीन्द्रनाथ ने प्रदान किया है। मगर मैं हरगिज यह नहीं चाहूँगा कि कोई भी हिन्दुस्तानी अपनी मातृभाषा को भूल जाए या उसकी उपेक्षा करे या उसे देखकर शरमाए अथवा यह महसूस करे कि अपनी मातृभाषा के जरिए वह ऊँचे से ऊँचा चिन्तन नहीं कर सकता है।"

- राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी (मेरे सपनों का भारत से साभार)

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर

प्रथम बने नारी, द्वितीया नहीं

सुचित्रा कश्यप
सहायक प्रोफेसर (हिन्दी साहित्य)
राजकीय डूँगर महाविद्यालय, बीकानेर

बदलाव प्रकृति का नियम है। समय की परिभाषा है। सभ्यता ने, संस्कारों ने, संस्कृति में, धार्मिक मान्यताओं में, राजनीतिक परिदृश्य में और भी दूसरे मंजरों के साथ–साथ नारी के प्रति चिन्तन के स्वर में बदलाव का स्वर जुड़ते रहना बहुत जरुरी है। क्योंकि बदलाव नहीं तो ठहराव। दरअसल बदलाव वह पड़ाव है, जहाँ से आगे संवृद्धि का रास्ता तय होता है।

आज नारी के जीवन में हर मोड़ पर बदलाव परिलक्षित है। बदलावों की बयार ने उसका सम्पूर्ण व्यक्तित्व ही बदल दिया है। अब उसके व्यक्तित्व में ठहराव नहीं है, रवानगी है।

गतिशीलता है, समय को अपने साथ ले चलने की क्षमता है। आज वह हर मंच का प्रयोग करने लगी है। अब उसने याचना का रोना रोक हाथ ऊपर उठा लिए हैं। परिणामतः उसे सुनने के लिए एक–दो नहीं, हजारों–लाखों की भीड़ सम्मिलित हुई दिखती है। समय के साथ अब उसने भी तेवर बदल लिए हैं। जागृति की इस पुनीत वेला में वह अकेली नहीं है, सारी दुनिया उसके साथ है। अब वह हर मुद्दे पर एक है।

देश हिन्दुस्तान हो या अफगानिस्तान, पाकिस्तान या ईरान, फिलिस्तीन, अमेरिका या ब्रिटेन सब जगह औरत ने अपनी कमर कस ली है। यह शुभता का प्रतीक है। अभ्युदय का सूचक है। सतत विकास का लक्षण है।

दबी–कुचली महिलाएँ आज जागृति का गान गाने लगी हैं। बुर्कों से निकल कर सामने आने लगी हैं, आत्म–रक्षा के लिए जूड़ों–कराटे सीखने लगी हैं, बर्बरता के खिलाफ आवाज उठाने लगी हैं।

नवीन युग के सुप्रवेश के साथ ही नारी के विचारों ने भी करवट बदली है। उसके दृष्टिकोण में शनैः शनैः परिवर्तन की बयार चल पड़ी है। उन्मुक्त पहले जो महिलाएँ केवल घर पर मुहल्ले की समस्याएँ सुलझाने में ही अपनी सारी शक्ति लगा देती थीं, वे अब शहर के सीवरेज, पेयजल, सफाई प्रबंधों आदि की चर्चा और चिन्ता करने लगी हैं, घर गली के निकट पुलिस को देखकर ही जो स्त्रियाँ पीली पड़ जाती थीं, वे ही अब थाने कोतवाली में पहुँच कर जुल्म, जबरदस्ती के विरोध में आवाज उठाने लगी हैं। महिलाओं के लिए बने आरक्षण कानून का यह एक सुखद पक्ष है। अब नयी अभिवृतियों से जुड़ाव की प्रक्रिया ने नारी के विकास के द्वार खोल दिए हैं।

अपने इस दृष्टिकोण को पुष्ट करती हुई वह मानती है कि देश की आधी आबादी जो पहले अज्ञानता, धनाभाव, कानूनी संरक्षण की कमी तथा धार्मिक–सामाजिक वर्जनाओं में जकड़ी रहती थी, अब इस अभिवृति–परिवर्तन के कारण स्वतंत्रोन्मुख होने लगी है। यह एक सुखद लक्षण है।

धर्म का औरत के बारे में नजरिया कभी साफ नहीं रहा है। धर्म में महिलाओं को या तो पुरुषों से नीचे या फिर उससे ऊँचे स्थान पर रखा गया। स्त्री का शोषण इन दोनों ही दायरों में हुआ। लगभग इसी धर्म के विलामी प्रभाव के कारण सभी सामाजिक व्यवस्थाएँ स्त्री विरोधी रहीं। इन्हीं व्यवस्थाओं में पलकर कई अवसरों पर स्त्री स्त्री की ही विराधी बनती नजर आयी। वैसे ही जैसे एक शोषित दूसरे शोषित का दुश्मन बन जाता है। हर शोषक द्वारा संचालित व्यवस्था अपने शोषित को वैचारिक रूप से अपना दास बनाती है। औरत के साथ भी यही हुआ है, जिसका रूप, स्वरूप अब बदलने लगा है।

अब इस सोच पर भी पर्दा पड़ने लगा है कि नारी पुरुष से भिन्न है, उसके कार्य–क्षेत्र भिन्न है। अब तो नारी इस समस्त पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर तमाम आरोपित वर्जनाओं से मुक्त होकर अपनी मुक्ति के आन्दोलन पर निकल पड़ी है।

अब महिला को मात्र महिला दिवस पर पुरुष द्वारा उसकी मुक्ति की बात करना बेमानी, अप्रासंगिक लगने लगी है, उसकी सोच–विचार के द्वार खुलने लगे हैं।

वस्तुतः नारी एक पूर्ण शख्सियत है। वह पुरुष की भांति आधी–अधूरी नहीं है। आज की नारी ने सभी क्षेत्र चाहे फिल्म का हो या टी.वी. का, खेलकूद–साहित्य या राजनीति का या फिर मॉडलिंग या सौन्दर्य का। ऐसा कोई क्षेत्र नहीं, जहाँ उसके कदम न पड़े हो। चर्चा जयललिता की हो, एकता कपूर, शबाना, मीरा नायर, लता–आशा–उदिता की हो या फिर कोनेरू, हंपी, जेनिफर लॉपेज, मेधावी सुकर्णोपुत्री, मैरीदाबिसंन, अगवानी उरेगों, देवयानी, खालिदा जिया, उलोरिया, आरोयो ब्रिटनी स्पियर्स की। सच्चाई यह है कि आज की तिथि में दुनिया भर की नारी एक है और सारी सारी दुनिया में वह प्रतिष्ठित हुई है। अब वह समय जा चुका है, जब वह घर के चौखटों की शोभा होती थीं। नौबत तो यहाँ तक आ गई है कि दुनिया के कुछ देशों में औरत पुरुष के बंधन में ही नहीं बँधना चाहती।

आज औरत पुरुषों द्वारा खड़े किए गये तथाकथित ढाँचों को गिराने में तुली है। वो चाहे धार्मिक आश्रमों के रूप में खड़े किए गए हों, चाहे रीति–संस्कारों के रूप में। आज औरत वहाँ जा रही है जहाँ पुरुष जाने से कतराता रहा है, चाहे वहाँ जाते हुए मौत को हथेली पर रखकर क्यूँ न जाना पड़े। वह समर–स्थल में जो फौजियों की जिन्दगी की दास्तां बयां कर रही है। वह पुरुष के खेल शतरंज खेलने लगी है, वह ठंड की रात में अंटार्कटिका जा पहुँचती हैं। बिना ऑक्सीजन के एवरेस्ट पर। वह विदेश विभाग की सचिव बनती है, वह दादा साहब फाल्के पुरस्कार से सम्मानित होती है। वह विश्व सुन्दरी का खिताब जीतती है, वह मॉडलिंग में धाक जमाती हैं। अतः आज की नारी ज्यादा सशक्त हुई है और ज्यादा अभिव्यक्त भी। अब उसके लिए कुछ भी असंभव नहीं रहा है। अब उसे किसी की बैसाखी की जरूरत नहीं है। अब वह गन्तव्य पाने को स्वयं अपनी राह पर निकल पड़ी है। बाधाओं की उसे परवाह नहीं है। प्रलोभन उसके मार्ग को अशक्त नहीं कर पा रहे। कोई भी क्रान्ति उसके स्पर्श के बिना अधूरी, अपूर्ण दिखती जान पड़ रही है।

दरअसल वह समय के मूल में है। समय को ललकार रही है, समय को चुनौती दे रही है। अपने सामर्थ्य को प्रमाणित कर रही है। अब उसकी सुन्दरता श्रम कणों से टपकने वाली बूँदों से है। अब वह हाथ फैलाने से गुरेज करने लगी है, अब उसके अभिव्यक्ति की एक अभूतपूर्व क्षमता से जन्म लेना प्रारम्भ कर दिया है। अब वह अपने भावों को स्वयं निर्देशित करने लगी है। अब वह अपने श्रम का पूरा आनन्द लेने लगी है। अब वह अपूर्वा बन विगत के अपने ऊपर ढाये सारे सवालों का अर्थ तलाशने लगी है।

विचित्र बात तो यह रही कि साहित्य में भी तो उसे देवी की जगह दी गई या फिर उसे भुजंगों के बीच स्थापित कर उसका सरासर तिरस्कार किया गया। उसे नहीं बनने दिया तो केवल मानुषी। इतिहास के पन्नों में वह मूक–बहरी है। उसे सिसकना भी नहीं आता।

लेकिन मौन में दस्तक देने वाली छुटपुट चिन्गारियाँ बीच–बीच में प्रदीप्त हुई दिखती हैं, जिनमें प्रतिकार है, प्रतिशोध है, भिड़ने का स्वर है, कुछ कह पाने की क्षमता है। तभी तो वह प्रतिकार करती रहती है–मैं हाड़–माँस का पुतला नहीं हूँ। मैं भी एक चेतन जीवन हूँ। मुझमें भी जीवन है। मुझमें भी साँसे हैं। मुझमें भी भला–बुरा सोचने का सामर्थ्य है। मुझमें भी किसी को पाने–किसी को चाहने की तड़प है। मैं व्यवस्था के हाथों की कठपुतली नहीं हूँ कि जब चाहे मुझे कोई बेच दे, जब चाहे खरीद ले।...मेरे भी अरमां है, मेरी भी भावनाएँ हैं, मेरी भी ख्वाहिशें हैं, मेरे भी सपने हैं, मेरी भी दुनिया है।

आज वह जहाँ है, अपने बलबूते पर है और वहाँ से चेतना के स्वर उठ रहे हैं। अब क्रान्ति का बीजारोपण कर रही है, वह आन्दोलन का सूत्रपात कर रही है, आज वह कर्णधार है। वह सूत्रधार है। वह आज स्वयं निर्धात्री बनी है।

लेकिन पुरुष यहाँ भी अपना बल–वैभव दिखाने में लगा है। विचित्र विरोधाभास की स्थिति है कि पुरुष चाह रहा है कि स्त्री जागे, लेकिन उसकी इच्छानुसार ही जागे। उसे कितना जागना है, कितने प्रतिशत जागना है, उसका निर्धारण वह करना चाह रहा है। उसे किस–किस क्षेत्र में जागना है, यह अधिकार भी वह अपने हाथ में रखना चाहता है। देखा जाए तो यह पुरुष की अहम्मन्यता का एक नया रूप है और गंभीरता से देखा जाए तो यह उसकी आखिरी भड़ास भी है।

अब तसलीमा को धर्म की आड़ में मारना उसके लिए इतना भी सरल नहीं है। अब सीता को जलने के लिए कहना भी उतना सरल नहीं है। शायद ही अब कोई उर्मिला अपनी वासंती वेला में विधवा का–सा जीवन जीने के लिए आगे आए ? शायद ही अब कोई यशोधरा मध्य–रात्रि में छली जाए ?

नहीं सरल है अब भानुप्रिया को विरक्त का जीवन जीने के लिए बाध्य करना। आज वह अरूंधती बन, आज वह महाश्वेता बन, आज वह मेघा बन मौन में कलरव करने का प्रस्तुत है।

हजारों वर्षों में पहली बार हुआ है कि नारी के बारे में चिंतन के स्वर बदले हैं और निरंतर बदलते जा रहे हैं।

पुरुष के मस्तिष्क में उसका एक खोखला–सा रूप रहता है : उपभोग का। वह उसे उपभोग की गुड़िया से आगे की चीज नहीं समझता। वह उसकी असीम शक्ति से अभी परिचित नहीं है, जिसे उसने अपने स्वयं के बल पर अर्जित किया है।

पुरुष के लिए आज भी वह दोयम दर्जे की चीज है, जिसके भाव किए जा सकते हैं, जबकि वह विकास की दौड़ में उससे कहीं आगे निकल चुकी है। वरीयता–सूचियों में उसका नाम लड़कों से आगे है। फिर भी गर्भ में पल रही लड़की की हत्या एक सवाल बना हुआ है। जरूरी है कि वह ऐसे लोगों की मंशा को नकारती जाए। तब तक जब तक कि संसार उसकी अकांक्षाओं–अभिलाषाओं के अनुरूप न बन जाए। जिसमें उसके सपनों का सुंदर घर हो! खुशहाल परिवार हो! चारों ओर फूलों की महक हो! श्रेष्ठ विचारों की महक हो! जहाँ उसके अपने सपने हों और उसके अनथक हाथ उन सपनों को बुनने में संलग्न हो।

जरूरी है कि वह स्वयं की निर्धात्री बने, पुरुष के संकेतों पर नाचने वाली गुड़िया नहीं। वह प्रथम बने, द्वितीय नहीं। वह मानुषी बने, देवी नहीं। वह शक्ति सम्पन्न बने, सबला बने........शक्तिहीन नहीं....अबला नहीं।

संदर्भ :

हिमाचल सूर्य, 19 मई 2002 का अंक, पृ. 4
दिनेश धर्मपाल, शतक, एक बात, पृ. 2
पलाश विश्वास की तसली मा से बातचीत, समयांतर, जून 02, पृ. 22
दि ट्रिब्यून, स्पेशल कर्टसी, एशिया फीचरज
अमर उजाला, 16 अप्रैल 2002
अमर उजाला, रविवासरीयक कला साहित्य अंक, 16 जून
मधुरिमा, 6 मार्च 2002, पृ. 2
टाइम्स ऑफ इण्डिया, 11 जून 1994

"जबसे हमने अपनी भाषा का समादर करना छोड़ा, तभी से हमारा अपमान और अवनति होने लगी।"
- राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह

राजभाषा गतिविधियाँ

हिन्दी पखवाड़ा-2016

हिन्दी दिवस एवं हिन्दी पखवाड़ा मनाए जाने के संबंध में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली से प्राप्त पत्रांक 10(1)/2015–हिन्दी दिनांक 4 अगस्त, 2016 की अनुपालना में भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर में दिनांक 01–15 सितम्बर, 16 तक हिन्दी पखवाड़ा मनाया गया। पत्र में निहित दिशा–निर्देशों की अनुपालना तथा केन्द्र में राजभाषा के उत्तरोत्तर प्रयोग हेतु मनाए गए इस पखवाड़े की अवधि के दौरान राजभाषा संबंधी विभिन्न गतिविधियां व कार्यक्रम आयोजित किए गए। केन्द्र के वैज्ञानिकों/अधिकारियों/कर्मचारियों ने सक्रिय भागीदारिता निभाते हुए हिन्दी पखवाड़ा–2016 को सफल बनाया।

हिन्दी पखवाड़ा : उद्घाटन कार्यक्रम

केन्द्र में दिनांक 01 सितम्बर, 2016 को हिन्दी पखवाड़े का विधिवत् शुभारम्भ हुआ। इस अवसर पर केन्द्र के प्रधान वैज्ञानिक एवं कार्यक्रम अध्यक्ष डॉ. राजेश कुमार सावल ने कहा कि हिन्दी भाषा में विद्यमान अनेकानेक विशेषताओं के रहते हमें इस भाषा पर गर्वित होना चाहिए। उन्होंने केन्द्र के हितार्थ एवं प्रयोजनार्थ ऊँट पालकों व किसानों के साथ आपसी संवाद का जरिया हिन्दी भाषा को बताया। डॉ. सावल ने वैज्ञानिकों, अधिकारियों एवं कर्मचारियों को अपने अपने कार्यक्षेत्र में राजभाषा के अधिकाधिक प्रयोग हेतु प्रोत्साहित किया।

इस अवसर पर प्रभारी राजभाषा डॉ. सुमन्त व्यास ने हिन्दी दिवस मनाए जाने की परंपरा पर प्रकाश डाला तथा केन्द्र की राजभाषा प्रगति को सदन के समक्ष रखते हुए पूरे पखवाड़े (01–15 सितम्बर) की गतिविधियों में सभी की सहभागिता हेतु अनुरोध किया। हिन्दी पखवाड़े के इस शुभ अवसर पर श्रीमान राधा मोहन सिंह, माननीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री, भारत सरकार द्वारा हिन्दी दिवस, 2016 पर जारी संदेश का वाचन किया गया।

हिन्दी सामान्य ज्ञान प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता

दिनांक 01.09.2016 को हिन्दी पखवाड़े के उद्घाटन सत्र के पश्चात् हिन्दी के सामान्य ज्ञान पर आधारित प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता आयोजित की गई। वस्तुनिष्ठ प्रश्नों पर आधारित इस प्रतियोगिता में सभी प्रतिभागियों ने गहरी रूचि प्रदर्शित की। इस प्रतियोगिता में प्रथम स्थान पर डॉ. बलदेव दास किराडू, द्वितीय स्थान पर संयुक्त रूप से श्री भरत कुमार आचार्य एवं श्री अशोक यादव तथा तृतीय स्थान पर संयुक्त रूप से डॉ. आर.के. सावल एवं श्री राकेश पूनियां रहे। डॉ. राकेश रंजन, श्री महेन्द्र कुमार राव (अ वर्ग में), श्री हरपाल सिंह, श्री राधाकृष्ण (ब वर्ग में) तथा श्री सुखदेव प्रजापति (स वर्ग में) को प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त हुआ।

हिन्दी सामान्य ज्ञान प्रश्नोत्तरी परीक्षा

हिन्दी में टिप्पणी एवं प्रारूप लेखन प्रतियोगिता

कार्यालय के कामकाज में राजभाषा प्रयोग की ओर अधिकारियों एवं कर्मचारियों को प्रोत्साहित करने एवं उनकी कार्यक्षमता में अभिवृद्धि के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए दिनांक 05.09.2016 को हिन्दी में टिप्पणी एवं प्रारूप लेखन प्रतियोगिता आयोजित की गई जिसमें प्रतिभागियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। इस प्रतियोगिता में श्री राम दयाल पहले स्थान पर रहे, दूसरे स्थान पर डॉ. राकेश रंजन तथा तीसरे स्थान पर डॉ. बलदेव दास किराडू रहे।

वहीं (अ वर्ग में) डॉ. संजय कुमार, (ब वर्ग में) श्री हरपाल सिंह तथा श्री अनिल कुमार तथा (स वर्ग में) श्री राजेश कुमार को प्रोत्साहन पुरस्कार प्रदान किए गए।

हिन्दी में शुद्ध लेखन प्रतियोगिता

हिन्दी पखवाड़े के अन्तर्गत ही दिनांक 07.09.2016 को हिन्दी में शुद्ध लेखन प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस प्रतियोगिता के माध्यम से कार्यालय में दैनंदिन प्रयुक्त हिन्दी शब्दों के शुद्धिकरण की ओर प्रतिभागियों का ध्यान खींचा गया जिसमें डॉ. बलदेव दास किराडू ने प्रथम, श्री हरपाल सिंह द्वितीय, श्री रामदयाल व श्री सुखदेव संयुक्त रूप से तृतीय स्थान पर रहे। प्रोत्साहन पुरस्कार श्री दिनेश मुंजाल (अ वर्ग), श्री रामेश्वर लाल व्यास(ब वर्ग) तथा डॉ. राकेश कुमार पूनियां (स वर्ग) को प्राप्त हुए।

हिन्दी में निबन्ध लेखन प्रतियोगिता

केन्द्र के कार्यक्षेत्र से संबद्ध विषय 'ऊँट पालन – कल, आज और कल' पर दिनांक 07.09.2016 को हिन्दी में निबंध लेखन प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस प्रतियोगिता में श्री दिनेश मुंजाल ने प्रथम, डॉ.राकेश रंजन ने द्वितीय तथा डॉ. बलदेव दास किराडू ने तृतीय स्थान अर्जित किया वहीं प्रोत्साहन स्वरूप डॉ.काशी नाथ (अ वर्ग), श्री हरपाल सिंह (ब वर्ग) तथा श्री राजेश कुमार (स वर्ग) ने पुरस्कार जीते।

प्रतिभागी गण हिन्दी निबन्ध लेखन परीक्षा देते हुए

हिन्दी पखवाड़ा : मुख्य समारोह

हिन्दी पखवाड़ा–2016 का मुख्य समारोह 14 सितम्बर 2016 को मनाया गया जिसमें मुख्य अतिथि, डॉ. मदन केवलिया, वरिष्ठ साहित्यकार, बीकानेर ने अपने अभिभाषण में बताया कि हिन्दी, अमीर खुसरो के समय से होते हुए स्वतंत्रता आंदोलन के समय सम्पर्क सूत्र के रूप में उभरी थी, अतः 14 सितम्बर–हिन्दी दिवस असल में हिन्दी दिवस न होकर राजभाषा दिवस के रूप में मनाया जाए, हिन्दी अपनी विशेषताओं के कारण कमाल की भाषा है और देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता को सभी ने स्वीकारा है। डॉ.केवलिया ने कहा कि आज अति आधुनिक युग में भी हिन्दी ने सूचना प्रौद्योगिकी, संचार, बाजारवाद आदि सभी क्षेत्रों में चुनौतियों को स्वीकार करते हुए अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाया है। अतः हमें हिन्दी के शुद्धिकरण, सरलता एवं व्यावहारिक अनुवाद की ओर भी ध्यान देना होगा तभी हिन्दी भाषा सही एवं तीव्र प्रसार पा सकेंगी।

इस अवसर पर श्री राजनाथ सिंह, माननीय गृहमंत्री, भारत की ओर से हिन्दी दिवस–2016 के उपलक्ष्य पर जारी संदेश का वाचन भी किया गया।

मुख्य समारोह में केन्द्र निदेशक एवं कार्यक्रम अध्यक्ष डॉ.एन.वी.पाटिल ने हिन्दी भाषा को धरोहर के रूप में मानते हुए इसे प्रबल रूप से आगे लाने हेतु सदन में उपस्थित कार्मिकों को प्रोत्साहित करते हुए कहा कि यह सबको जोड़ने वाली भाषा है और इस भाषा के विकास हेतु हमें यर्थाथ में प्रयास करने होंगे तो हिन्दी दिवस आदि मनाने की भी सच्चे स्वरूप में सार्थकता सिद्ध होगी। डॉ. पाटिल ने इस अवसर पर सुनाए गए माननीय गृहमंत्री श्री राजनाथ सिंह के संदेश का हवाला देते हुए कहा कि अब हर जगह हर क्षेत्र में हिन्दी को अपनाना होगा क्योंकि अब हिन्दी

मुख्य अतिथि डॉ. केवलिया मुख्य समारोह में बोलते हुए

समझने व समझाने में किसी प्रकार की बाधा नहीं है। डॉ. पाटिल ने भाषा में सरलता को अपनाएं जाने की भी बात कही।

मुख्य समारोह में बोलते हुए डॉ. पाटिल

इस अवसर पर बीकानेर नगर के हास्य कवि श्री विजय कुमार धमीजा ने कविता पाठ किया। वहीं प्रभारी राजभाषा डॉ. सुमन्त व्यास ने राजभाषा कार्यान्वयन व हिन्दी पखवाड़े के अंतर्गत आयोजित प्रतियोगिताओं के बारे में जानकारी दी।

कवि श्री धमीजा द्वारा रचनाओं का प्रस्तुतिकरण

मुख्य अतिथि एवं मंचस्थ जनों के कर कमलों से केन्द्र द्वारा हिन्दी पखवाड़े के अंतर्गत आयोजित हिन्दी में निबन्ध लेखन, हिन्दी सामान्य ज्ञान, टिप्पणी एवं प्रारूप लेखन एवं हिन्दी में शुद्ध लेखन प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार वितरित किए। कार्यक्रम का संचालन श्री हरपाल सिंह ने किया।

मुख्य समारोह में विजेताओं को पुरस्कृत करते हुए अतिथि गण

राजभाषा कार्यशाला एवं हिन्दी पखवाड़ा समापन कार्यक्रम

दिनांक 15.09.16 को हिन्दी पखवाड़े के समापन कार्यक्रम से पूर्व कम्प्यूटर के माध्यम से हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए 'कम्प्यूटर पर हिन्दी प्रयोग' विषयक राजभाषा कार्यशाला का आयोजन किया गया। कार्यशाला सत्र से पूर्व सर्वप्रथम प्रभारी राजभाषा डॉ. सुमन्त व्यास ने राजभाषा कार्यशाला के उद्देश्य व महत्व पर प्रकाश डाला।

व्याख्यान सत्र में अतिथि वक्ता श्री अनिल कुमार शर्मा, सचिव, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति एवं राजभाषा अधिकारी, उत्तर पश्चिम रेलवे, बीकानेर ने कहा कि हिन्दी में काम करने को एक दायित्व के रूप में लेते हुए हमें नई तकनीकी का लाभ लेना सीखना चाहिए, तभी हिन्दी

का अधिकाधिक प्रचार–प्रसार हो सकेगा। श्री शर्मा ने कार्यशाला प्रतिभागियों को गूगल वॉईस टाईपिंग सुविधा का व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया तथा बताया कि अब हिन्दी में कम्प्यूटर पर टाईप करना समस्या नहीं है केवल आपके बोलने भर की देरी है। गूगल वॉईस टाईपिंग (गूगल वाणी लेखन) ने न केवल हिन्दी अपितु कई अन्य भाषाओं में टाईप करना अत्यंत आसान बनाया है। अतिथि वक्ता ने इस हेतु गूगल क्रोम, जी–मेल एकाउंट आदि जरूरी आवश्यकताओं को बताया।

कार्यशाला में व्याख्यान प्रस्तुत करते हुए श्री शर्मा

राजभाषा कार्यशाला के कार्यक्रम अध्यक्ष डॉ.एन.वी. पाटिल ने प्रतियोगियों को नई तकनीकी का लाभ उठाने हेतु प्रोत्साहित करते हुए कहा कि गूगल वॉईस टाईपिंग भाषा विकास का साधन होने के साथ–साथ भाषा में सुधार का भी एक बहुत अच्छा जरिया बन सकता है। उन्होंने खासकर प्रशासनिक वर्ग को कहा कि वे इसके माध्यम से टिप्पणी एवं प्रारूप लेखन में सहयोग लें।

राजभाषा कार्यशाला पश्चात प्रारम्भ हुए हिन्दी पखवाड़े के समापन कार्यक्रम में प्रभारी राजभाषा डॉ. सुमन्त व्यास ने केन्द्र में दिनांक 01–15 सितम्बर के दौरान हिन्दी पखवाड़े की समस्त गतिविधियों का संक्षिप्त ब्यौरा प्रस्तुत किया।

इस अवसर पर केन्द्र निदेशक डॉ. पाटिल ने हिन्दी पखवाड़े की गतिविधियों की सार्थकता एवं सभी प्रतिभागियों की सक्रिय भागीदारी हेतु उन्हें बधाई देते हुए कहा कि इन प्रतियोगिताओं के माध्यम से न केवल राजभाषा प्रयोग को बढ़ावा मिला है अपितु इनसे कार्मिकों की कार्यक्षमता में भी अभिवृद्धि हुई है। उन्होंने अन्य हिन्दी गतिविधियों में भी ऊँट से संबद्ध विषयों पर पारस्परिक चर्चा हेतु शामिल किए जाने पर जोर दिया जिनसे केन्द्र को लाभ मिल सके। समापन कार्यक्रम के अंत में प्रभारी राजभाषा डॉ. सुमन्त व्यास ने केन्द्र में आयोजित हिन्दी पखवाड़े को सफल बनाने हेतु सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों के प्रति धन्यवाद ज्ञापित किया। कार्यक्रम का संचालन श्री नेमीचंद बारासा, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी (राजभाषा) ने किया।

"एक भाषा के रूप में हिंदी को गंगा नहीं, बल्कि समुद्र बनना होगा।"
- आचार्य विनोबा भावे

राजभाषा कार्यशालाएं

राजभाषा कार्यशाला : 1 अक्टूबर, 2016

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर में जल संरक्षण पर राजभाषा कार्यशाला का आयोजन किया गया। केन्द्र में दिनांक 01.10.2016 से चल रहे ''स्वच्छ भारत अभियान'' के तहत आयोजित इस कार्यशाला में अतिथि वक्ता के रूप में श्री हेम शर्मा, डिप्टी न्यूज एडिटर, राजस्थान पत्रिका, बीकानेर को आमंत्रित किया गया जिसमें केन्द्र के वैज्ञानिकों/अधिकारियों/कर्मचारियों के अलावा आईसीएआर के बीकानेर स्थित केन्द्रों के कार्मिकों ने भी शिरकत की।

इस अवसर पर केन्द्र निदेशक एवं कार्यक्रम अध्यक्ष डॉ. एन.वी. पाटिल ने राजभाषा कार्यशाला के विषय को प्रासंगिक बताते हुए कहा कि पश्चिमी राजस्थान में जल का विशेष महत्व है तथा आमजन प्राकृतिक संसाधनों का कारगर तरीके से संरक्षण करते हैं। डॉ. पाटिल ने कहा कि जल एक ऐसा विषय है जिसके प्रति प्रत्येक नागरिक को सरकार पर ही निर्भर नहीं रहते हुए अपने दायित्व का बखूबी निर्वहन करना चाहिए। उन्होंने देश में जल संरक्षण हेतु परम्परागत पद्धतियों के प्रति पुनः चेतना लाने की आवश्यकता जताई। डॉ. पाटिल ने कहा कि अशिक्षा एवं जागरूकता की कमी के कारण जल संरक्षण जैसे विषयों के प्रति लोग गंभीर नहीं है परंतु जल के दोहन व दुरूप्रयोग व प्रदूषण को देखते हुए वह दिन दूर नहीं जब हम जल के प्रति तुरंत चेतेंगे, इसलिए समय रहते इस पर गंभीर व सजग बनना होगा।

अतिथि वक्ता श्री हेम शर्मा ने ''जल संरक्षण'' विषयक व्याख्यान प्रस्तुत करते हुए बताया कि जल को कर्म चेतना का अंश माना गया है। यह सजीव जगत में ठीक वैसे ही है जैसे पेड़ आदि को हम मानते हैं। परंतु जल जीवन का अंश होने के बावजूद इसके प्रति आम जन में चेतना का अभाव है। अतिथि वक्ता ने जल के अपव्यय/दुरूप्रयोग/अपर्याप्त प्रबंधन के कारण उत्पन्न जल संकट के प्रति चेताते हुए कहा कि राजस्थान में 339 ब्लॉक में से 198 ब्लॉक सूख गए हैं और डार्क जोन में आने के कारण अगर देश में जल संकट आया तो पहले नंबर पर राजस्थान होगा। इसलिए जल के प्रति जीवन दृष्टि ठीक करनी होगी मसलन इसके पुनःउपयोग करने, मितव्ययता बरतते हुए आधुनिक पद्धति से दक्षता से उपयोग लेना सीखना होगा।

अतिथि वक्ता श्री हेम शर्मा व्याख्यान देते हुए

उन्होंने आंकड़ों के माध्यम से राजस्थान एवं देश के जल स्तर व इसके दोहन की बात रखते हुए वैश्विक परिदृश्य में इसके संरक्षण की अद्यतन जानकारी दी। अतिथि वक्ता ने आजादी से पूर्व देश में आमजन की जल संरक्षण के प्रति सोच व व्यवस्था की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए प्रतिभागियों को वर्षा आधारित जल संरक्षण की भावना को आत्मसात् करने की अपील की।

प्रभारी राजभाषा डॉ. सुमन्त व्यास ने राजभाषा कार्यशाला के उद्देश्य व महत्व पर प्रकाश डालते हुए केन्द्र में मनाए जा रहे स्वच्छ भारत अभियान की गतिविधियों की जानकारी दी।

राजभाषा कार्यशाला : 17 मार्च, 2017

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर में राजभाषा नीति कार्यान्वयन के निर्धारित लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए दिनांक 17 मार्च, 2017 को आयोजित राजभाषा कार्यशाला में अतिथि वक्ता के रूप में डॉ. एच.पी. व्यास, भू.पू. निदेशक, डीआरडीओ संस्थान एवं पूर्व कुलपति, बीकानेर तकनीकी विश्वविद्यालय, बीकानेर द्वारा 'वर्तमान परिदृश्य में श्री भगवद्गीता का महत्व' विषयक व्याख्यान

प्रस्तुत किया गया।

कार्यशाला सत्र प्रारम्भ से पूर्व केन्द्र के प्रभारी राजभाषा डॉ. सुमन्त व्यास ने कहा कि राजभाषा कार्यशालाओं में प्रस्तुत व्याख्यानों के माध्यम से अपने अधिकारियों एवं कर्मचारियों की राजभाषा प्रयोग में आने वाली बाधाओं, शंकाओं का निराकरण किया जाता है साथ ही राजभाषा के प्रगामी प्रयोग हेतु उन्हें नीति–नियमों व भाषा विषयक जानकारी प्रदान की जाती है। इसके अलावा इन कार्यशालाओं में बहुआयामी विषय भी शामिल किए जाते हैं जिससे विद्वजनों द्वारा प्रस्तुत विविध विषयक व्याख्यानों में प्रतिभागियों के ज्ञान में अभिवृद्धि हो सके।

व्याख्यान सत्र

अतिथि वक्ता के रूप में डॉ. एच.पी. व्यास ने 'वर्तमान परिदृश्य में श्री भगवद्गीता का महत्व' विषयक व्याख्यान में कहा कि गीता को केवल किसी धर्म विशेष तक सीमित रखते हुए नहीं देखा जाना चाहिए अपितु इसमें कुशल एवं व्यवस्थित जीवन प्रबंधन के गुण बहुतायत में विद्यमान हैं, इस कारण से हरेक जागरूक व्यक्ति यहां तक कि वैज्ञानिक वर्ग भी इसे अपनाता है। डॉ.व्यास ने कहां कि दुर्भाग्य से गीता को सही रूप में नहीं अपनाए जाने के कारण यह देश परतंत्र बना जबकि पौरुष भाव जाग्रत करने की दृष्टि से भी यह ग्रन्थ अदभुत है। इसलिए गीता रूपी ग्रन्थ को सही रूप में जीना एवं अनुभव करना होगा खासकर युवा वर्ग अपने बेहतर जीवन/कैरियर निर्माण हेतु यदि इससे जुड़े तो उनके व्यक्तित्व में महत्वपूर्ण बदलाव आएंगे। डॉ. व्यास ने वर्तमान परिदृश्य में व्याप्त जीवन शैली पर अपने बात रखते हुए कहा कि आज का व्यक्ति भीतर से अशांत व डरा–डरा सा है, वह अनिश्चिताओं, बेवजह आशंकाओं की उधेड़बुन में अपने वर्तमान जीवन का असली आनंद लेने से वंचित रहता है जबकि गीता हमें

आश्वस्त रहना सीखाती है, अतरू आतमिक एवं सच्ची शांति प्राप्त करने एवं निर्भयता से जीवन जीने की कला सीखने हेतु हमें इस ग्रन्थ का अध्ययन करना चाहिए। सत्य का यह मार्ग थोड़ा कठिन जरूर है परंतु यह चमत्कारित बदलाव लाने की क्षमता रखता है।

डॉ. व्यास ने भौतिकवादी इस युग पर भी अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि आज स्वः एवं कर्मभोग की विचारधारा शिखर पर होने, अपने स्वभाव अनुरूप कार्य करने के कारण ही वैश्विक जगत में असंतुलन की स्थिति है जबकि गीता कहती है कि पूर्वाग्रह रहित, शुद्ध उद्देश्य के साथ अपनेपन का विस्तार करों और तेरे–मेरे से ऊपर उठकर सोचो, वहीं निष्काम कर्म की भावना से आत्मिक खुशी प्राप्त की जा सकती है। उन्होंने कहा कि गीता में निष्काम कर्म का यह तात्पर्य नहीं कि आप फल की इच्छा न करों अपितु ईश्वर व्यक्ति को उसके कर्म/प्रार्थना स्वरूप/भावना आधार पर फल निर्धारित करता है।

डॉ. व्यास ने अपने व्याख्यान के अंत में प्रतिभागियों के समक्ष संस्कृत एवं हिन्दी भाषा के संबंध में भी अपने विचार रखते हुए भारतीय ग्रन्थों की महत्ता प्रदर्शित की।

इस अवसर पर कार्यक्रम के अध्यक्ष एवं केन्द्र निदेशक डॉ. एन.वी. पाटिल ने कहा कि ऐसे क्षण जीवन में अनेकों बार आते है कि जब हमें मुसीबत से उभारने का सहारा दिखाई नहीं देता तब उस सर्व शक्तिमान सता को याद किया जाता है, जिसके नाम व स्वरूप भले ही अलग अलग हो सकते है परंतु समस्त शक्तियों का संचालन उसी एक शक्ति द्वारा किया जाता है। इस एकात्मक सता को मानने की विचारधारा में हमारी बुद्धि बाधक बनती है जबकि इसे अनुभव किया जाना चाहिए।

डॉ. पाटिल ने महान संत तुकाराम की भक्तिमय जीवन शैली पर अपनी बात रखते हुए कहा कि वे ईश्वर से बार–बार संकट/कष्ट देने की प्रार्थना करते क्योंकि उनके लिए ईश्वर से जुड़ने का यही श्रेष्ठ समय होता, अतः कहने का तात्पर्य यह है कि हमें जीवन में कष्टों/दुखों से हताश नहीं होना चाहिए, इसे गहन स्वरूप में समझते हुए इच्छा शक्ति जाग्रत की जानी चाहिए। उन्होंने कहा कि अपने आप में प्रवर्तन लाने वाली गीता मानव मात्र के बेहतर जीवन, कल्याण का मार्ग प्रशस्त करती है। अतः हरेक व्यक्ति समर्पित भाव से इसे खोजें तो निश्चित रूप से महत्वपूर्ण बदलाव देखते को मिलेगा। डॉ. पाटिल ने स्वामी विवेकानंद शिक्षा पद्धति पर बात रखते हुए कहा कि उनके अनुसार वह शिक्षा अनुपयोगी है जो कि विद्यार्थियों में संघर्ष के गुण विकसित करना न सके। केन्द्र निदेशक ने राजभाषा इकाई को महत्वपूर्ण विषयों पर व्याख्यान आयोजित किए जाने हेतु बधाई संप्रेषित करते हुए कहा कि कार्यक्षेत्र तथा इसके अलावा जीवन के प्रति सही दृष्टिकोण की ओर कार्मिकों

को प्रेरित करना निश्चित रूप से समय की मांग है, अत– ऐसे प्रयास सतत रूप से किए जाए।

कार्यशाला के अंत में सभी अतिथियों/प्रतिभागियों/केन्द्र तथा भाकृअनुप के बीकानेर स्थित संस्थानों/केन्द्रों के अधिकारियों/कर्मचारियों के प्रति धन्यवाद ज्ञापित किया गया।

राजभाषा कार्यशाला : 25 मार्च, 2017

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर में दिनांक 25 मार्च, 2017 को केन्द्र सभागार में आयोजित राजभाषा कार्यशाला में अतिथि वक्ता के रूप में डॉ. सौरभ भार्गव, उच्च नेत्र विशेषज्ञ, कोठारी मेडिकल एवं रिसर्च इन्स्टीट्युट, बीकानेर द्वारा 'आंखों की उचित देखभाल तथा मोतियाबिंद, काला पानी एवं अन्य सामान्य बीमारियों का उपचार/निदान' विषयक व्याख्यान प्रस्तुत किया गया।

सर्वप्रथम केन्द्र के प्रधान वैज्ञानिक डॉ. राघवेन्द्र सिंह ने कहा कि भारत सरकार की राजभाषा नीति के सफल क्रियान्वयन हेतु केन्द्र द्वारा नियमित रूप से कार्यशालाएं आयोजित की जाती है। इन कार्यशालाओं में प्रतिभागियों को राजभाषा के प्रगामी प्रयोग के साथ–साथ इतर विषयों की भी जानकारी देकर उनके ज्ञान में अभिवृद्धि की जाती है

व्याख्यान सत्र

अतिथि वक्ता के रूप में डॉ. सौरभ भार्गव, उच्च नेत्र विशेषज्ञ, कोठारी मेडिकल एवं रिसर्च इन्स्टीट्युट, बीकानेर ने 'आंखों की उचित देखभाल तथा मोतियाबिंद, काला पानी एवं अन्य सामान्य बीमारियों का उपचार/निदान' विषयक व्याख्यान के दौरान डॉ. भार्गव ने राजभाषा हिन्दी के माध्यम से व्याख्यान अंतर्गत आंखों से जुड़ी विभिन्न बीमारियों, समस्याओं, आमजन द्वारा बरती जाने वाली असावधानियों संबंधी अपनी जानकारी सदन में सरल व सहज रूप से दी। आंखों की क्रियाशीलता पर बोलते हुए उन्होंने कहा कि सामान्यतः हमारी आंखों की पलकें 10–15 बार झपकनी चाहिए परंतु हम टी.वी. मोबाइल आदि प्रयोग में लेते समय यह क्रिया बहुत कम हो जाती है जो कि नुकसानदायक है। उन्होंने ग्लुकोमा रोग के संबंध में बताया कि परिवार के किसी व्यक्ति को ग्लुकोमा हो तो चेक–अप जरूर करवाएं, इस रोग हेतु अनेक दवाइयां उपलब्ध होने के कारण घबराने की कोई बात नहीं है। डॉ. भार्गव ने मोतियाबिंद से जुड़ी पुरानी पद्धतियों प्रकाश डालते हुए आंखों हेतु प्रयुक्त किए जाने वाले लेंस के संबंध में मागर्दशन देते हुए कहा कि रोगों को केवल ब्रांड कम्पनियों के प्रोग्रसिव लैंस ही लगाने चाहिए। उन्होंने आंखों को रंगों से होने वाले नुकसान पर बोलते हुए बताया कि ब्लु लाईट आगे जाकर आंखों की रेटीना को नुकसान पहुंचाती है। बीकानेर नगर में आंखों से जुड़े रोगों के इलाज की सुविधाओं के बारे में उन्होंने कहा कि हमारा उद्देश्य बीकानेर में विश्व स्तरीय उपचार सुविधा उपलब्ध करवाना है। डॉ. भार्गव ने आंखों से जुड़ी अनेक जांचों पर भी प्रकाश डाला। उन्होंने प्रतिभागियों को गहन जानकारी देने हेतु आंखों के ऑपरेशन संबंधी कई विडियों भी दिखाए।

व्याख्यान सत्र के बाद विचार सत्र में प्रतिभागियों ने आंखों से जुड़ी विभिन्न समस्याओं/रोगों/लेंस संबंधी जिज्ञासाओं को अतिथि वक्ता के समक्ष रखा जिनका उन्होंने सहज रूप में निराकरण भी प्रस्तुत किया। अतिथि वक्ता ने अपनी ओर से आंखों से जुड़े विभिन्न रोगों पर हिन्दी में प्रकाशित प्रसार सामग्री को भी प्रतिभागियों में वितरित किया गया तथा किसी भी प्रकार की जानकारी/सहायता हेतु बेझिझक संपर्क करने की बात कही।

केन्द्र निदेशक एवं कार्यक्रम अध्यक्ष डॉ. एन.वी. पाटिल ने कहा कि राजभाषा कार्यशालाओं के माध्यम से ऐसे विषयों को सम्मिलित करना जो कि हमारी रोजमर्रा की जिंदगी से जुड़े हैं, निहायत आवश्यक है ताकि प्रतिभागियों के साथ–साथ अन्य लोगों को भी इनसे फायदा पहुंचे। उन्होंने कहा कि आंखों से संबंधित बीमारियों (मोतियाबिंद,ग्लुकोमा, एलर्जी आदि) को नजरअंदाज कर देते फलतः आगे जाकर व्यक्ति को इसके गंभीर परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं। अतः इस समय रहते सावधानी बरती जानी चाहिए।

डॉ. पाटिल ने कार्यशालाओं में विविध विषयक व्याख्यानों को सम्मिलित किए जाने को एक बेहतर समन्वय बताया जहां पारस्परिक वार्ता से प्रतिभागी लाभान्वित होते हैं।

श्री नेमीचंद बारासा, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी एवं श्री दिनेश मुंजाल, सहायक मुख्य तकनीकी अधिकारी ने भी इस अवसर पर अपने विचार रखे। कार्यशाला का संचालन एवं धन्यवाद ज्ञापन श्री हरपाल सिंह, वैयक्तिक सहायक ने किया।

राजभाषा कार्यशाला : 22 जून, 2017

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर में राजभाषा नीति कार्यान्वयन के निर्धारित लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए वर्ष 2017–18 की प्रथम कार्यशाला का आयोजन दिनांक 22 जून, 2017 को किया गया। कार्यशाला में अतिथि वक्ता डॉ. देवाराम काकड़, निदेशक, श्रीमती फूसीदेवी योगा एण्ड नैचुरोपैथी संस्थान, बीकानेर को आमन्त्रित किया गया। कार्यशाला कार्यक्रम की अध्यक्षता केन्द्र निदेशक डॉ. एन.वी. पाटिल ने की।

अतिथि वक्ता के रूप में डॉ. देवाराम काकड़ ने 'कार्यक्षमता अभिवृद्धि में योग का महत्व' विषयक व्याख्यान में कहा कि प्राचीन पद्धति योग जो कि भारतीय ऋषि/मुनियों की देन है, आज वैश्विक पटल पर अपना परचम फैहरा रही है। जीवन शैली को स्वस्थ बनाने हेतु डॉ. काकड़ ने श्वास की गति, रक्त शुद्धि, शरीर के शर्करा स्तर में सुधार, प्रातरूकाल दिनचर्या में बदलाव, ऋतु अनुसार आहार–विहार, उपवास का महत्व, रोग प्रतिरोधक क्षमता का विकास, रोगी होने पर बरती जाने वाली सावधानियां आदि विभिन्न जरूरी पहलुओं की ओर प्रतिभागियों का ध्यान खींचा। कार्यशाला के दूसरे सत्र में डॉ. ब्रजरतन जोशी ने 'भाषा एवं क्षमता संवर्धन' विषयक व्याख्यान में कहा कि भाषा का व्यक्तित्व व जीवन निर्माण में बहुत बड़ा महत्व है। डॉ. जोशी ने भाषा को बहता हुआ नीर बताते हुए कहा कि इसके अनवरत विकास हेतु अपेक्षानुरूप व्याकरणिक ज्ञान, प्रयोग में सहजता, संप्रेषणीयता तथा क्लिष्टता से बचाव आदि कुछ व्यावहारिक पहलुओं की तरफ भी ध्यान दिया जाना चाहिए।

राजभाषा कार्यशाला की अध्यक्षता करते हुए केन्द्र निदेशक डॉ. एन.वी. पाटिल ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि कार्यशाला व्याख्यानों में योग से भाषा के द्वारा जोड़ने का यह अवसर अत्यंत महत्वपूर्ण रहा। उन्होंने कहा कि भाषा में सहजता व संप्रेषणीयता का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है, अतः बोलने से पहले इस बात पर मनन हो कि इसका परिवार, समाज, संस्थान, राष्ट्र आदि पर कैसा प्रभाव हो सकता है ? लोग हमसे कैसी अपेक्षा रखते हैं ! इस हेतु अपने स्तर/व्यक्तित्व/कार्यक्षमता को बेहतर बनाने के प्रयास सजगता, सहजता से किए जाने चाहिए। डॉ. पाटिल ने योग के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि स्वस्थ जीवन हेतु संतुलन आवश्यक है, बिना इसके सब व्यर्थ है। उन्होंने कहा कि प्रतिष्ठित मनीषियों को राजभाषा गतिविधियों तथा अन्य महत्वपूर्ण अवसरों पर आमंत्रित करते हुए कार्मिकों तथा संस्थान के हितार्थ इनका भरपूर लाभ लिया जाना चाहिए। प्रभारी राजभाषा डॉ. अशोक कुमार नागपाल कार्यशाला के उद्देश्य एवं महत्व पर प्रकाश डाला। केन्द्र में आयोजित इस कार्यशाला कार्यक्रम का संचालन श्री हरपाल सिंह कौण्डल, वैयक्तिक सहायक ने किया।

भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र को मिला राजभाषा सम्मान

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, बीकानेर की वर्ष 2017 की प्रथम बैठक मंडल रेल कार्यालय, बीकानेर में दिनांक 14.06.2017 को आयोजित की गई। इस बैठक में भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर को वर्ष 2016–17 के दौरान बीकानेर नगर में राजभाषा के उत्कृष्ट प्रयोग के लिए प्रशस्ति पत्र प्रदान कर सम्मानित किया

–: संबोधन :–

अतिथि वक्ता डॉ. जोशी

केन्द्र निदेशक डॉ़ पाटिल

अतिथि वक्ता डॉ. देवाराम

गया। यह प्रशस्ति पत्र श्रीमान अनिल कुमार दूबे, अध्यक्ष नराकास एवं मंडल रेल प्रबंधक, बीकानेर के कर कमलों से केन्द्र निदेशक डॉ.एन.वी.पाटिल को भेंट किया गया। मंडल रेल प्रबंधक श्रीमान दूबे की अध्यक्षता में आयोजित नराकास बीकानेर की इस बैठक में क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, नई दिल्ली से सहायक निदेशक श्री नरेन्द्र सिंह मेहरा ने भी सहभागिता निभाते हुए नगर स्तर पर राजभाषा के और अधिक बेहतर कार्यान्वयन संबंधी अपने विचार व्यक्त किए। सचिव नराकास एवं राजभाषा अधिकारी श्री अनिल कुमार शर्मा ने हिन्दी के प्रयोग से संबंधित वार्षिक सूचना का विश्लेषण किया।

बैठक में नराकास कार्यालयों के साथ खुली चर्चा के दौरान केन्द्र के निदेशक डॉ.एन.वी.पाटिल ने राजभाषा सम्मान मिलने पर प्रसन्नता जाहिर करते हुए उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र की राजभाषा संबंधी गतिविधियों, संस्थान की कार्यप्रणाली तथा राजभाषा हिन्दी की इनमें उपयोगिता यथा–ऊँट पालकों हेतु आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रमों, ऊँटों के विभिन्न पहुलओं संबंधी वैज्ञानिक जानकारी युक्त प्रकाशनों, उष्ट्र पर्यटन गतिविधियों आदि पर विस्तृत प्रकाश डाला।

केन्द्र को राजभाषा सम्मान प्रदान करते हुए

करभ पत्रिका का लोकार्पण

हिन्दी प्रकाशनों की सूची

1. राजभाषा पत्रिका करभ अंक : 14
2. वार्षिक प्रतिवेदन (2015–16) हिन्दी व अंग्रेजी में अलग–अलग
3. जनजातीय क्षेत्रों में पशुपालन–कम्पेंडियम
4. उष्ट्र दुग्ध उत्पादन, मूल्यांकन एवं प्रसंस्करण हेतु कौशल उद्यमिता नवाचार प्रशिक्षण–ट्रेनिंग मैन्युअल
5. ऊँट संबंधित उपयोगी जानकारी प्राप्त करने के माध्यम–विस्तार पत्रक
6. ऊँटों में तिबरसा/सर्रा रोगः फेलाव और नियन्त्रण–विस्तार पत्रक
7. गर्भवती ऊँटनी व उसके नवजात बच्चों की समुचित देखभाल–विस्तार पत्रक
8. नर ऊँट में प्रजनन व्यवहार (झूट/रट) एवं उसका प्रबंधन–विस्तार पत्रक
9. ऊँट को नियंत्रित करने के तरीके–विस्तार पत्रक
10. ऊँटों को दवा देने के तरीके और सावधानियां–विस्तार पत्रक
11. ब्रुसेल्लोसिस–ऊँटों व मनुष्यों में होने वाली एक महत्वपर्ण बीमारी

"हिन्दी माध्यम से इस विशाल देश के लोग एक दूसरे को समझ सकेंगे और मिलकर काम कर सकेंगे। हिन्दी को न केवल इस क्षेत्र के बीच, बल्कि सब वर्गो के बीच एक जीवित भाषा बनाना है।"
- बासप्पा दानप्पा जत्ती, पूर्व उप-राष्ट्रपति

भारत सरकार

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, बीकानेर

प्रशस्ति-पत्र

वर्ष 2016-17 के दौरान नगर में राजभाषा के उत्कृष्ट प्रयोग के लिए राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केन्द्र, बीकानेर को प्रशस्ति-पत्र प्रदान किया जाता है।

(अनिल कुमार दूबे)
अध्यक्ष नराकास एवं
मंडल रेल प्रबंधक

दिनांक – 14-06-2017

भाकृअनुप
ICAR

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch